राजस्थान पुरातन ग्रन्थमाला

राजस्थान राज्य द्वारा प्रकाशित

सामान्यत अखिल भारतीय तथा विशेषत. राजस्थानदेशीय पुरातनकालीन
संस्कृत, प्राकृत, अपभ्रंश, राजस्थानी, हिन्दी आदि भाषानिबद्ध
विविध वाङ्मयप्रकाशिनो विशिष्ट ग्रन्थावलि

प्रधान सम्पादक

पद्मश्री मुनि जिनविजय, पुरातत्त्वाचार्य

सम्मान्य सञ्चालक, राजस्थान प्राच्यविद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर;
ऑनरेरि मेम्बर ऑफ जर्मन ओरिएण्टल सोसाइटी, जर्मनी,
निवृत्त सम्मान्य नियामक (ऑनरेरि डायरेक्टर),
भारतीय विद्याभवन, बम्बई, प्रधान सम्पादक,
सिंघी जैन ग्रन्थमाला, इत्यादि।

ग्रन्थाङ्क ७५

जाचीक जीवण कृत

प्रताप-रासो

प्रकाशक

राजस्थान राज्याज्ञानुसार

सञ्चालक, राजस्थान प्राच्यविद्या प्रतिष्ठान

जोधपुर (राजस्थान)

जाचीक जीवण कृत

प्रताप-रासो

सम्पादक

डॉ० मोतीलाल गुप्त, एम०ए०, पी-एच०डी०,

हिन्दी विभाग

जोधपुर विश्वविद्यालय, जोधपुर.

प्रकाशनकर्त्ता

राजस्थान राज्याज्ञानुसार

सञ्चालक, राजस्थान प्राच्यविद्या प्रतिष्ठान

जोधपुर (राजस्थान)

विक्रमाब्द २०२१ ; प्रथमावृत्ति १०००

रतराष्ट्रीय शकाब्द १८८५

खिस्ताब्द १९६५ ; मूल्य रु० ६.७५

मुद्रक। जगदीशचन्द्र स्वर्णकार, अजन्ता प्रिण्टर्स, जोधपुर.

PRATAPA-RASO
OF
JACHIKA JIVANA

EDITED

(with a linguistic study of the text, historical and literary notes, appendices, variant readings etc)

BY

Dr. MOTILAL GUPTA, M A , Ph D.
Hindi Deptt.,
Jodhpur University, Jodhpur.

PUBLISHED

under the orders of the Government of Rajasthan

BY

The Director, Rajasthan Oriental Research Institute,
JODHPUR (RAJASTHAN).

V.S. 2021] *Price : Rs. 6.75* 1965 A.D.

विषय-सूची

संचालकीय वक्तव्य

राजस्थान-पुरातन-ग्रन्थमाला के अन्तर्गत अब तक सस्कृत, प्राकृत, अपभ्रंश, प्राचीन राजस्थानी, व्रज, हिन्दी आदि भाषाओ मे लिखित पुरातन और अप्रकाशित वैदिक, छन्द-शास्त्र, ज्योतिष, न्याय, व्याकरण, स्तुति-स्तोत्रादि, साहित्य, रसालंकार, काव्यनाटक, चम्पू, सुभाषित, कोश, रत्नपरीक्षादि, ख्यातवार्तादि, भक्ति, शोध-विवरण एव प्रबन्धादि विषयक अनेक ग्रन्थो का प्रकाशन हो चुका है। भारत मे ही नही, वरन् विदेश मे भी इस ग्रन्थमाला का समादर हुआ है और वहाँ के अनेक नियतकालिक पत्र-पत्रिकाओ मे इन ग्रन्थो की समुचित समीक्षा की गई है। ग्रन्थों के प्रकाशन मे और सम्पादन मे हमारा लक्ष्य सम्बद्ध विषयो के अधिकारी विद्वानो का सहयोग प्राप्त करने का रहा है।

ग्रन्थमाला के सम्याक ७५ के रूप मे प्रकाशित हो रहे प्रस्तुत जाचीक जीवण कृत 'प्रताप-रासो' की एक निजी प्रति प्रतिष्ठान के तत्कालीन कार्यकर्ता श्री रामानन्द सारस्वत ने हमे सन् १९५६-५७ मे दिखाई थी। भूतपूर्व अलवर राज्य के इतिहास से सम्बद्ध जान कर उसी समय हमने इसकी एक प्रतिलिपि तैयार करा ली थी और उसके सशोधन व मीलान का कार्य भी आरम्भ करा दिया था। बाद मे, जब डॉ० मोतीलालजी गुप्त का 'मत्स्य-प्रदेश की हिन्दी-साहित्य को देन' नामक प्रबन्ध छप रहा था, तो उसमे भी इस कृति का उल्लेख देखने मे आया और प्रसगोपात्त चर्चा हुई। डॉ० गुप्तजी ने इस ग्रन्थ के सम्पादन के लिए जब रुचि एव उत्सुकता दिखाई, तो हमने यह कार्य इन्ही के द्वारा सम्पन्न कराना निश्चित किया।

प्रस्तुत कृति कई प्रकार से महत्त्वपूर्ण है। राज्याश्रित कवियो की कृतियाँ, प्राय सत्य का उल्लघन करती देखी गई हैं। इतिहास की दृष्टि से उनका उतना मूल्य नही होता। परन्तु, विद्वान् सम्पादक द्वारा लिखित प्रस्तावना मे दी गई सामग्री के आधार पर स्पष्ट है कि इस पुस्तक का ऐतिहासिक मूल्य भी कम नही है। इसमे दिए गए तथ्य, घटनाएँ, तिथियाँ, व्यक्तियो के नाम आदि पूरी तरह इतिहास से मेल खाते हैं। राजस्थान के हस्तलिखित साहित्य मे ऐसी अनेक कृतियाँ हैं और हमारा अनुमान है कि यदि उनका वास्तविक रूप मे अनुशीलन

किया जाय, तो यह कार्य एक प्रामाणिक इतिहास की तैयारी मे सहायक और उपयोगी हो सकता है। सम्पादक महोदय ने पुस्तक मे वर्णित परिवारो के मूल दस्तावेजो, परवानो आदि को भी हल्दिया परिवार के उत्तराधिकारियो से प्राप्त करके उपयोग किया है। साथ ही भरतपुर, अलवर और जयपुर मे सम्बन्ध रखने वाली अप्रकाशित ऐतिहासिक सामग्री का भी अवलोकन किया है।

सम्पादकजी का ध्यान पुस्तक मे प्रयुक्त भाषा पर विशेष रूप से रहा है। एक प्रकार से प्रस्तावना का बहुत बडा अंश 'प्रताप-रासो' का भाषाविषयक अध्ययन ही है। रचनाओ का अनुशीलन भाषा के अध्ययन मे बहुत उपयोगी सिद्ध होता है। सम्पादकजी ने इस विषय को स्पष्ट करने के लिए जो प्रयास किया है, वह उनको भाषाविषयक गहरी जानकारी का परिचायक है। साथ ही, ध्वनि-तत्व तथा रूप-तत्व का भी उपयुक्त रूप से विचार किया गया है, जो प्रस्तावना मे सम्मिलित किए गए हैं।

जैसा कि ऊपर कहा गया है, प्रतिष्ठान द्वारा प्राप्त 'प्रताप-रासो' की केवल दो ही प्रतियो के आधार पर पाठ-सम्पादन का कार्य हुआ है। अनेक पाद-टिप्पणियाँ इस बात का प्रमाण हैं कि कार्य काफी परिश्रम से किया गया है। यदि कुछ अधिक प्रतियाँ प्राप्त हो जाती, तो जो पाठ सदिग्ध-सा मालूम होता है और अर्थ-ग्रहण मे भी कठिनाई उपस्थित होती है, वह न होती। पुस्तक की प्रामाणिकता को सुरक्षित रखने के अभिप्राय से कल्पना के आधार पर पाठ प्रस्तुत करने की चेष्टा नहीं की गई है। 'प्रताप-रासो' के साथ 'लछिमनगढ-रासो' भी दे दिया गया है यह एक सम्बन्धित कृति है और घटनाओ के मीलान की दृष्टि से उपयोगी है।

सब मिलाकर यह पुस्तक भाषा और इतिहास-सम्बन्धी उपयोगी जानकारी देने वाली है। सम्पादन मे अपने सत्प्रयास के लिए सम्पादक महोदय धन्यवादार्ह है। हमे आशा है कि पुरातन-ग्रन्थमाला के पाठको को इस कृति से कुछ विशिष्ट सामग्री प्राप्त हो सकेगी।

विजयादशमी,　　　　—मुनि जिनविजय

सवत् २०२१.



चरित्र नायक महाराव प्रतापसिंहजी

(वि० संवत् १८१३-१८४७)

(राजस्थान राजकीय संग्रहालय, अलवर से प्राप्त एक प्राचीन चित्र)

सम्पादकीय प्रस्तावना

अब से लगभग आठ वर्ष पूर्व मैंने मत्स्य प्रदेश[1] (अलवर, भरतपुर, धौलपुर तथा करौली की भूतपूर्व रियासतो[2]) के हस्तलिखित ग्रन्थो का अनुशीलन किया था। मेरे शोध का विषय था 'मत्स्य प्रदेश की हिन्दी साहित्य को देन'[3]—इसी प्रसग मे इस प्रदेश के साहित्य का अनुसधान आवश्यक था। इस प्रदेश का प्रकाशित साहित्य वहुत सीमित है, किन्तु कृतियो के जो हस्तलिखित रूप उपलब्ध होते हैं, वे वास्तव मे मूल्यवान हैं।[4,5,6] इस प्रदेश की साहित्यकता यथेष्ट रूप मे जागृत रही और राजाओ द्वारा भी कवियो तथा लिपिकारो को समुचित सम्मान प्रदान किया गया।[7,8] प्राप्य हस्तलिखित पुस्तको मे से दो महत्त्वपूर्ण वीर-काव्य उपलब्ध हुए, जिनमे से एक से हिन्दी ससार परिचित है। इस काव्य का नाम है "सुजान चरित्र", जो प्रकाशित हो चुका है, और जिसमे भरतपुर के राजा सूरजमल के शौर्य, पराक्रम तथा साहसिक कार्यो का काव्यमय विवरण है।[9,10] यह ग्रन्थ प्रकाशित अवश्य हो चुका है, किन्तु इस ओर अभी तक विद्वानो का ध्यान आकर्षित नही हुआ है और इस ग्रन्थ-रत्न का विधिवत् अध्ययन किसी जिज्ञासु की अपेक्षा करता

---

१. मत्स्य प्रदेश का विश्लेषणात्मक अध्ययन, देखें मेरी पुस्तक—"मत्स्य प्रदेश की हिन्दी साहित्य को देन" (प्रकाशित राजस्थान प्राच्य-विद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर)।

२ स्वतन्त्रता प्राप्ति के उपरान्त इन चारो रियासतो का एक सघ बना, जो कालान्तर मे वृहद् राजस्थान मे विलीन हो गया।

३ राजस्थान विश्वविद्यालय से सन् १९५५ मे पी० एच० डी० के लिए स्वीकृत।

४. इस प्रसंग मे देखें मेरा लेख—"राजस्थान के पूर्वी अंचल की काव्य-साधना" (प्रकाशित, सृजन-वेला)।

५. अलवर की "अरावली" पत्रिका का विशेषांक—"अलवर राज्य की काव्य-साधना"।

६ भरतपुर-राज्य से प्रकाशित "व्रजपत्र" की कतिपय प्रतियों के अंतर्गत "भरतपुर के कवियों का विवरण"।

७ देखें—महेशचन्द्र कृत "जय विनोद"।

८. हिन्दी साहित्य समिति, भरतपुर द्वारा प्रकाशित—"भरतपुर-कवि-कुसुमाजलि"।

९ दुर्भाग्य से यह ग्रंथ अधूरा ही है।

१० "सुजान सवत्" (उदयराम कृत) पूर्ण ग्रन्थ है।

है।[१] अलवर राज्य के संस्थापक रावराजा प्रतापसिंह[२] के शौर्य का वर्णन जाचीक जीवरण[३] नाम के एक कवि ने प्रतापरासो मे किया है। इस पुस्तक का प्रथम दर्शन मुझे अलवर म्यूजियम'[४] मे हुआ। मै इस पुस्तक से बहुत प्रभावित हुआ था और तब भी मैंने इस पुस्तक को इतना ही महत्त्वपूर्ण माना था, जितना सुजान-चरित्र को। काव्य की दृष्टि से 'प्रताप रासो' 'सुजान चरित्र' मे हलका पड सकता है, किन्तु ऐतिहासिक तथ्यो के विचार से यह ग्रन्थ किसी भी प्रकार से कम तथ्यपूर्ण नही। मत्स्य प्रदेश से सबधित अपने कई लेखो मे मैंने इस ग्रन्थ का प्रासंगिक विवरण अवश्य दिया, किन्तु कोई अच्छी टिप्पणी नही लिखी।

इधर जोधपुर आने पर मेरा सपर्क राजस्थान प्राच्य-विद्या-प्रतिष्ठान से स्थापित हुआ, जो वहाँ के अधिकारियो की कृपा से निरन्तर घनिष्ठ होता चला गया। इस ओर मेरी रुचि देख कर इस ग्रन्थ के सपादन का कार्य मुझे दिया गया। यह कार्य स्वीकार करते समय मुझे बहुत प्रसन्नता हुई। प्रथम तो मैं इस ग्रन्थ को देखकर पहले ही प्रभावित हो चुका था, दूसरे इसकी भाषा से मेरा व्यावहारिक परिचय है—साथ ही इसकी विषय-वस्तु को मैं कई रूपो मे देख चुका हूँ।[५] भरतपुर, अलवर और जयपुर तीनो राज्यो को अपने अचल मे समेटे हुए, यह काव्य उस परिवार का भी उल्लेख करता है, जिसका अध्ययन मैंने कुछ विस्तार के साथ किया है।[६]

पुस्तक को लेते समय मैंने सबधित अधिकारियो को बताया था कि मै इस पुस्तक को भाषा-विश्लेषण की दृष्टि से देखना चाहता हूँ।[७] साहित्यिक अथवा

१. कुछ ही दिन पहले देहली विश्वविद्यालय के एक शोध-छात्र का पत्र मिला था, जिससे विदित होता है कि इस ओर कुछ प्रयत्न किया जा रहा है।

२ प्रतापसिंहजी का समय सन् १७५६ से १७९० ई० है।

३ जाचिक जीवरण, जाचिग जीवरण, जाचिक जीवन कई प्रकार से नाम लिखा मिलता है। 'जाचीक' का सम्बन्ध सभवत याचक शब्द से हो और ये काव्यकार 'राणा ढोलिया' रहे हो।

४. अब हस्तलिखित ग्रंथो का विभाग राजस्थान प्राच्यविद्या प्रतिष्ठान के अतर्गत है।

५ प्रतापरासो का सम्बन्ध तीन राज्यो से है (१) जयपुर, (२) अलवर तथा (३) भरतपुर। इसका सम्बन्ध अलवर-जयपुर के हल्दिया वश से है जिस पर मैंने कुछ शोधपूर्ण सामग्री एकत्र की है। हल्दिया वंश खडेलवाल वैश्यों के अन्तर्गत है—देखें मेरी पुस्तक "खडेलवाल वैश्य-जाति का इतिहास" (खडेलवाल जाग्रति पत्रिका मे अंशत प्रकाशित), "खडेलवाल जाति की उत्पत्ति"— इसी पत्रिका मे एक स्वतन्त्र लेख।

६. अधिक जानकारी के लिए जयपुर के ताजीमी सरदार 'राव बहादुर नृसिंहदासजी हल्दिया' से सपर्क-साधन उपयोगी हो सकता है।

७ इस पद्धति की मूल प्रेरणा मुझे एडिनबरा के श्री हैलीडे से मिली।

ऐतिहासिक दृष्टिकोण के साथ-साथ भाषा-विषयक दृष्टिकोण भी बहुत आवश्यक है और आजकल इस प्रकार के मूल्यवान अध्ययन प्रस्तुत किये जा रहे है।[1] विदेशी विद्वानो द्वारा हर प्रकार के विस्तृत विवरणात्मक ग्रन्थ लिखे जा रहे हैं, जिनमे भाषा-विज्ञान के कुछ सिद्धातो का विधिवत् प्रतिपादन किया जाता है।[2] अपनी सीमाओ के कारण मैं तो इस कृति पर व्याकरणात्मक दृष्टि से ही कुछ विचार कर सकूंगा, किन्तु मेरा दृष्टिकोण व्याकरण का विवरणात्मक पक्ष होगा। इसका अभिप्राय 'प्रताप-रासो' की भाषा का एक सक्षिप्त विवरण देना होगा, जिससे उस समय, उस स्थान पर काव्य मे प्रयुक्त भाषा का सामान्य परिचय भी मिल सकेगा।

भाषा-विषयक विश्लेषण मात्र, सभवत , सामान्य पाठक को रुचिकर नही होता, अतएव मैने इस विश्लेषण के साथ ऐतिहासिक बातो का भी उल्लेख कर दिया है। मैं इस पुस्तक की ऐतिहासिकता को भी बहुत प्रामाणिक मानता हूँ। इसमें वर्णित घटनाये, व्यक्ति, वस्तु, विवरण, सवत् सभी इतिहास द्वारा प्रमाणित हो चुके हैं और इस दृष्टि से यह कृति बहुत मूल्यवान है।[3] राजस्थान की अनेक कृतियो के बारे मे यह धारणा रही है कि इनमें दिए गए प्रसग और वर्णन इतिहास-सम्मत नही हैं।[4] ये दोनो ग्रन्थ—"सुजान-चरित्र" और "प्रताप रासो" इस सामान्य धारणा के अपवाद हैं।[5] जैसा कि निवेदन किया जा चुका है—'प्रतापरासो' से अभी तक विद्वत्समाज परिचित नही है, अन्यथा इसका

१ देखें, हैलीडे का लिखा 'सीकरेट हिस्ट्री ऑव दि मगोल्स—भाषा विज्ञान के सुप्रसिद्ध विद्वान (अब स्वर्गीय) श्री फर्थ की देखरेख मे प्रस्तुत तथा लदन की भाषा-विज्ञान सभा द्वारा प्रकाशित।

२. उदाहरण के लिए 'स्कूल ऑव ओरियंटल एण्ड अफ्रीकन स्टडीज' के प्रोफेसर फर्थ का 'लदन स्कूल ऑव लिग्विस्टिक्स' —जिसके वर्त्तमान विद्वान एलन, रोबिन्स, ह्विटली, शार्प आदि हैं।

३ संबधित राज्यों के उपलब्ध इतिहास, ऐतिहासिक काव्य, लेख, परवाने आदि से मिलान कर लेने के उपरान्त ये पक्तियां लिखी जा रही हैं।

४. उदाहरणार्थ वीरगाथा काल का सपूर्ण काव्य अति सदिग्ध और अप्रामाणिक समझा जाता है।

५. देखें, 'हिन्दी साहित्य का इतिहास पर प्रभाव'—शुकदेव विहारी मिश्र (पटना यूनि० भाषणमाला) इस पुस्तक का उद्धरण इस प्रकार है—"सूदन का वर्णन सन् १७४५-१७५३ का है वडा सजीव। इनका साहित्य बुरा नहीं है, परन्तु ग्रन्थ का ऐतिहासिक मूल्य बहुत वढिया है, क्योंकि कवि ने उस काल का सजीव चित्र सामने उपस्थित किया है। सन् १७३९ में नादिरशाह ने दिल्ली पर अधिकार करके लूट एवं कत्लेआम किया था। वादशाह दिल्ली का बल १७१७ से ही मृत प्रायः था और नादिरशाही आक्रमण से और

[अगले पृष्ठ पर]

ऐतिहासिकता भी 'सुजान चरित्र' के साथ उसो श्रद्धा और प्रामाणिकता से प्रतिपादित होती। प्रतापरासो की ऐतिहासिकता निर्विवाद है और किसी भी दृष्टि से पक्षपात का दर्शन नही होता। उपयुक्त प्रशसा, भर्त्सना आदि स्थान-स्थान पर मिलते है। इस पुस्तक मे अनेक पुरुषो के साहसिक कार्यो का वर्णन है। जैसे—

१ जयपुर नरेश (१) माधवसिंह, (२) पृथ्वीसिंह, (३) प्रतापसिंह
२ भरतपुर नरेश (१) सूरजमल, (२) जवाहरसिंह।
३ अलवर नरेश (१) प्रतापसिंह, (२) बख्तावरसिंहजी के युवराज काल का किंचित् प्रसग।
४ मुगल सेनापति (१) नजफखा, (२) कायमखा, (३) अहमदानी।
५ पटेल सिंधिया
६. हल्दिया बन्धु : (१) खुशालीराम, (२) दौलतराम, (३) नदराम।

किसी भी व्यक्ति के प्रति कवि का पक्षपात दृष्टिगत नही होता। कवि को जितना उत्साह अलवर की वीर-गाथाओ के उल्लेख मे होता है,[1] उतना ही किसी अन्य वीर के साहसिक कार्यो मे[2] भी। यह एक ऐसा गुण है, जिसका कवियो मे तो प्राय' अभाव ही रहता है और विशेषकर उन कवियो मे, जिन्हे राज्याश्रय प्राप्त होता है।[3] जाचीक जीवण ने अलवर के वीरो को भी आवश्यकता से अधिक महत्त्व

भी ध्वस्त हो गया। पलासी का युद्ध १७५७ में हुआ और पानीपत का तीसरा युद्ध १७६१ में। अतएव उस काल तक अंग्रेजों की शक्ति नहीं चढ़ी थी और न महाराष्ट्रो की घटी थी। ऐसे समय का सजीव चित्र उपस्थित करने मे सूदन कवि धन्यवादार्थ हैं। सूदन तथा ऐसे अन्य कवियों ने हिन्दू शूरवीरो का सजीव वर्णन करके उस काल के हिन्दू समाज की सामरिक शक्ति एवं उत्साह का वर्णन किया। इस प्रकार भारतीय इतिहास के एक अग का इन लोगो ने न केवल चित्र खींचा, वरन् हिन्दू शक्ति के अग्रक उत्साहवर्द्धन द्वारा इतिहास पर भी भारी प्रभाव डाला।"

१ विशेष कर प्रतापसिंहजी के साहसिक कार्यों मे। पुस्तक के नायक भी प्रतापसिंह ही है।

२ उदाहरण के लिए जयपुर-नरेश माधोसिंह, भरतपुर-नरेश सूरजमल, हल्दिया बंधु आदि के नाम लिए जा सकते हैं।

३ जाचीक जीवण निश्चित रूप से एक आश्रित कवि था। उसने राज्याज्ञा प्राप्त करने पर ही इस ग्रन्थ की रचना की थी। ग्रन्थ के आरंभ मे कवि ने स्पष्ट लिखा है :

तास (प्रतापसिंह) तात के बंधु कवर मंगल व्रत धारिय।
जिन दिनो बल हुकम कहो कवि ग्रन्थ उचारिय॥

परन्तु कवि ने अपनी तथ्य-कथन-बुद्धि को राज्याश्रय के बदले बेचा नहीं।

नही दिया। स्वय मगलसिंहजी का भी सयत रूप मे ही चित्रण किया गया है। मगलसिंहजी इस ग्रथ का निर्माण कराने वाले थे।

इस स्थान पर मैं एक बात और कहना चाहता हूँ। खडेलवाल वैश्यो मे 'हल्दिया' नाम का एक गोत्र होता है। आज भी इस गोत्र के परिवार अलवर तथा जयपुर मे निवास करते हैं। प्रतापरासो मे इसी परिवार के तीन भाई[1]—खुशालीराम[2], नदराम और दौलतराम पर बहुत बल दिया गया है। इन्हे मुगलकाल के 'किंग मेकर्स' तो नही कहा जा सकता, किन्तु यह अवश्य है कि जयपुर तथा अलवर दोनो राज्यो मे इनकी धाक थी। भरतपुर का जाट राजा भी इन्हे बहुत मानता था[3] तथा दिल्ली का सम्राट भी इनकी वीरता से प्रभावित था और उसने कई बार इस बात की चेष्टा की कि इन भाइयो का शौर्य उसे प्राप्त हो जाय।[4] 'प्रतापरासो' का बहुत बड़ा भाग इन हल्दिया बन्धुओ की गाथा है। उसे इनकी वीर गाथा तो नही कहा जा सकता, क्योकि कभी ये जयपुर के साथ होते, कभी अलवर के साथ और कभी नजफखाँ के साथ बादशाही दल मे। इतना सब-कुछ होने पर भी सब-कोई इन्हे अपने पक्ष मे करना चाहते थे। कही-कही तो ऐसा मालूम होता है—राज्यो के पारस्परिक सबध भी इन्ही के आधार पर स्थापित होते थे।[5] न जाने इन 'तीन भाइयो' मे कौनसी शक्ति थी कि प्रत्येक शासक इन्हे अपनी ओर रखना चाहता था। वैसे वर्ण से तो ये लोग वैश्य थे, किन्तु किसी भी क्षत्रिय अथवा राजपूत के गुणो से समलकृत ये तीनो भाई राज्यो को बनाना-बिगडाना अपने बाएँ हाथ का खेल समझते थे। कई बार तो मेरा विचार हुआ कि पुस्तक का नाम "प्रतापरासो" न रह कर 'हल्दिया-(बधु) रासो'

---

१ छाजूराम हल्दिया के पुत्र।

२ ये खुशालीराम बोहरे से अलग हैं। खुशालीराम बोहरा ब्राह्मण थे इस पुस्तक के खुशालीराम खंडेलवाल वैश्य हैं।

३. प्रतापसिंहजी के भरतपुर राज्य मे पहुँचने पर हल्दिया मत्री पर ही विश्वास करके भरतपुर-नरेश ने पूछा :

"मंत्री बुलाय महाराज कैं, यौं पूछी ब्रजराज।
उमराव राव आमेरि कैं, भेजे हैं किह काज॥"

४. छल-बल करके बादशाह ने हल्दिया बधु को अपनी तरफ कर भी लिया था, और बादशाही सेना के साथ इन लोगो ने कई स्थानों पर अपनी वीरता दिखाई। वर्णन अन्यत्र देखें।

५ एक बार तो केवल इन लोगो के कारण ही अलवर तथा जयपुर मे घमासान युद्ध हुआ।

होता, तो विषय के अधिक निकट होता। इन बंधुओं के बारे में कई स्थानों पर सामग्री उपलब्ध हुई, जिनमें इनके ही वंशजों द्वारा प्रकाशित लेख[1] आदि अधिक मूल्यवान माने जाने चाहिएँ।[2] यह सम्पूर्ण प्रकाशित सामग्री उन लेखों, परवानों तथा पट्टों के आधार पर है, जो इनके वंशजों के अधिकार में आज भी हैं। अनेक वर्षों पूर्व जयपुर के ताजीमी सरदार रावबहादुर नरसिंहदासजी हल्दिया ने अपने पूर्वजों में से कुछ पर स्वतंत्र लेख[3] प्रकाशित कराये थे और उनका कहना है कि उनके पास संबंधित सामग्री प्रचुर मात्रा में उपलब्ध है। उनका तो यह भी कहना है कि इस सामग्री के आधार पर जयपुर तथा अलवर का विश्वसनीय इतिहास प्रस्तुत किया जा सकता है। मैं इस सामग्री को प्राप्त करने की चेष्टा कर रहा हूँ और यदि यह सामग्री वास्तव में इतनी महत्त्वपूर्ण हुई, जितना इसके वर्त्तमान अधिकारी इसे बताते हैं, तो इस विषय में रुचि रखने वाले पाठकों के सम्मुख उपस्थित करते हुए मुझे प्रसन्नता होगी।

'प्रताप-रासो' के अध्ययन का आधार

'प्रतापरासो' का अध्ययन करने में मुझे इसकी दो प्रतियों से सहायता मिली—

(१) अलवर म्यूज़ियम की प्रति—जिसका उल्लेख पहले किया जा चुका है और जो मूल रूप में मेरे सामने अब भी उपस्थित है। इस हस्तलिखित प्रति का विस्तृत विवरण अन्यत्र देखें।

(२) श्री रामानन्दजी की प्रति—जिससे नकल कराई गई प्रति मेरे सामने है। मूल प्रति, कुछ विचित्र कारणों से, नहीं मिल सकी, किन्तु इसकी हूबहू नकल उपलब्ध है। पुस्तक की नकल करते समय पाठ की वास्तविकता की पूर्ण रक्षा

---

१. कमच्छा, बनारस निवासी एक विद्वान् श्री दामोदरदासजी खंडेलवाल ने हल्दिया वंश की काफी छान-बीन की। उनके द्वारा प्रस्तुत युद्ध-विषयक कुछ नोट मेरे पास हैं, जिनके आधार पर इन पंक्तियों के लेखक ने एक लेख भी प्रकाशित कराया है। उन युद्धों की तालिका श्री दामोदरदासजी के अनुसंधान के आधार पर प्रस्तुत हो चुकी है।

२. नीचे लिखे पत्रों में इनके कुछ लेख प्रकाशित हुए हैं :—(१) खंडेलवाल हितैषी। (२) खंडेलवाल। (३) खंडेलवाल पत्रिका आदि। एक लेख खंडेलवाल जाग्रति के परिचयांक में भी छापा गया है।—"हल्दिया वंश"। मुनि कान्तिसागरजी के पास भी कुछ प्रामाणिक सामग्री मैंने देखी थी।

३ प्रमुख रूप से दो (१) राव बहादुर नृसिंहदासजी हल्दिया, जयपुर, तथा (२) राव श्री नारायणजी हल्दिया, अलवर।

की गई है और इस विषय के अधिकारी विद्वानो की देखरेख तथा विधिवत् मिलान किए जाने के कारण इस प्रतिलिपि को मैं मूल जैसा ही मानता हूँ।

प्रतिलिपियो के देखने पर स्पष्ट है कि—

(अ) नकल बहुत सावधानी से की गई है।

(आ) दोनो प्रतियाँ (अलवर म्यूजियम वाली तथा श्री रामानन्दजी वाली) किसी एक ही मूल प्रति की नकले हैं।

(इ) पाठ-भेद बहुत कम हैं।

(ई) दोनो प्रतियो के नकल होने मे केवल तीन वर्ष का अतर है।[1]

प्रतापरासो का वस्तु-विषय

जैसा कि पुस्तक के नाम से स्पष्ट है, इसका सम्बन्ध अलवर राज्य के सस्थापक रावराजा प्रतापसिहजी से है और इस 'रासो' मे प्रतापसिहजी सम्बन्धी जन्म[2] से मरण पर्यन्त[3] घटनाओ का वर्णन है। 'रासो' के नामानुकूल इस पुस्तक मे उन्ही घटनाओ को स्थान दिया गया है, जिन्हे प्रतापसिहजी के साहसिक कार्यो मे सम्मिलित किया जा सकता है। इस काव्य को हम महाकाव्य की सज्ञा तो नही दे सकते, क्योकि इसका रूप, आकार, प्रकार, विवरण, वातावरण, चरित्र-चित्रण आदि कोई भी इस प्रकार का गौरव प्रदान करने मे सहायता देते प्रतीत नही होते। साथ ही इसे हम खण्ड-काव्य भी नही कह सकते, क्योकि इसमे नायक के जीवन का कोई एक प्रसग ही नही है, वरन् उसके जीवन की प्राय सभी प्रमुख घटनाओ का उल्लेख है—उस समय के राजाओ की प्रमुख जीवन घटनाएँ पारस्परिक विग्रह-सघर्ष के अतिरिक्त और हो भी क्या सकती थी ? इन बातो को

---

१ अलवर म्यूजियम वाली प्रति—

'इति प्रतापरासो जाचीक जीवण कृत नमो प्रभाव पूर्णम् मीति फुस वदी ६ संवत् १९०४।"

रामानन्द वाली प्रति –

"इति प्रतापरासो जाचिक जीवण कृत नवमो प्रभाव संपूर्णं। सवत् १९०७ आषाढे शुक्ला ६ बुधवासरे लिषितं मिश्र गिरधारी लिषायत राणोजी श्री मरभूटजी आत्म भतीज चिरजीव वकसराम पठनार्थं ॥ शुभम् भवतु ॥ श्रीरस्तु ॥ श्रीजी ॥

२. (अ) ज दिन न्याय नोवति वजी, उपजे पातिलराव।
कौन मित्र सुषकंद है, दीन सत्रु सिरदाव ॥

(आ) उपजे मोवर्तसिंह सुत, तप पूरण परताप ॥ (प्रथमो प्रभाव)

३. रावराज यौं वचन कहि, धरौ चरन निज ध्यान।
पहर प्रात वैकुठ घर, पातिल कियो पयांन ॥ (नवमो प्रभाव)

देखते हुए यदि इस ग्रन्थ को हम सामान्य प्रबन्ध कहे, तो उत्तम रहेगा। घटनाएँ निश्चित रूप से क्रमवद्ध है, कार्य-क्रम ठीक चलता है, साथ ही पुस्तक के नायक का प्रसग भी आरम्भ से अन्त तक विद्यमान रहता है।

रस की दृष्टि से इस काव्य को वीर-रस-प्रधान कहना ही उपयुक्त होगा। इसके नाम की सार्थकता को स्वीकार करते हुए इसे 'वीर काव्य' कहा जा सकता है। यह ठीक है कि इस काव्य का समय हिदी का प्रारम्भिक 'वीर गाथा-काल' नही, जिसमे कुछ प्रख्यात 'रासो' नाम से अभिहित ग्रन्थो की रचना हुई।[1] 'प्रतापरासो' का सामान्य वातावरण लगभग उसी प्रकार का है, जैसा इस नाम के अन्य ग्रन्थो का। एक बात और। वीर गाथा काल की सामान्य प्रवृत्तियो का सूक्ष्म परिचय कराते समय लगभग ३० वर्ष पूर्व[2] डॉ० धीरेन्द्र वर्मा ने कहा था—'इस काल की रचनाओ को 'वीर'-प्रधान न कह कर 'शृगार'-प्रधान कहना अधिक उपयुक्त होगा', क्योकि राजाओ की व्यक्तिगत वीरता का प्रदर्शन तथा उनकी सेनाओ द्वारा प्राप्त विजय किसी और उद्देश्य को न लेकर, महल मे सुन्दरियो की सख्या वढाने हेतु होती थी। युद्ध का आरभ राज-कन्या प्राप्ति के लिए, और समाप्ति विवाह के साथ होती थी। 'प्रताप रासो' इस प्रकार का काव्य नही है। अलवर के प्रतापसिहजी[3] के विवाह का प्रसग तो आता ही नही। हॉ, आमेर-पति प्रतापसिहजी के विवाह का किंचित वर्णन अवश्य है। परन्तु यह विवाह भी किसी युद्ध के परिणाम-स्वरूप सम्पन्न नही हुआ। वीकानेर के राजा ने स्वेच्छा से प्रसन्न होकर वैवाहिक सबध स्थापित किया—

---

१ हिन्दी साहित्य के इतिहासों मे हिन्दी के प्रारम्भिक काल को 'वीर-गाथा काल' भी कहा गया है। इस काल का समय सवत् १०५० से सवत् १३७५ माना जाता है। वीर गाथा काल मे अनेक 'रासो' ग्रन्थो की रचनाएँ हुई, जैसे—

(१) पृथ्वीराज रासो, (२) वीसलदेव रासो, (३) विजयपाल रासो, (४) खुमान रासो और (५) हमीर रासो।

किन्तु ये रासो ग्रन्थ प्राय प्रक्षिप्त अंशो से परिपूर्ण व अनैतिहासिक वातो से युक्त हैं और इसी कारण इनमे से लगभग सभी वहुत पीछे की रचना माने जाते हैं। 'रासो' नामक इन ग्रन्थो का रचना काल अभी तक विवादग्रस्त है।

२ जब लेखक प्रयाग विश्वविद्यालय मे वी० ए० कक्षा का विद्यार्थी था और डॉ० धीरेन्द्र वर्मा ने यह विषय कक्षा मे पढ़ाया था।

३ जैसा अन्यत्र सकेत किया जा चुका है—इस समय अलवर तथा आमेर दोनो राज्यों के अधिपतियों का नाम 'प्रतापसिंह' ही था। काव्यकर्त्ताने 'राव' और 'राजा' विशेषण लगाकर इस भ्रमोत्पादक स्थिति को दूर रखने की काफी चेष्टा की है, किन्तु कहीं कहीं गड़बड़ी हो ही गई है।

दोहा : यों सुनि बीकानेर नृप, गजै आप उर धारि।
पीथल[1] है आमैरिपति, दीजै ताहि कंवारि॥

चौपाई : कनक काम गज बाजि सजाये। नेगी दे नालेर पठाये॥
प्रोहित चालि पयानो कीनो। नृप पीथल सिर टीको दीनो॥

दोहा : ले टीको पीथल नृपति, कीनौ चलन समाज।
व्याहन बीकानेर घर, आमावति के राज॥ आदि

इस वैवाहिक प्रसग मे शौर्य-प्रदर्शन का उद्देश्य चाहे जो भी रहा हो[2], किन्तु शारीरिक बल-प्रदर्शन, शस्त्र-सचालन, सेना-आयोजन और युद्ध-कला के दर्शन स्थान-स्थान पर होते है। उस समय का वातावरण और देश की स्थिति ही इस प्रकार की थी कि व्यक्तिगत हितो के लिए ही युद्ध आदि होते थे। राष्ट्रीयता का अभाव था और किसी अति महान् उद्देश्य को लेकर कोई एक राजा अथवा अनेक राजा मिलकर अपनी वीरता, प्राय , नही दिखाते थे। अपने राज्य की रक्षा, उसके विस्तार, शत्रु का बल-क्षय करना आदि ही उनके उद्देश्य होते थे।

सक्षेप में इस पुस्तक का कथानक प्रतापसिंहजी की जीवन-गाथा है। जन्म-काल से लेकर मरण-पर्यंत सपूर्ण जीवन का चित्र उपस्थित करने की चेष्टा की गई है। प्रथम प्रभाव के तीसरे ही छद मे (प्रथम दो छदो मे गणपति आदि की स्तुति[3] करने के उपरान्त) नायक के जन्म का उल्लेख है—"जे दिन न्याय नोवति बजी, उपजे पातिलराव", और अतिम, नवे, प्रभाव के अत मे नायक का बैकुठ-प्रयाण बताया गया है—"पहर प्रात बैकुठ घर, पातिल कियो पयान।"

---

१. आमेरपति प्रतापसिंह को 'पीथल', तथा अलवर के राव प्रतापसिंह को 'पातिल' कई स्थानों पर कहा गया है।

२ कभी कभी छोटे व्यक्तिगत मामलो पर युद्ध हुए—जैसे हल्दिया बधुओं की मुक्ति हेतु। इसीलिए कुछ लोग इस शौर्य प्रदर्शन के उद्देश्य को अधिक श्लाघ्य नहीं मानते।

३. प्रथम छद दोहा
गवरि पुत्र गणराज कै, प्रथमहि लगु पाय।
देवी दीनदयाल गुरु, सुम अक्षर समझाय॥

द्वितीय छंद छप्पय
जय जय गणपति देव देव सेवत सुभकारिय।
नमो शक्ति नारायण परम गुरु चरण प्रछालिय।
अगम अलेष अपार कौण पावत पार नर।
अति मति मो अनुसार बुधि तम करण विमलवर॥
कर जोर जुगल विनती करौं त्यो निवार आग्या लहौं।
निगम सुगम हौं नृपति के कथि प्रतापरासो कहौं॥

सपूर्ण पुस्तक मे नौ प्रभाव है, जिनका सक्षिप्त विवरण इस प्रकार है—

प्रथम प्रभाव : गणेशजी को नमस्कार करके—'गवरि पुत्र गणराज कै, प्रथमहि लगु पाय'—ग्रथ का प्रारम्भ किया गया है। कवि ने पुस्तक का नाम इस प्रकार दिया है—

'निगम सुगम हो नृपति के कथि 'प्रतापरासौ' कहौं ॥२॥'

पुस्तक लिखने की प्रेरणा कुवर मगलसिह[1] ने दी थी—

'तास तात के बंधु, कवर मंगल व्रतधारिय।
जिन दीनो वल हुकम, कहो कवि ग्रंथ उचारिय॥

रचना-काल और कवि का नाम इस प्रकार हैं—

'अठारंसै संतीस (सं. १८३७) साष संवत सो व्हैयत।
पोस मास वदि तीज वार विसपत गुरु कहियत॥

पौष कृष्णा ३, वृहस्पतिवार, सवत् १८३७

चौपई छंद दोहा छपै[2] कथि जाचिग जीवन[3] नाम है।
जुगम जोय वरनन करूं जो कूरम कुल ठाम है॥

इसके उपरान्त कवि ने यहाँ के आदि पुरुष का वर्णन किया है—

आदि अजुध्या धाम है, रामचन्द्र अवतार।
लंकापति रावण हन्यो, लई न छिनक अवार॥

कवि का मन 'सीता-वनवास' मे अधिक रमा है और लव-कुश की कथा कुछ विस्तार के साथ कही हैं। इसका एक कारण यह हो सकता है कि कछवाहा—कुशवाहा-

---

१. मगलसिहजी की वीरता का वर्णन कई स्थानो पर आया है। जहाँ भी युद्ध की भीषणता दृष्टिगत होती है, मंगलसिहजी की वीरता सफलता-प्राप्ति मे सहायक प्रतीत होती है। मगलसिहजी, प्रतापसिहजी के 'काका' थे। इसका उल्लेख इस पुस्तक मे कई स्थानों पर हुआ है—

(अ) "तास तात के वधु (उसके पिता के भाई, अर्थात् काका) कवर मंगल व्रत-धारिय।" – (प्रथम प्रभाव)

(आ) "दगल दल मंगल लरे काका कन्ह प्रवान।"—(षष्टमो प्रभाव)
वास्तव मे मगलसिह वड़े वीर, नीतिज्ञ और अपनी आन-वान रखने वाले व्यक्ति थे। उन्हें 'काका कन्ह' कहना सर्वथा उचित है। जैसे पृथ्वीराज के काका कन्ह की वीरता इतिहास प्रसिद्ध है, उसी प्रकार मंगलसिह की वीरता, प्रताप के प्रति स्नेह और स्वामि-भक्ति तथा उनकी साहित्य-प्रियता भी उल्लेखनीय है।

२ चौपाई, दोहा, छप्पय का आधिक्य भी है।

३ जाचिग जीवन, जाचीक जीवण, जाचिक जीवण, जाचिग जीवण, आदि कई प्रकार से नाम मिलता है—'जाचीक जीवण' अधिक उपयुक्त प्रतीत होता है। अलवर वाली प्रति के अन्त में भी यही नाम दिया गया है।

का सबध 'कुग' नाम से अधिक है।[1] कूर्मकुल की एक शाखा काश्मीर मे राज करती रही। काश्मीर कुश का ही बसाया हुआ कहा गया है—

'कुस बसाय कसमीर ....'

लव कुश के वर्णनोपरान्त कवि शीघ्र ही कूर्मकुल (कछवाहा कुल) पर आ गए है—'सिवर न्रप,' 'नल,' 'ईसैंसिंह' (ईशेसिंह) का वर्णन करते हुए काकिलजी का उल्लेख होता है।[1] इनके उपरान्त कालक्रमानुसार हणू(त)जी, जान्हड देव (जाणि जन) और पजवनजी के नाम आते है। फिर मलेसी, वीजलराव (देव), राजदेव और कील्हण दे (व) के नामो का उल्लेख है। कील्हणदेवजी के पश्चात् कूतिल (कुन्तलजी) उनके पुत्र जोनसी (जोणसीजी), और तव उदयकरणजी का नाम आता है।[2] उदयकरणजी वि० स० १४२३ मे आमेर की गद्दी पर बैठे। इनके आठ पुत्र[3] कहे जाते है, किन्तु हमारे कविजी ने चार पुत्रो की ही बात कही है—

(अ) **उदैकरण तिनके भये, पुत्र चत्र परवेस॥**

(आ) **सुत चतर भये नृपराज के ठाम नाम गुन वरनिये।**

सभव है ये चार—(१) नरसिंह, (२) वरसिह, (३) वालोजी तथा (४) शिवब्रह्मजी

---

१. अलवर राज्य के इतिहास तथा अनुसधान अधिकारी ठाकुर वीरसिंहजी तंवर ने जो कछवाहो का सक्षिप्त इतिहास लिखा है, उसके आधार पर ईशेसिंहजी की वश-क्रम-संख्या २२९ है और काकिलजी की २३२। इस पुस्तक मे कछवाहो की वंशावली श्रीनारायण से आरम्भ की गई है। राम ६८ सख्या पर हैं और कुश ६९ पर। राम के ज्येष्ठ पुत्र कुश से कछवाहो का सबंधित होना स्वीकार किया गया है और उस आधार पर ही कुशवाहा—कछवाहा शब्द सिद्ध किए गए हैं। कुछ लोग 'कछवाहा' को 'कूर्मकुल' से उद्भूत वताते हैं। उनका कहना इस प्रकार है—'इस वंश के २२५ वें राजा सुमित्र नि.सतान स्वर्ग सिधारे। उनके लघु भ्राता कूरम के वंशज होने से कूर्म, कूर्मा और कूर्म के सुपुत्र कच्छवजी की औलाद होने से कछवाहा।'

२ तंवरजी के अनुसार भी नामावलि का यही क्रम है—२२९ ईशेसिह, २३० सोढदेव, २३१ दूल्हेराय, २३२ काकिलजी, २३३ हणूजी, २३४ जान्हडदेव, २३५ पजवनजी, २३६ मलेसीजी, २३७ बीजलदेव, २३८ राजदेव, २३९ कील्हणदेव, २४० कुन्तलजी, २४१ जोनसीजी और २४२ उदयकरण।

३. उदयकरणजी की तीन रानियाँ थीं—(१) उत्तम दे(वी) गोडजी, (२) तवरजी पचरङ्ग देवी (३) निर्वाणजी। कुछ लेखक उत्तम दे के गर्भ से आठो राजकुमारो की बात कहते हैं। कुछ का कहना है कि गोडजी उत्तमदेवी के गर्भ से कोई पुत्र उत्पन्न नहीं हुआ। सात पुत्र तंवरजी पचरङ्गदेवी के थे और आठवां निर्वाणजी का। उत्तमदेवी बडी रानी थी, अत भ्रमवश अथवा उनके सम्मानार्थ, आठो पुत्र उनके ही बताये गये हों। इन आठों पुत्रो के नाम इस प्रकार हैं—(१) वरसिंह, (२) वालोजी (शेखावत क्षत्रिय), (३) मोकलजी, (४) शिवब्रह्मजी (श्योब्रह्मपोता), (५) पातलजी (पातल पोता), (६) नपोजी (सामोद के क्षत्रिय), (७) पीथोजी (पीथावत कछवाहे) और (८) नरसिंह, जो उदयकरणजी के पश्चात् आमेर के राजा हुए।

ही अधिक प्रतापशाली हुए हो और कवि ने इन चारो का ही उल्लेख किया हो। कवि का कथन इस प्रकार है—

प्रथम पुत्र नरसिंह नृप आमैरि वषानिय।—(आमेर)
बीयो पुत्र वरसिंह[1] थान मोजाद सुजानिय॥—(मौजमाबाद)
बालो त्रियो सुनाम ठाम अमरसर अषिय।—(अमरसर)
सिव चौथो सिवब्रह्म ठाम नीदरगढ़ दषिय॥—(नीदरगढ)

यहाँ से जयपुर और अलवर की गद्दियो के पृथक्-पृथक् वर्णन चलते है और कवि ने अपने विषय के अनुसार अलवर से सबधित व्यक्तियो को ही लिया है। राव वरसिंह के पुत्र महीराज हुए और इनके पुत्र नरूजी। इनके नाम पर ही यह वश—'नरूवश कछवाह कुल' कहलाने लगा। कुछ लोग इसे 'नरूका कछवाहा कुल' कहने लगे।

नरू के लालोजी और फिर क्रम इस प्रकार चलता है—लालोजी, उदैसिंहजी, लाड़सिंह (लाड़खा)[2], फतहसिंह[3,6], कल्याणसिंह[4], आनन्दसिंह (अनन्तसिंह)[5], तेजसिंह[7], जोरावरसिंह[8], मोहव्वतसिंह[9], प्रतापसिंह, बख्तावरसिंह। यही

१. वरसिंह अपनी भीष्म-प्रतिज्ञा के लिए प्रसिद्ध हैं। जैसे भीष्मजी ने अपने छोटे भाई को राज्य दे दिया, इसी प्रकार वरसिंहजी ने अपनी विमाता के पुत्र नरसिंह को अपना राज्याधिकार सौंप दिया और स्वयं ने ८४ गाँवों की एक छोटी-सी जागीर स्वीकार की। कवि ने नरसिंह को प्रथम इसीलिए कहा है कि वे आमेर-पति थे।

२ मुग़लो द्वारा दिया गया प्यार का नाम।

३. उदोराव सुत लाडयां भाक भनत फतमाल (फतहसिंह)।

४ हुये राव फतमाल सुत, कुल मंडण कलियाण।

५. अणदेस भुज अमरेस इसके अनुसार 'आनन्दसिंह' नाम अधिक उपयुक्त है। कलियाणजी के पांच पुत्रो का वर्णन कवि ने किया है—अणदेस, षत्री, ईसरसिंह, सुरीपट सोघरस।

६. फतहसिंहजी के समय से ही जम्मू के राजाओ का वर्णन मिलता है—जगमालजी, रामचन्द्रजी, सुमेहलदेव, सग्रामदेव, हरीदेव, पृथ्वीसिंह गजेसिंह, ध्रुवदेव, सुरतसिंह, जोरावरसिंह, किशोरसिंह, गुलाबसिंह, रणवीरसिंह, प्रतापसिंह, हरीसिंह और काश्मीर के वर्तमान सदरे-रियासत श्री करनसिंह।

७. जिन दाढ़िये घर देस। तिन पाटपण अणदेस॥
सुत हुए तेजल राव। दनि वाग दापणि दाव॥

८. तेजल के तिहुँ सुत भये, राजकरण रिषसीव।
रावस जोरावर भये, वधू जालिम भींव॥ (१७६५ वि०—१७९२ वि०)

९ घजवधो ध्रम धारिये, जोरावर जग जाय।
उपजे मोवतसिंह सुत, तप पूरण परताप॥ (मोहव्वतसिंह १७९२—१८१३)
(प्रतापसिंह स० १८१३—१८४७) सं० १८३२ मे शाहआलम ने 'रावराजा' की उपाधि प्रदान की तभी से 'रावराजा' हुए—पहले 'राव' ही थे।

तक की वंश-परम्परा कवि ने दी है। इसके वाद तो आधुनिक काल आ जाता है और अलवर का पूरा इतिहास उपलब्ध है। कवि द्वारा दी गई वंशावलि सभी प्रकार से ठीक है—कई स्थानो पर मिलान करने से वंशावलि ठीक पाई गई। इतिहासकार प० पिनाकीलाल जोशी के 'अलवर इतिहास[१]' मे भी, कुछ विस्तार से, यही वंशावलि दी गई है।

आमेर दरबार मे राव प्रतापसिंह का बहुत सम्मान था—

प्रतापराव रावातिलक, जानी नृप चाहत चित।
आमैरधणी रघुवंशपति, पूजत भुज माधव[२] नृपति॥

माधोसिंह (माधवसिंह) की सेवा मे प्रतापसिंह ने बहुत-से वीरता के काम किए। उनियारा[३] सर किया और रणथभोर[४] को भी आमेर-पति के राज्य मे मिला दिया। यही माधवपुर—माधोपुर—की स्थापना हुई। किन्तु इसके पश्चात् विरोधियो ने माधवसिंहजी के कान प्रतापसिंह के विरुद्ध भर दिए, और प्रतापसिंहजी को वहाँ से जाने के लिए बाध्य होना पडा। इसी अन्तिम घटना के आधार पर कवि ने इस प्रभाव को "वंस वर्णन तथा नृप विजोग' नाम देकर प्रथम प्रभाव समाप्त किया है। वंशावलि तथा घटनाएँ इतिहास-सम्मत हैं और जयपुर, भरतपुर तथा अलवर के प्रामाणिक इतिहास तथा उस समय के मुगल सम्राटो की डायरियाँ इस वात की पुष्टि करती हैं। पाउलेट के गजेटियर में भी इसी प्रकार का विवरण है।

द्वितीय प्रभाव : प्रतापसिंह अपने आश्रयदाता माधवसिंहजी का दरबार छोड कर निकल पडते हैं। प्रवास मे साथ देने वाले सरदारो की सूची भी दी हुई है। साथ मे छाजूराम हल्दिया भी थे—'सजे संग छाजू सहाथै अमानी।' डेरा करते हुए राव प्रतापसिंह जावली पहुँचे। वहाँ के सरदार ठा० गजसिंह ने पूछा—

'देसपति तजि देस कौं, सजी सेन कहाँ जात।'

और प्रतापसिंहजी ने सीधा-सादा स्वाभाविक उत्तर दिया—

---

१ प० पिनाकीलालजी जोशी के दो इतिहास उपलब्ध हैं—(१) प्रकाशित संक्षिप्त इतिहास (२) अप्रकाशित वृहद् इतिहास—२ भागो मे। इस वृहद् इतिहास का उपयोग, इनके वंशजों की कृपा से, मैं कर सका था।

२ माधोसिंह प्रथम (१८०७ से १८२४ वि०)।

३ स० १८१८ मे (माचाडी के राव) प्रतापसिंहजी ने उणियारा अधीन कराया—उणियारा मराठों की ओर होने को था।

४. स० १८१६ मे रणथभोर (रणतभंवर) पर चढ़ाई की और किला ले लिया।

'कोप्यो है माधव नृपति, अनजल जाह ले जात ॥'

जावलीपति ने बहुत कुछ दमदिलासा दिया और कहा—"मैं राजा से प्रार्थना करूँगा।" किन्तु प्रतापसिंह ने यही कहा—"काम परे आमेरियैं, मिलिहौं पातिल नाम।" —अब तो मैं तभी मिलूँगा, जब आमेर को मेरी आवश्यकता होगी। वे आगे चल दिये और भरतपुर-राजा के राज्य मे पहुँचे[1]। व्रजराज 'सूजा' (सूरजमल, सुजानसिंह) ने इनका स्वागत किया और—

'नगर सु डहरा नाम ठाम कहियत अति भारिय।
महल बाग बाजार ताल तर सुगढ सुढारिय ॥
वरण च्यार मझारि वैश्य छत्री ब्रह्म सूद्र।
ते दीनो व्रजराज जानि कैं नरु नृपति वर ॥"

तथा राव प्रतापसिंह के खर्च आदि की पूरी व्यवस्था कर दी। इस प्रकार सूरजमल को एक और वीर मिल गया और भरतपुर राज्य का विस्तार तेजी से होने लगा। प्रतापसिंह ने अनेक युद्ध किए और शत्रुओं का संहार किया—'जुध कीने किते। मारि दीने किते ॥' अन्त मे प्रतापसिंह को लेकर सूरजमल ने दिल्ली पर भी आक्रमण कर दिया।[2] घमासान युद्ध हुआ, कुरुक्षेत्र की युद्ध-भूमि एक बार पुन. रक्तरंजित हो गई। थोडी-सी सेना के साथ एक बार जब सूरजमल इधर-उधर देखभाल कर रहे थे, तो शत्रुओं ने घेर लिया—सूरजमल ने अद्भुत पराक्रम दिखाया, किन्तु थोडी-सी सेना के साथ कब तक ठहरते ? अन्त मे—

'गिरे षेत सूजा गये सुरगलोके।'

पर इस समय भी सूरजमल बराबर इस बात को कहते रहे कि जरा फौज मे खबर हो जाय और प्रतापसिंह आ जायँ, तो सबको देख लूँ।[3] सूरजमल के युद्ध मे वीर-

---

१ उस समय तक भरतपुर नगर राजधानी नहीं बना था—यहाँ के राजा, जो 'व्रजराज' कहलाते थे डीग मे ही रह कर राज-काज करते थे। व्रजराज' की यह उपाधि भरतपुर के राजाओं के साथ अब तक चली, और वे 'व्रजेंद्र सवाई' उपाधि अपने नाम के पूर्व धारण करते रहे। उस समय भरतपुर के राजा सूरजमल थे, जिनका राज्यकाल स० १८२० तक चला। तदुपरान्त जवाहरसिंह सिंहासनारूढ हुए। इनसे प्रतापसिंहजी की नहीं बनी, और प्रतापसिंहजी इन्हें छोडकर वापिस आमेर आगए तथा मावडा-युद्ध मे जवाहरसिंहजी का सामना किया।

२ समैं येक व्रजराज साजि सब सेन सुभर भर।
कर पयान परभात कूच बजे दिली पर ॥

३ सितावी षवर फौज मे जाय दैहो।
बली राव परताप है वेग लैहो ॥

गति पाने पर जवाहर्रसिह गद्दी पर बैठे।[1] जवाहर्रसिह ने दिल्ली फतह की और अपने पिता की मृत्यु का बदला लिया। राजनीति मे एक नया मोड आया। जोघपुर (मरुधर) के राठोड राजा विजयसिह ने जवाहर्रसिह को एक पत्र लिखा कि हम दोनो पुष्कर मिले और आमेरपति को नीचा दिखावे।[2] दोनो का मिलना निश्चित हो गया। प्रतापसिहजी से कोई परदा तो था ही नही, उन्हे सब-कुछ मालूम हो गया और वे भरतपुर का साथ छोडकर आमेर के लिए रवाना हो गए। और कहते गए—'हरवल मो हथ देषियो'। इधर जवाहर्रसिह पुष्कर को रवाना हुए, और उधर प्रतापसिह आमेर को। जब पुष्कर मे ब्रजराज जवाहर्रसिह का मरुधराधीश विजयसिह से मिलन हुआ, तभी राव प्रतापसिह आमेरपति की सेवा मे पुन: उपस्थित हो गए।[3] इस प्रभाव की भी कोई घटना इतिहास के प्रतिकूल नही पडती।

तृतीय प्रभाव : कवि ने इस प्रभाव का नामकरण 'मावड़ा जुध वर्णन' किया है।[4] इस प्रभाव के अन्तर्गत मावडा के इतिहास-प्रसिद्ध युद्ध का वर्णन प्राप्त होता है। प्रतापसिह के आमेर लौटने पर आमेरपति प्रसन्न हुए[5] और जवाहर्रसिह से मिलने की तैयारी करने लगे। पुष्कर मे विजयसिह और जवाहर्रसिह दोनो मिले तथा गुप्त मन्त्रणा की। उन्हे इस बात का भी पता लग गया कि आमेर मे युद्ध की तैयारी हो रही है और लौटते समय जवाहर्रसिह पर हमला होगा। जब जवाहर्रसिह लौटे, तो काफी दूर तक विजयसिह उन्हे पहुँचाने आए। जब निर्दिष्ट स्थान निकल गया, तो विजयसिह तो लौट गए, किन्तु अपनी

---

१. सुजा गये सुरलोक मझि, चढे सार रण धार।
बैठे ते ब्रजराज के, तिलक तेज जोंहार॥ (जवाहर्रसिह)

२ षत भेजे राठोड मोड मुरधर सजोग लिषि।
दिसा तीन वस कीन धरा आमेरि चत्र दषि॥
आन सक तजि सक है सुनि लीने मोरिय।
तुम सामिल हम होय चलें जित तित यक डोरिय॥

विजराज (विजयसिह) लिषी ब्रजराज कों (जवाहर्रसिह) षत बचन कीजो चलन।
दीपदान (दिवाली) आ देषियो हम तुम पहुकर (पुष्कर) मिलन॥

३. इत चलिये पातिल प्रबल, जव चलिये जोहार वति।
पहोकर जोंहार वीजराज मिलि, मिलि पातिल आमेरपति॥

४ "इति परताप रासो जाचीग जीवण कृत मावडा जुध वर्णन त्रतिय प्रभाव॥३॥"

५. मिलि पातलि आमेरपति, माधव नृपति सुनाम।
बधु जानि आसन दिये, लिये दाहिनी ठांम॥

सेना का काफी अंश जवाहरसिंह के साथ कर दिया।[1] इसी युद्ध मे जवाहरसिंह के साथ समरु[2] नाम का एक तोपची भी था। यह विदेशी था। इसकी भारतीय पत्नी—बेगम समरु (जिसके महल आदि सरधना मे अब भी देखे जा सकते हैं) अवध राज्य की सेवा मे थी। माधवसिंहजी ने भारी तैयारी की थी और राज्य के सभी योद्धा उत्साह के साथ युद्ध के लिए प्रस्तुत हुए। किन्तु इसके पूर्व मन्त्रियो के कहने पर सदाशिव भट्ट को इस बात का पता लगाने के लिए भेजा गया कि वास्तव मे जवाहरसिंह की इच्छा क्या है? सदाशिव भट्ट ने जवाहरसिंह को बडी युक्ति से सब ऊँच-नीच बताकर समझाया।[3] जवाहरसिंह ने साफ-साफ बता दिया कि जिन दो परगने—'कामा' और 'पोहरि'[4]—को देने के लिए कहा था, वे अभी तक नही मिले, उन्ही की प्राप्ति हेतु मैं यहाँ आया हूँ। सदाशिव ने माधवसिंह से बातचीत करने का अनुरोध किया और लड़ाई का विचार छोड देने के लिए समझाया। किन्तु जवाहरसिंह ने तो एक ही बात कह दी—

"यहां नृप देय दो प्रगना, कँ कर जुध क बार।"

माधवसिंहजी ने मन्त्रियों के साथ विचार-विमर्श किया और अन्त मे युद्ध करना ही निश्चय हुआ। युद्ध की सारी तैयारी हो गई—

---

१ जो अवाज विजराज सुनि भट बहोरन परवान।
सेन राषि जोंहार संगि, कियो देस दिसि जान॥

२. 'समरु संग लीनिय।' समरु और बेगमसमरु इतिहास प्रसिद्ध व्यक्ति हैं। समरु का दैनिक वेतन २५,०००) कहा जाता है। इसके तोपखाने का मुकाबिला नहीं किया जा सकता था। फीस मिलने पर समरु किसी के भी साथ हो सकता था। वह भरतपुर-दरबार की सेवा में काफी दिन रहा। जब जयपुर ने ६०,००० सेना के साथ जवाहरसिंह का मुकाबिला किया, तो इस मांस की दीवाल को तोड़ना समरु की तोपों के लिए भी भारी पडा—हाँ, जवाहरसिंह को बचाकर ले जाने मे वह अवश्य सफल हुआ। सांभर रींगस, शेखावाटी अलवर होते हुए जवाहरसिंह लौटे।

३ तेज वचन जोंहार के, कहे वचन भट धीर।
मिलिये माधव नृपति सौ सदा तुम्हारो सीर॥
आपक तुमरे तात सदा पायक वा घर के।
सूरजमल वदनेस भूप कीनों पति घर के॥
जोई होय जौंहार लैन सोही चनि लीजे।
कहो आप समझाय स्याम सौं द्रोह न कीजे॥
वीचि पाडि व्रजराज कों, बाजो निहत न पायगो।
जोइन माधव नृपति दल, मोल जवाहर जायगो॥

४ कामां और सोहरी—भरतपुर के दो कस्बे। माधोसिंहजी ने तो कहा था 'कामां सोहरी जवाहर को दे दो', किन्तु धुलेपति राव दलेलसिंह ने स्पष्ट कहा—'कभी नहीं'। इस युद्ध में दलेलसिंह अपनी तीन पीढियों सहित मारे गए।

षोलि भार भडार दारु गोली गलान बटि।
झिलम बगतर टोप वोप सामंत सूर जटि॥
चिलते पाषरि तुवक वान कमान वरछिय।
तीर तरगस वाज करन किरमालस अछिय॥
संग दिये अरावा इन्द्रगज असी सहस नर वाजि सजि।
करत्त जुध जौंहार सौं नृपति दलन वर बंब बजि॥

इस युद्ध मे राव प्रतापसिहजी को बड़े सम्मान का स्थान प्रदान किया गया था—

'भारे रघुभुज दाहिनो कीनो पातिलराव।'

यहाँ जाचीक जीवरण ने सेना की सख्या ८० हजार लिखी है (असी सहस नर वाजि सजि)। अन्य स्थानों पर यह सख्या ६०,००० पाई जाती है[१]। हो सकता है ८० हजार मे सिपाही, घोडे, हाथी सब की सख्या शामिल हो और ६०,००० केवल सैनिकों की ही सख्या रही हो। युद्ध-वर्णन की शैली वही है, जो सूदन कृत 'सुजान चरित्र' मे पाई जाती है—

बजे फेर नृप के दल में नगारे।
चढ़े सूर सामंत महमंत भारे॥
पहले पिलै सो पताराव सथै।
बहे जाय जोइ हरवल सथै॥

इस युद्ध में कँवर मगलसिंह ने भी भाग लिया[२]। "उर उर, नर नर, मर मर, सर सर, कर कर, खर खर, गर गर, घर घर, चर चर, जर जर, झर झर, टर टर, डर डर",[३] आदि मे जहाँ युद्ध-कौशल का वर्णन है, वहाँ क, ख, ग, घ, न (ङ), च, छ, ज, झ, न (ञ) से लेकर स (श), ष, स तक पूरी वर्णमाला की आवृत्ति हो जाती है। इस युद्ध का परिणाम हुआ—

बाजि नौवत नृपत्ति दल, षिस्यो षेत जोंहार।
आगे सेना सज कटक, गये भूप दल लार॥

---

१. यथा: 'वीर विनोद' और श्री पिनाकीलाल के 'अलवर राज्य का इतिहास' मे।

२. 'कवर नाम मगलेस इन्द्रेस दोई।' संभवत. ये वही 'मगलसिंह' हैं, जिनकी आज्ञा से इस ग्रथ, 'प्रताप-रासो', की रचना हुई।

३. इस प्रसग मे विस्तृत टिप्पणी 'भाषा-विश्लेषण' अश मे देखिए। कवि ने स्वर-ध्वनियों को तो नहीं लिया है; 'ॐ नम. सिद्धं' के उपरान्त प्रचलित व्यजन-ध्वनियो का उल्लेख किया है।

जवाहरसिंह को बुरी तरह से भागना पडा।[१]—"गये जवाहर नगर निवासं। म्हैला दीरघ भरत उसासं॥" यहाँ कवि ने एक मजाक भी किया है, जिसमे जवाहरसिंह के रनिवास ने भाग लिया है—

"घन मिलि धरती बूझत ऐसी।
कहिये कंथ ढुंढाहर कैसी॥"

इस युद्ध का सचालन राव प्रतापसिंहजी द्वारा किया गया प्रतीत होता है।[२] जवाहरसिंह को परास्त करने के उपरान्त प्रतापसिंहजी ने माधवसिंहजी को समाचार दिया—

'जाय जोंहावर घर घस्यो कहिये सो अब करन हम।
राजाधिराज आमैरपति दलनायक दीजे हुकम॥'

प्रसन्न होकर माधवसिंहजी ने 'राजगढ' मे किला बनाने की आज्ञा दी।[३] साथ ही 'राव' को 'राजा' शब्द के साथ जोड दिया[४] और कह दिया कि जब आमेर का काम हो, तब यहाँ का काम करना। प्रतापसिंह आज्ञा पाकर चल दिये और राजगढ मे आकर डेरे डाल दिए।[५]

चतुर्थ प्रभाव : यहाँ से प्रतापसिंह का स्वतंत्र अस्तित्व दृष्टिगोचर होता है। पहला ही दोहा देखिए—

थान जोड़ थिर थान है, राजा पातिलराव।
राजउ षेतन राजगढ़, गये चित करि चाव॥

इस प्रकार 'मचाडी के राव' 'राजगढ राज' हो गए। कवि लिखता है—

पातिल कमठाणां किये, राज राजगढ़ भाल।
हिंदवानी हद रषना, तुरकानी सिर साल॥

---

१. जो जोंहार पच्छितात अति, वर वर ढोरत सीस।
आय नृप दल दीघ सूं, रह घटि कोस पचीस॥

२. तहां राव उमराव संगि सला मिलि कीजिय।

३ राजरु मोसल राज के, दिये हुकम नृप जोय।
बहोरि कूच कीजे पछिम, ठाम राजगढ होय॥

४. इसों राजसी कों हुकम नृप होई।
वरं राव प्रताप सो राज होई॥

५ इनो राजसी कू हुकम नृप दीनो। लषते पते वान दल कूंच कीनो।
नटं नृनि को रेरिण फौजें अघेरा। दिये राजगढ षेत जो जाय डेरा॥

राजगढ मे किला-महल आदि का निर्माण कराया गया।[1] इसी बीच माधवसिंहजी का स्वर्गवास हो गया और इनके स्थान पर इनके बडे पुत्र पृथ्वीसिंह गद्दी पर बैठे।[2] इस समय पृथ्वीसिहजी की अवस्था केवल पाँच वर्ष की थी। स० १८२७ मे जब ये आठ वर्ष के हुए, तो बीकानेर के महाराजा गर्जसिंह की पोती के साथ इनका विवाह हुआ। इनके जीवन-काल की यही प्रमुख घटना थी। स० १८३५ मे तो इनका देहावसान हो ही गया। इस विवाह का विस्तृत उल्लेख हमारे कविराज द्वारा किया गया है—

यो सुनि बीकानेर नृप गजै (गर्जसिंह) आप उरधारि।
पीथल है आमैरपति, दीजै ताहि कँवारि॥

विवाह का अच्छा चित्रण किया गया है। प्रतापसिंहजी तो राज्य की देखभाल करते ही थे।[3] इस विवाह के अवसर पर याचको को खूब दान दिया गया—

जाचिग आये जानि राव परताप आप नर।
स्याम लाज कै काज बाज धन दिये बटि वर॥

विवाह सानन्द समाप्त हुआ और—

ब्याह भूप दिसि देस सिधाये। पीथलराव जयनगरा आये।
पातिलराव संग व्रतधारी। दीन षग(नेम) नृपति भुज भारी॥

इस समय प्रतापसिंह का काफी रोब था, किन्तु उनकी स्वामिभक्ति अटल थी। कवि लिखता है—

यसो राव परताप आप मति महाभीम बल।
स्याम धरम सुध भाव वदि वदित भूप दल॥
ही-दल ता गजराज राज रजपूत सेन भर।
चढ़े चवर वध चाय दाय अप नरू नृपति नर॥

---

१ ये किला-भवन आदि आज भी देखे जा सकते हैं। राजगढ—बांदीकुई-रिवाड़ी रेलवे लाइन पर बांदीकुई से तीसरा स्टेशन है और आज भी बगीचों के लिए प्रसिद्ध है।

२ सम चौवीसै साल (सं० १८२४) काल मावध महीप किय।
भंचक सो परि भोमि जोमि नर जिते सोच जिय॥
तिही वार वल लार कोकि महाराव वुलायव।
सबै ठाम उमराव ध्याय आमात्रति आयव॥
नरपति निवास जुरिये जुगल रघुवसी अरै पलक।
माधव महीप महाराज सुत पीथलि(पृथ्वीसिंह) सिर दीनो तिलक॥

३. पीथल सिर दीनों तिलक, करि रघुकुल के साज।
समरथ पातिल (प्रतापसिंह) जानि कै, वई राज की लाज॥

देखत और दीसै न को पता राव सम पटतरैं।
दल आमैरा देस परि उमराव बंधु कित्ते धरे॥

राज्य के अन्य उमराव और दरबारी प्रतापसिंह की इस बढोतरी को सहन नहीं कर सके और उनसे ईर्ष्या करने लगे। एक बार तो ऐसा भी हुआ कि जब प्रतापसिंह घूमने को गये हुए थे, तो लौटते समय किसी ने उन पर गोली चलाई।[1] किन्तु भगवान् ने उनकी रक्षा की[2] और गोली कान के पास से निकल गई। प्रतापसिंह को अपनी स्वामिभक्ति का ऐसा विपरीत परिणाम देख कर बहुत दु:ख हुआ। आमेर छोडना तो नही चाहते थे, किन्तु स्थिति देख कर यही निश्चय किया कि यह नगर छोड देना चाहिए। उनियारे के राव को राज-रक्षा का भार देकर आप निकल आये और कहते गए—

'करत याद फिरि आय हौं'

उनसे बहुत कहा गया कि आप यही ठहरे—राजा ने भी अनुरोध किया, किन्तु—

बोले सुराव नृपराज सों, करत याद फिर आय है।
येक बेर देसन दिसा हुकम जानि कै पाय है॥

फौज-पलटन के साथ जाते हुए थानागाजी के समीप आकर उतरे। यहाँ से राजगढ की ओर जाने का कार्यक्रम था, किन्तु इसी बीच राजसिंह तथा फीरोजखाँ ने षडयन्त्र रचकर जयपुर-नरेश से राजगढ़ अपने अधिकार मे ले लिया।[3] प्रतापसिंह आगे बढते रहे और बसवा नामक स्थान पर पहुँचे। यहाँ उन्हे सारी बातें मालूम हुई और उन्होने अपने मन्त्री छाजूराम[4] से परामर्श किया। इस

---

१ सहल करन कू राव सिधाये। बहरचौ दिसि डेरन कू आये॥
मधि सत्रुन मिलि ऐसी तोली। कियो कूर तकि दीनी गोली॥

२. दगेस पातिलराव पर, कियेस दुरजन हाथ।
सीस सहायक है सदा, लिये रषि रघुनाथ॥

३ तातैं सला है यक कीजैं। हुकम नृपति को या विधि लीजैं॥
राव सुथान राजगढ जोई। तापैं हमैं मुहीमस होई॥

४. छाजूरामजी हल्दिया, सम्भवत', प्रतापसिंहजी के साथ बराबर रहे। भरतपुर पहुँचने के अवसर पर भी छाजूराम साथ थे और उन्हीं के द्वारा सारी बातें हुई—

मंत्री छाजूराम सो, बूझत बोले बैन।
सुनि अवाज ब्रजराज हों, आये पातिल नैन॥

भरतपुर महाराज भी इन्हें मानते थे और उन्हीं को बुलाकर सूरजमलजी ने पूछा था कि प्रतापसिंह के इधर आने का क्या कारण था।

समय तक छाजूरामजी के तीनो पुत्र—खुस्यालीराम, दौलतराम और नन्दराम भी बड़े हो चुके थे और राजनीति मे अपने पिता का हाथ बँटाने लगे थे। इसका सकेत कवि ने इन पक्तियो मे किया है—

मत्री छाजूराम बुलाये। ता सुत त्रहू सुनतहि आये॥
षुस्यालचंद दोलो नदराम। जो तो करन स्याम के काम॥

यही से इन तीनो भाइयो की प्रभाव-प्रभुता का विवरण चलता है। पूरा दरबार किया गया और अन्त मे युद्ध करना निश्चय हुआ—

दरबार राव पातिल विराजि। दीनो सुनाय यक हुकम गाजि॥
आये सु भूप दल करन जंग। चढ़िया सु राजगढ़ किला रंग॥

किन्तु यह सोचा गया कि सीधे राजगढ की ओर न जाकर दूसरी तरफ चलना चाहिये। अन्त मे काकवारीगढ की ओर रवाना हुए।[1] राजसिंह और फीरोजखाँ ने वहाँ भी युद्ध किया—

वति आये दल नृपति के, यति पातल के सूर।
दुहू वोर लागे बहन, सार समर भरपूर॥

दो महीने तक युद्ध चलता रहा और फौजें थक गई[2]। अन्त मे पृथ्वीसिह ने पत्र लिखा—

षत वंचै पीथल नृपति, सला धारि उर आप।
आगल है या देस की, कोके राव प्रताप॥

इस प्रकार राव प्रताप को आमन्त्रित किया और वश-परम्परा का ध्यान दिलाते हुए लिखा कि उदयकरण के वशज हम तुम दोनो भाई हैं।[3] हम दोनो मे युद्ध का कोई कारण न होना चाहिये। पत्र पाते ही प्रतापसिहजी महाराज पृथ्वीसिहजी से मिल्ने चले और प्रेमपूर्ण सम्मिलन हुआ। प्रतापसिंह को राजगढ का राव पुन घोषित किया गया[4] और इस प्रकार यह चतुर्थ प्रभाव पूर्ण हुआ।

---

१. नाम काकवरीगढ़ थानो। ता दिस पातिल कियो पयानो॥

२. मास दोय कीनी रण मारी। थाप गई थकि फौजै सारी॥

३. लिये कोकि परताप आप नृप लिषे षास षत।
सरी तुम्हारी रार आरि मिलिये सवेगियत॥
अवनि दाय कै माय आट आगा लगि आइय।
उदैकरण नृप होय तास तन हम तुम माइय॥
षत जोजि बच्चि पातिल प्रबल जुध जीति कीये चलन।
धनी राजगढ़ राजई नृप प्रमावति पीथल मिलन॥

४. वढ्यो हरष नृप यों कह्यौ, राज राजगढ़ राव॥

पञ्चम प्रभाव : नरूकुल के नक्षत्र राव प्रतापसिंह अच्छी तरह स्थिर हो गए। कवि ने लिखा—

अवनि लीन बसि कीन दीन कोनसी अपन।
उथपन थे थिरकरन करन ते थिर ते उथपन॥
परतापराव रावत तिलक, जगत जोय नषतरू नरू।
पूरव पछिम उत्तर लग दषिण लग जाने सरू॥

चारो दिशाओ मे प्रताप की ख्याति फैल गई। इनके शौर्य से दिल्लीपति भी प्रभावित हुआ। उन दिनो दिल्ली राज्य पर जाटो का बहुत उत्पात था, अतएव दिल्ली के बादशाह ने प्रतापसिंह को अपनी ओर मिलाने की चेष्टा की। कवि लिखता है—

पूरन ससी सो सील तन, तेज तरन परवान।
ताहि चाहि दिली धनी, देये साहि परवान॥

राव प्रतापसिंह ने दिल्लीपति की आज्ञा शिरोधार्य की[1]। और बादशाह ने

दये गज तेंग षिलंत दुसाल।
दिये सिर पेच किलंगी भाल॥
सजन मांहि मुरातव लारि।
वजन साहिव नोवति वार॥
यसो पतिसाह कियो सनमान।
नरू धर पातिल वड़ प्रमाण॥

बादशाह का कार्य करने के लिए प्रताप ने अपने मंत्री 'ववुत्रय' को बुलाया और उनको आदेश दिया—'बादशाह की आज्ञा का पूरा-पूरा पालन करो तथा दिशा-दिशा मे जाकर बादशाहत मजबूत करो, जो भी दिल्ली की आधीनता स्वीकार न करे, उसे नष्ट कर दो[2]।' फिर क्या था —

हुकम धरणी पातिल दिये, लियेस मंत्री नाव।
कर सलाम तिह वेर ही, करन स्याम के काम॥

खुस्यालीराम उत्तर दिशा की ओर चले और दक्षिण दिशा को दौलतराम ने प्रस्थान किया। सर्वत्र ही राव प्रतापसिंह का प्रभुत्व छा गया और—

---

१. दिये फुरमान दिलीपति साहि। लिये सिर पातिल राव चढाय॥
२. हुकम साहि को सोई कीजै। दिसा दिसा सिर डेरा दीजै॥
अवनी ऊपर अमल वजावो। अनमिल मारि मलैन मिलावो॥

'गढ-गढ़ मैं बैठक वणी, पातिलराव प्रताप'

प्रतापसिह का राज भी बढा और अनेक गढो पर उनका आधिपत्य हो गया। राजगढ को राजधानी बनाकर राजकाज सचालित होने लगा[1]। कवि ने राजगढ का सुन्दर वर्णन किया है और उसे अमरावती के समान बताया है[2]—

वरणि राजगढ गढ़ कह्यौ, जोजन येक मझारि।
जल-षाई ऊँचे अलग, द्वार चारि दिसि चारि॥

नगर का वर्णन करने मे कवि ने अतिशयोक्तिपूर्ण पद्धति का अनुसरण किया है। राजगढ की भीड़-भाड, नाच-रग, विलास-विनोद सभी का वर्णन किया है। साथ ही यह भी वताया है कि यहाँ न केवल राजपूतो के ३६ वश निवास करते थे, वरन् सइद, सेष, मुगल, पठान, तुरक भी आनन्द के साथ रहते थे। 'राग-रंग, धुन-ध्यान', सभी कुछ चलते थे। 'गज, बाजि, तोप' आदि युद्ध की सामग्री का भी पूर्ण आयोजन था[3]।

सवत् १८३२ मे प्रतापसिहजी की स्थिति बहुत अच्छी थी। इधर आमेर-पति पृथ्वीसिंह और उधर दिल्लीपति शाहआलम दोनो ही से इनके सम्बन्ध अच्छे थे—

अठरासै वतीस साष संवत परवानन।
राजराव परताप समै कथि कहे सयानन॥
यत दिली आमैरि मभि पातिल पन धारिय।
अरन नाय नर किते हद दोऊ घर पारिय॥
धणीस राजगढ़ नरपती नरू बस मोटे वषत।
यति आमावति पीथल नृपति वत अलीगवर दिली तषत॥

भरतपुर की ओर से प्रतापसिह रुष्ट थे ही। उधर दिल्ली का वादशाह भी भरतपुर

---

१. गढ यतने महाराव के, ते कथि वरनें नाम।
तिन सिर नषत सु राजगढ, रहनि आप सुष ठाम॥
अथवा—'रावराज के गढ़ यते, सो सव सिरै गढ़ राजगढ़॥'

२. सही सुरपनि पुरी स पठान।

३. चलि आवत भीर चहु दिस की। गजराज अवाज चहु दिस की॥
असुपति गजपति आतक ते। नर नौकर पाय लगति किते॥
सइद सेष मुगल पठाण। हीदु हीदवान दिली तुरकान॥
विछायत मसद गलिम गदी। अतरा षतरा षसवाय हदी॥
नगरी मज वंस छतीस वसै। मग आवत जावत ढाल षसै॥
हट चौहट वट वजार वणे। अति सुन्दर मंदिर मध्य घणे॥
कहू धुन-ध्यान स राग रगे। कहू रजपूत सु थट लगे॥

की शक्ति को दवाना चाहता था। अत राव प्रतापसिंहजी ने कहा—

'होय मोहि यक हुकम देष हो जाय व्रजधर'

तब शीघ्र ही दिल्लीपति ने नजफखाँ के साथ वहुत-सी सेना देकर प्रतापसिह को प्रोत्साहित किया। व्रजदेश के ऊपर डेरा डाल दिया गया। इस चढाई मे 'पुस्याल' (खुस्यालचद-खुस्यालीराम) को महत्त्वपूर्ण स्थान मिला।[1] इस समय भरतपुर मे नवलसिहजी[2] का राज्य था। उन्होने भी युद्ध की तैयारी शुरू कर दी। इस समय भी भरतपुर की सेना मे प्रसिद्ध तोपची समरू काम करता था। वे सारी वात 'हरदेवजी' (भरतपुर के इष्टदेव) के हाथ छोडकर[3] युद्ध के लिए प्रस्तुत हो गए। घमासान लडाई हुई[4] और निरतर चौवीस मास[5] तक दोनो ओर के योद्धा डटे रहे। अत मे परिणाम नजफखाँ के अनुकूल हुआ—जाट राजा हरा दिया गया—

भजी फोज व्रजराज की नजफ जीतिये जंग।
दोहु दलां बिचि रावरा मंत्री चाढै रंग॥

इस प्रकार नजफखाँ के साथ रह कर प्रतापसिहजी ने मुगल वादशाह की काफी सेवा की। जाटो से आगरे का किला खाली कराया, और अलवर स्वय

---

१. मिलि डेरा नर नजव के, मत्री किये षुस्याल।
वजे कूच वर भोर ही, धरा व्रज परि चालि॥

२. नवलसिहजी का अभिभावक-काल सन् १७६८ से सन् १७७६ ई० तक रहा। नवलसिह राजा नहीं थे। वे अपने भतीजे राजा केसरीसिह की देखरेख करते थे किन्तु उनका रुतवा राजा जैसा ही था। यहाँ तथा अन्यत्र भी कवि ने इनका उल्लेख राजा जैसा ही किया है। महाराज सूरजमलजी के ४ लडके थे (१) जवाहरसिह, जो सुप्रसिद्ध ऐतिहासिक व्यक्ति हैं तथा जिनका आतक दिल्ली-आगरा सर्वत्र छा गया था। जवाहरसिह सदा ही आगरा किले मे काले पत्थर के तख्त पर बैठ कर शासन-कार्य किया करते थे। वहीं सं० १७६८ मे इन्हें मार दिया गया। (२) रतनसिंह, जो केवल नौ महीने तक गद्दी पर बैठे। (३) केसरीसिह, जिनके अभिभावक नवलसिह थे। (४) रनजीतसिह, जो अपने भाई का विरोध कर स्वयं राजा होना चाहते थे और जिनका पक्ष नजफखाँ ने लिया। इनके अतिरिक्त इनका एक पाँचवा पुत्र और कहा जाता है—हरदेववख्श, जो सूरजमलजी को जगल मे मिला था।

३. करिहैस स्याम के काम सथ। जो जीति हार हरदेव हथ॥

४. मनो वोलरे इंद्र वल दोय सजे। वहे गोल गोला अरावे गरजे॥
वहे वाघणी वीर वंदूक अछी। वहे वल कमांन तेगं वरछी॥
हवं हक्क हक्क जुटं सूर सूरं। गले माल गेरै वहे हूर हूर॥
घरं सीस टूटं लगं रूक रूकं। किते घाय घायं परे खेत कूक॥
न को कोय सूझै भयो जुध भारी। मनू वसरग की भई रैन कारी॥
वरंह किये वाजते राजमत्री। कटी जट की सेन जो हथकत्री॥

५. लरं मास चौवीस लग।

प्रतापसिंहजी ने सेवा-स्वरूप प्राप्त किया। पचम प्रभाव भरतपुर की पराजय के साथ समाप्त होता है। भरतपुर का प्रयोग स्थान-नाम को स्पष्ट करने के लिए किया जाता रहा है, अन्यथा महत्त्व उसी दीग (दीघ, डोग) का ही बना हुआ था।

षष्ठ प्रभाव व्रजराज से राज छुडवा देना, प्रतापसिहजी के लिए कुछ शोभा नही देता। भारत मे व्याप्त राजाओ की इसी नीति ने भारत की स्वतन्त्रता का सर्वदा से अपहरण किया है—किन्तु उस समय इसी प्रकार की नीति चलती थी। मुगल बादशाह इसी प्रकार देशी राज्यो को ध्वस्त करने का कार्य करते रहते थे। इस युद्ध का परिणाम हुआ था—

सो पति है ब्रज देस को, नगर दीघ[1] सुनाम।
तापर बैठे नजब नर, इंद्र पुरी सम ठाम॥

इस स्थान पर कवि का हिन्दुत्व जाग्रत होता दिखाई देता है। कवि कहता है—

तोरि दीघ निज ठांम जोर अति भरे नजम नर।
कहै अैन मुष वैन देषि हौं जोय हिंद घर॥
(गया) राम नाम बड़ ठांम लूटि लैहो सब लछि धन।
गढ़ अजंग गढ़पतिय डारि है भंग जंग जिन॥
हके नवाब हिंदू धरा लेन काज भर वहो बलन।
कीने पयान पच्छिम दिसा बार लार ले लषन दल॥

नजफखाँ की इस चढाई के समय किसी भी हिंदू-वर्ग का नाम नही आता—

षुरासान मुलतान कासि षदार मीर भर॥
सैयद मुगल पठाण सेष भारथ अभंगिय।
तिलगु रुहेला तेस देस कत .. फिरंगय॥

हिंदू राज्यो को एक भारी सकट उपस्थित हो गया। प्रतापसिंहजी के पास भी

---

१. भरतपुर जिले का काफी भाग ब्रज देश मे शामिल किया जाता है, जिसमे दीग भी आता है। ब्रज की ८४ कोस की परिक्रमा करते समय दीग में भी एक रात्रि का पड़ाव डाला जाता है। परिक्रमा के लिए अब भी कई प्रकार के समुदाय निकलते हैं। जैसे गुसाइंजी की यात्रा, जो बहुत समय लगाती है और इसमे सभी प्रकार की सुविधाएँ प्राप्त होती हैं। परदे मे गुसाइनें भी यात्रा करती हैं। कभी-कभी इस प्रकार की दो यात्राएँ भी चलती हैं। दूसरी 'लठावन भारती' कहलाती है, जो कुछ ही दिनो मे ८४ कोस समाप्त कर देते हैं। यात्रा के दीग मे ठहरने के अवसर पर एक मेला सा लग जाता है।

समाचार पहुँचा[1] उन्होंने सभी बंधु-बाधवो और मंत्रियो को बुलाकर भारी दरबार किया और उसमे घोषणा की—

पातिल बोले बचन यों, सब दरबार सुनाय।
कर सर या ब्रजदेस कूं, नजब हींद घर आय॥

दरबार प्रतापसिंह की आज्ञा प्रतिपालन के लिए प्रस्तुत था। रावराजा ने कहा—

"करिहैस राडि परिहैस पाय।"

और कह दिया—

"टूटत देषि हिंदवान हद।
टरि है न जोय छत्री मरद॥"

हिंदवानी हद को टूटते देख प्रतापसिंहजी को बहुत जोश आया। दुर्भाग्य की बात यही थी कि उन्होने 'ब्रजधरा' को 'हिंदवान हद' मे नही समझा! जयचंद वाली घटना एक बार यहाँ भी चरितार्थ होने जा रही थी। किन्तु इस अवसर पर सारा हिंदू-दल एक हो गया और नजफखाँ के सामने एक समस्या उपस्थित हो गई। उसे समझाया गया कि विकट परिस्थिति आ गई है। समझ सोच कर काम करना चाहिए।[2] नजफखाँ ने नीति से काम लिया और चढाई की बात को बदल कर कहा—'हमारी तुम्हारी कोई बात नही, आमेर देखने चले।'[3] किन्तु नजफ से स्पष्ट कह दिया गया—

वा घर या घर येक ही, आनो नजब नवाब॥
आमावति सम राजगढ़, नरपत पातिलराव।
धरती के दो ही धनी, वत राजा यत राव॥

---

१. हिंदवान हद पातिल प्रकृति वल हलकारे षबर दिय।

२. सुनिये नजब नवाब ज्वाब यक अरज हमारिय।
कीजे कूँच विचारि धारि हींदू दल भारिय॥
तम सम आगे और ठौर तापैस आय बन।
होसदारषां बोलि यहे हींदु घर दल दहन॥
(शेख होशदारखां प्रतापसिंह के साथ था)

३. रहिये असेष न सेष षुसी। तुमरी हमरी घर येक वशी॥
मिलि है तुम सौं जिनहू मिल हों। ढूढाहर देषन को चलिहो॥

फिर भी नजफखाँ आगे बढ़े और रावराजा ने जब यह खबर सुनी, तो सबको यह आज्ञा प्रदान की[1]—

हद टूटत टूटत धरा, टरै न छत्री नाम।
जुद्ध करन कौं जोग है, करै सु सीताराम॥

इधर भी युद्ध की तैयारी हो गई और अन्त में लछमनगढ का युद्ध हुआ।[2]

वत उसरे दल नजब ले, यत पातिल दल भीर।
माझि हद पर राव कै, लछमनगढ़ गढ़ वीर॥

और एक बार फिर कँवर मगलसिह का आह्वान किया गया। कवि इनकी प्रशसा करते हुए लिखता है—

बुधिवंत वलवंत जंग महमंत मन गर।
धीर पाय अवदाय भार रण चाय करन सर॥
अरन काल सिर साल भाल रछपाल वाम पर।
घायक वत दल फोर सोर जीतंत जोय छरि॥
इम धारि रावराजास चित यसो चाहिये बंधु वर।
सभा सुध सव हुकम दिय है लायक मंगल कवर॥

और रावराजा ने कहा—

बोले रावराजास भ्रात। सुनिये कंवर मगल बात॥
आये नजब धरि करै दाय। लैन लछमनगढ ठहराय॥
हद परी होय विरोध। तुम जाय कीजो जुध॥[3]

इस युद्ध मे नजफखाँ को बहुत हानि पहुँची—

नजबषांन पछितात लड़ि, गढ लछमनगढ़ आय।
बोलि गुंसाईं सौं कही, सला होय सुनाय॥

---

१. सुनत रावराजा यसी, बज त्रभाट वर साजि।
पातल सबन सुनाय करि, दये हुकम यक गाजि॥

२. 'लछमनगढ रासो' नाम की एक स्वतंत्र रचना (जिसे इस पुस्तक के परिशिष्ट मे दिया गया है) अलवर के रावराजा विनयसिहजी की आज्ञानुसार षुसाल कवि ने की है। जिस युद्ध का प्रताप-रासो-कार ने संक्षेप मे वर्णन किया है, 'षुसाल' ने उसे विस्तृत रूप मे लिखा। वर्णन मे सयम रखना षुसाल कवि के लिए सभव न हो सका।

३. इस युद्ध मे मंगलसिह के साथ शिवसिह और छाजूराम भी थे। कछवाहों के अनेक कुल भी इस युद्ध मे सम्मिलित हुए।

यह गुसाई "अनूपगिरि"[१] ही था, जो एक कुख्यात देशद्रोही था। संभवतः इसी के कहने से नजफखाँ ने हिन्दू-विरोधिनी नीति को अपनाया—जिसका परिणाम देश के लिए तो बुरा हुआ ही, आक्रान्ता भी दुखी हुआ। अन्त मे गुसाईं ने भी यही सलाह दी—

लिषि पठये करि षास षत, रावराज पै दैन।

पत्र प्राप्त होने पर प्रतापसिंह ने अपने दरबारियो से परामर्श किया और अत मे यह निश्चय हुआ—

सुनिय रावराजा यह बातैं। को विधि टरैं नजब नर ह्यांतैं॥
यह हिंदू घर है धर्म धारिय। यत वत करत कुफर वह भारीय॥

परिणामस्वरूप—

'बुधिबल छाजूराम सुत कवर षुस्यालीराम।'

को भेजा गया। खुशालीराम ने बहुत योग्यता के साथ अपना कार्य किया और

नर नजमषांन वर वचन दीन। कहि है षुस्याल मैं सोय कौन॥

बातचीत के उपरान्त—

भीरि बोलि लीनी नजब, लछमनगढ़ की घेर।
उलटिबाट कीनो चलन, लारे मंत्री लेर॥[२]

यह युद्ध सं० १८३५ मे हुआ[३]। इस युद्ध मे कँवर मगलसिंह ने बड़ी वीरता दिखाई।[४] यह प्रतापसिंह की भारी विजय थी और नजफखाँ पर भी उनका सिक्का बैठ गया।

सप्तम प्रभाव : नजफखाँ लौटकर दीग पहुँचा। साथ मे खुशालीराम भी थे। एक बार नजफखाँ ने खुशालीराम से कहा—

रावराज तुम धनी बार यक हमैं मिलैयत।
देहु राव बड़ ठांम परगना ते तुम चहियत॥

---

१. अनूपगिरि से सम्बन्धित एक हस्तलिखित ग्रंथ—"अनूप प्रकास"—मैंने इण्डिया ऑफिस लाइब्रेरी, लन्दन में देखा था। इसके दो रूपान्तर थे - एक पद्य में दूसरा गद्य में। 'अनूपगिरि' पर मेरा लिखा एक स्वतन्त्र लेख देखें—प्रकाशित 'हिन्दी अनुशीलन'।

२ नजफखाँ मंत्री खुशालीराम से इतना प्रभावित हुआ कि उन्हें अपने साथ ही लेता गया।

३. अठारैसै पैंतीस मांहि नजब से दायक।
मत्री सो षुस्याल घरहिए पत्तिल को पायक॥

४ दंगल दल मगल लरे, काका कन्ह प्रवान।
पछि पातिन प्रथीराज सौं, गुन कवि कहे वषांन॥

प्रतापसिंह जी को पत्र लिखा गया। जब पत्र रावराजा को मिला, तो भरे दरबार मे विचार किया गया—

राजाराव दरबारि वरि सब सौं सलाहा कीन।
नजब मिलन ब्रजदेस कू कुंच प्रात ही कीन॥

बीस हजार सेना के साथ प्रतापसिंहजी रवाना हुए और पहला मुकाम लछमनगढ मे हुआ।[1] इस प्रकार 'कूंच दर कूंच' करते हुए ब्रजधरा पर पहुँचे। नजफखाँ बडे सम्मान के साथ मिला। एक-दूसरे को राजसी सम्मान प्रदान किया गया।[2] प्रतापसिंह अपने स्थान पर लौट आये। खुशालीरामजी नवाब के पास ही रहे। एक बार इनसे कहा गया कि अलवर का किला हमें दिला दो। उत्तर दिया—प्रताप के रहते हुए यह कैसे सभव हो सकता है ? अत में खुशालीराम से प्रस्ताव किया गया—

यो सुन वचन नवाब नर, फोरे मंत्री आप।
या दल करु दीवान तुम, तजिये राव प्रताप॥

मत्री को यह बात पसद आ गई और रात्रि के समय अपना परिवार उधर से निकाल लिया। कवि को खुशालीराम की यह बात पसद नही आई और लिखा—

राजाराव तजे तिहि वारे। होय हराम नजब दल लारे॥

इन सभी लोगो ने प्रतापसिंह को छोड़ दिया—

नाम षुस्यालीराम बड़, भुज दौले नंदराम।
छाजुराम तिन तात है, निसरि गये तजि ठाम॥

यह समाचार प्रतापसिंहजी को भी मिला। उन्हे मन्त्रियो का यह कृत्य अच्छा नही लगा—

"दगोस देत मंत्रि ये। कहोस जोय कीजिये॥

इसके उपरान्त—

बंब त्रमाट दलि वार बजाये। वहोरि देस दिसि कुच बजाये॥

इस वार प्रतापसिंह हलके पड़े और 'पातिल षेत षगे तिह वार।' परन्तु उन्होने अपने क्षत्रिय धर्म को आन रखते हुए कहा—

गज नवाब होदा हथयाल। पातल नाम न जो टरि चाल॥

---

१. सजि सहस बीस नर बाजि जोर। तोवे सठठ हसतीस डोरि।
प्रथमीस जाय कीने मुकाम। गढ़ लछमणगढ आछे सुठाम॥

२. नजफखाँ ने—'मत्री बधु उमराव संग सो सिरपाव सजावियें' और इधर प्रतापसिंह ने 'धने बाज गजराज दिय, संगि मीरन सिरपाव'।

और घनी फौज को चीरते-फाडते अपने देश लौट आये।[१] यह घटना १८३६ वि० की है। नजफखाँ प्रतापसिंह के स्वदेश लौटने से सतुष्ट नही हुआ और भारी फौज के साथ पीछा किया—

रावराज घर पति घर आये। नजब साजि दल पाछै धाये॥
लीन काज अलवर गढ़ ठामै। मजलि मजलि पर किये मुकामै॥

उसके साथ मे 'दिली दल, आमैरि दल, अरु देषणी दल' थे। अत मे यह भारी दल अलवर के निकट आ गया। अलवर लेने के लिए शुरू से ही नजफखाँ की भारी इच्छा थी, उसने कहा—

लैहु लराई राव दल, पीछै पाव न देहु।
कै अलवर मो लै रहे, कै अलवर मे लेहु॥

किन्तु परिणाम विपरीत हुआ—

आप राडि जुड़ियेस अप, लैन किला के हेत।
जीते पातिलराव दल, षिसे नजब दल षेत॥

और यही समाचार दिल्ली के बादशाह तक भी पहुँचा।[२] इस अवसर पर खुशालीराम का दिया हुआ आश्वासन—

लैहेहु साह अलवर सुनाम।
जौ है षुस्याल मेरो सुनाम॥

भी कुछ काम न आया। इस युद्ध मे चावडदान की वीरता का वर्णन आया है, जो थानागाजी से प्रतापसिंह की सहायता हेतु अलवर पहुँचे।[३] चावडदान को विशेष रूप से बुलाया गया था।

"लिषयति कोक बुलावियेे, चारण चावड़दान।"

---

१. (अ) फारि फौजे घनी। देस आये धनी।
(आ) वल भारी दल नजव के, फारि आविये आप।
घनो राजगढ़ राजई, राजाराव प्रताप॥

२ हरे नजव दल हो घटे, होय चाहि अन चाहि।
सो अवाज सरवन सुनी, दीलीपति पतिसाहि॥

३. यों सुनाय सव साथ सों, निकसे चावडदान।
हुकम धणी को सो कियो तजि गढ गाजीथान॥
(यद्यपि इनका इधर आना इनके लिए वहुत घातक सिद्ध हुआ—चावड़दान कियौ यत आनँ। यौं नवाव लीनौं गढ थानँ)
किन्तु स्वामिभक्ति के आगे ऐसी वातें कुछ महत्त्व नहीं रखतीं।

अष्टम प्रभाव : समाचार प्राप्त कर दिल्लीपति को बहुत बुरा लगा और नजफखाँ को फौरन दिल्ली बुलाया गया।[1] आदेश पाते ही नजफखाँ दिल्ली की ओर रवाना हुआ और साथ मे 'दोलै, नद, षुस्याल अहु मत्री' को लिया। नजफखाँ जाते समय 'अहमदानी' को अपने स्थान पर छोड गए और 'अहमदानी' प्रतापसिह के 'वसन पलट' (वस्त्र बदल कर—एक-दूसरे के वस्त्र बदल कर) बधु हुए। तीनो भाई दिल्ली मे रहने लगे, किन्तु थोड़े ही समय मे वहाँ के वातावरण से घबरा गए और वापिस लौटने की सोचने लगे। अत मे—

तजि दिली चलिये अहुं, दोल षुस्याल रु नंद।
धकि आये आमेरि दिसि, कियो भूप चर छंद॥

आमेरपति महाराज प्रतापसिह ने पूछा—

क्यों तुम दिली नजब तजि दीनौं। या दिसि आंन काज को कीनौं॥

उत्तर प्रेषित किया कि—

'सिर पै नाहिन स्यांम है, यातै या घर आय।

महाराज प्रतापसिह ने उन्हे सम्मान के साथ अपने पास टिकाया। एक बार जैपुर-नरेश ने राजगढ देखने की इच्छा प्रगट की।[2] मत्रियो ने यह बात पसद की, और फौज के आगे हो लिए। यह समाचार राव प्रतापसिहजी[3] को भी मिल गया। इस अवसर पर नीचे लिखे दोहे से हल्दिया बन्धुओ के प्रति प्रतापसिहजी की क्रोध-मिश्रित आत्मीयता का दर्शन होता है—

---

१. ये षत वेग बंचि तुम लीजे। जलद चलन दिली दिस कीजे॥

२. जैपुर-नरेश को पता लगा था—
जल षाई ऊंचे किला, तोवैं इंद्र अवाज।
बसैं बंस षटतीस मधि दल बल सुभग समाज॥
राजगढ़ की महिमा सुनकर राजा ने कहा—चल कर देखना चाहिए—और साथ मे यह भी इच्छा व्यक्त की—अब लग राव धरा सब षाई। देह छोडि कै लेहु लराई॥

३. इस समय अलवर तथा जयपुर दोनों ही स्थानो पर 'प्रतापसिंह' नाम के अधिपति थे। सवत् १८३५ मे पृथ्वीसिंहजी का अल्पावस्था मे ही देहावसान हो गया और उनके पश्चात् उनके छोटे भाई प्रतापसिह गद्दी पर बैठे। ये सवाई प्रतापसिहजी कहलाये और इनका शासनकाल १८८० वि० तक चला। अलवर और जयपुर दोनों स्थानो पर एक ही नाम के अधिपतियो से कहीं कहीं भ्रम हो सकता है। कवि ने इस बारे मे काफी सावधानी बरती है। अलवर के प्रतापसिह—'रावप्रताप' 'पातिलराव' आदि नामों से सबोधित किए गए हैं और जयपुराधीश—'राजप्रताप,' 'पातिलराज,' 'भूपप्रताप' आदि नामों से। 'राव' और 'राजा' का समुचित ध्यान रखने से भ्रम का निवारण हो जाता है।

लघुता ते दीरघ भये, निमष हमारो षाय।
दो हरांम साम्हे परे, श्रा तन श्राड़ी श्राय ॥

भारी फौज लेकर राव प्रतापसिह सामना करने चले। हल्दिया बधु घबरा गए श्रौर पत्र लिखा—

श्राये दल बल सबल सजि, धके राव परताप।
हम बल की श्रब बात नैं, सलाह श्रापनो श्राप ॥

उत्तर-मे जयपुर-नरेश ने बहुत-सी फौज भेजी। इस बडो सेना का सामना करने मे राव प्रतापसिह श्रसफल रहे—

षिसे राव पातल कटक, जीते नृप दल जोय।

भाई-बधुश्रो से परामर्श करने के बाद यह निश्चय रहा कि राजगढ लौट चलना चाहिए। इस सलाह को मानकर प्रतापसिंह राजगढ लौट श्राए—

'ताते सल्हा एक यह कीजे। चलन ठांम राजगढ़ कीजे ॥
राज राजगढ राजई, पहोंचे राव प्रताप।
तब हलकारा षत दिये, सुणी भूप परताप ॥

महाराज प्रतापसिंह की ६०,००० फौज ने हमला किया। मार्ग मे सैथल नाम का एक गढ फतह करते हुए बसवा पहुँचे। यहाँ बसवा को 'सहर की सज्ञा दी गई है। श्राजकल बसवा एक साधारण कस्बा है। वहाँ पहुँच कर राजा ने खुशालीराम को युद्ध-सचालन की श्राज्ञा दी—

बसवो सहर सुनाम ठांम भूपति दल श्रायव।
नाम षुस्यालीराम निकट वर भूप बुलायब ॥
कहै श्रैन मुष बैन कहो जब श्रब प्रमान करि।
लैं फौजे पचरग सगि लडि लेहु राव धर ॥
सुनत वचन मंत्री उठे करि सलाम भरि वहो बलन।
बजि त्रमाट विराट वर दिस पूरब कीनो चलन ॥

मार्ग मे पडने वाले स्थानो को सर करते हुए चले। ये बातें राव प्रतापसिंह ने भी सुनी श्रौर साथ मे बहुत-सी सेना लेकर युद्ध के लिए प्रस्तुत हुए। समाचार मगलसिंहजी को भी मिला श्रौर वे महाराज प्रतापसिंह से मिलने चले—

मिलिये मगल जाय भूप श्रादर श्रति कीनब।
पातिल राज प्रताप श्राप श्रासन उठि दीनब ॥

मंगलसिंह की बातो से राजा प्रतापसिह प्रसन्न हुए श्रौर कहा—

षुसी हुए नृप बचन सुनि, बहुरि जुवाब यों दीन।
देषन आए राजगढ़, देषि कहो सो कौन॥

'राजगढ तो हम देखेंगे ही[१]', और उस ओर प्रस्थान किया। थोडी लडाई भी हुई, परिणाम कुछ नही निकला—

रची राडि यतै वतै जुध भारी।
न को कोय चोते न को आत हारो॥
किले रावराजा करी यो लराई।
जुटी भूप फौजै सु बाजी न पाई॥

अंत मे राजा ने षुस्यालीराम को बुलाकर कहा—राव प्रतापसिंह राज्य की अर्गला है, वह अपने घर मे चैन से रहे। और अब—

बचन सला के अब लिष दीजै। राव कहै सोही तुम कीजै॥
दलन चलन जैपुर दिस होई। कीजो राव कहै अब सोई॥

राव प्रतापसिंह ने स्वीकार कर लिया और राजा के स्वागत[१] की तैयारी की[२]।

इस स्थान पर 'कवर वषतेस' का नाम आता है। राव प्रताप के कोई पुत्र नही था, किन्तु उन्होंने अपने जीवन-काल मे ही थाना के बख्तावरसिंह को गोद ले लिया था। ये ही प्रतापसिंह के पश्चात् अलवर के अधिपति हुए। कँवर वख्तावरसिंह को राजा की सेवा मे भेजा गया और राजा प्रतापसिंहजी ने—

दीये बाजि गजराज सब सिरोपाव घर राज।
राज कवर को सीष दी नरपति करी निवाज॥

नवम प्रभाव : राजकँवर वखतेश राजगढ लौट आये और महाराज प्रतापसिंह ने जैपुर की ओर कूच किया।[३] सवाई प्रतापसिंह ने स० १८८० वि० तक शासन किया और वख्तावरसिंहजी स० १८७१ वि० तक अलवर की गद्दी

---

१. राजा ने यही कहा था—'देषन आए राजगढ'।
मत्री ने भी यही लिखा—'भूपति आये धारि आरि मिलिये सवेग अति' और परिणाम भी इसी प्रकार हुआ—

'चाय भाय भूपति मिले, नृपति षुसी की नीति।
बासाये साम्ही सुरति, राजकवर की रीति॥

२. किन्तु इससे पहले यह तै हुआ कि 'मिलणो राजकवार को, भूपति के दरबार' अधिक उपयुक्त है।

३. राजकँवर राजगढ़ आये। बहोरि भूप दल कुच बजाये॥

पर विराजे। ये दोनों समकालीन थे।[1] इसी बीच किसी ने आमेरपति से 'हल्द्या मंत्री' की शिकायत की कि वे अलवर से मिले हुए हैं। राजा ने तीनों भाइयो को बुलाया और फौरन कद करने का हुक्म दिया।

देषत भूप दीने हुकम कारंदा कर कैद किय।
आदि थांन आमेरगढ़ विकट ठाम घर घर दिये॥

राव प्रतापसिंह को भी समाचार मिला। ये तो उन्हे हमेशा अपना ही समझते थे समाचार सुनते ही कहने लगे—

'काके हलद्या कोन नृप, पड़े फंद कहां जाय।'

और

बालिक जिम पाले त्रहु भाई। लघुता ते मैं किये बड़ाई॥
मेरे मेरे नांय विकानें। दोय परा दिस च्यार री जानैं॥

---

१ अलवर के बख्तावरसिंह और जयपुर के प्रतापसिंह दोनों ही कवि थे। बख्तावरसिंह ने कृष्ण की लीलाएँ लिखीं और प्रतापसिंह ने तो 'व्रजनिधि' नाम से अत्यन्त सरस रचनाएँ कीं। प्रतिभा की दृष्टि से दोनों ही काव्य-क्षेत्र मे अच्छे स्थान के अधिकारी हैं। प्रतापसिंह के काव्य पर काम किया जा चुका है। बख्तावरसिंहजी की कुछ कृतियाँ मुझे अपनी खोज मे प्राप्त हुई थीं। इनका कविता-काल १८५० समझना चाहिए। 'दानलीला' और 'श्रीकृष्णलीला' दो पुस्तकें विशेष महत्त्वपूर्ण हैं, जिनमें कृष्ण और राधा के नख-शिख तथा क्रीड़ा का वर्णन किया गया है। कुछ पद्य देखिए—

मंगलाचरण— विघन हरन मगल करन, दुरद वदन इकदंत।
परस घरन असरन सरन, बुद्धि देव वर वंत॥

विनम्रता—काव्य रीति समुझौं नहीं, है मेरी मति मंद।
मैं तौ कछु जानौं नहीं, तुम जानौ गोविन्द॥

राधा के नख-शिख से चमकत चोप चार चित चोषी।
दमकत दामिनि दुति दुइ पोंची॥
कानन कुंडल कनक कलित है।
चारु तरोना चपल चलित है॥

उद्दीपन मे वन-वृक्ष-पक्षी आदि—

तमाल ताल जाल और साल भांति भांति हैं।
फरास वास पास जो पलास पांति पांति हैं॥
सिंगारहार झार तू तपादरा उदार है।
सुवर्ण जूथिका जुही जुही सुडार डार है॥
बोलें कपोत केकी कुलंग। कोकिला कीर सारों सुरंग॥
चातक सु चाष चंडूल चार। षगराज ष्वाल षजन अपार॥

विशेष विवरण के लिए 'राजस्थान प्राच्य विद्या-प्रतिष्ठान' द्वारा प्रकाशित मेरा 'मत्स्य प्रदेश की हिंदी-साहित्य को देन' नामक शोध-प्रबन्ध देखें।

ज्याये तो मो हथ ही, मारूं तो मो हथ।
मो जीव तब न मारि है, नीढ़ि आमवत नथ॥

और हमदानी नवाब[1] को पत्र लिखा कि फौरन सेना सहित आओ। वह शीघ्र ही आ गया और दोनो की फौजे मिलकर जयपुर की ओर चली। राजा ने समाचार सुनते ही दरबार किया, परामर्श किया गया। निश्चय हुआ कि तीनो भाइयो को कैद से बुलाया जाय। आने पर—

अति महैमा मनुहार करि, कीनौ आदर भाव।
तिहुं बंधुन को त्रपति नर, पहराये सिरपाव॥

राजा ने सारा भार इन्ही पर छोड दिया।[2] ये लोग भी युद्ध को तैयार हो गए, किन्तु जयपुर की सेना जम नही सकी।[3] इसी बीच पटेल सिंधिया भी आ मिला और राव प्रताप की शक्ति बहुत बढ गई। निदान जयपुर ने जोधपुर को पत्र लिखा।[4] विजयसिंहजी राजा थे, उन्होंने शीघ्र ही अपनी सेना को हुकम दिया—

परतापराज आमैरिपति मिलो वेगि ता दलन तुम।

जयपुर और जोधपुर की सम्मिलित सेनाओ ने प्रस्थान किया। उधर सिंधिया पटेल व दक्षिणी सेना सहित राव प्रतापसिह तैयार थे। परन्तु खुशालीराम ने एक चाल चली। वह दिल्ली की सेना मे पहुँचा और अहमदानी से मिला।[5] नवाब प्रसन्न हुआ, कहने लगा—तुमने अच्छा किया जो यहाँ आए।[6] मन्त्री खुशालीराम कहने लगे—आपने इधर आने का कष्ट क्यो किया ? जो कुछ लेना हो, मुझसे ले लो और

१ 'अहमदान नवाब' नजफखां के ४ सेनानायकों मे सबसे अधिक धूर्त्त था। इसका पूरा नाम मुहम्मद बेग हमदानी था। यह मुगल सल्तनत के मीर बख्शी मिर्जा नजफखां का बड़ा कृपापात्र था। यह जितना चतुर था, उतना ही धूर्त्त। इसके नीति-नैपुण्य और युद्ध प्रियता के कारण मिर्जा नजफखां की मृत्यु (सन् १७८२ मे) होने पर उसके अधिकाश अनुयायी इसके साथ हो गए)।

२ नरेस पेस लै यौं फुरमाई। कीनी ते करतार कराई॥
ये आये दिली दल भारी। यह मन्त्री है वार तिहारी॥

३. समं राव मन्त्रीस कीनी लराई। षिसी राज की फौज तर ताप पाई।

४. दल दिषणो वल सवल जाणि आमैरिनाथ नर।
मुरधरपति को लिषे लेहु पत येहु वचि वर॥
हम घर तुम घर दाय आय यन कियो दुद दल।
हम दल तुम दल सगि होय भजैस मारि षल॥

५. करि सलाम मन्त्री उठे स्याम काम कीनो चलण।
नाम षुस्यालीराम ते पहोंचे दिल्ली दलन॥

६. अहमंदान नवाव सू, मिलिये मन्त्री जाय।
हंसि नवाब जैसे कहौ, भली कीन तुम आय॥

दिल्लो की ओर प्रस्थान करो—

बोले मत्री वचन सुनाये। कौन काज तुम या घर आये ॥
लॅंण होय सो मोसुं लीजे। वहोरि कूच दिलो दिस कीजे ॥

नवाव हँस कर कहने लगा—

जव नवाव असे कही, देहु लेहु नहीं दाम।
काम षुस्यालीराम सू, सदा षुस्याली राम ॥

मत्री ने कहा, आप जो कहे, मै करने को तेयार हूँ। नवाव ने खुशालीराम से दिल्ली चलने का प्रस्ताव किया और मत्री तैयार हो गए। राव प्रताप भी साथ गए और—

गनीम मारि कीनो गरद, मिटे दिली दुष दंद।
राव लगे पतिसाह पग, दियो तषत सिर कद ॥

वादशाह ने भी वहुत सम्मान किया और—

सिर सोहन सिर पेंच दिय, जटत किलंगी हमाल।
सपत पारचे षिलत दिय, अरु समसेर दुसाल ॥

कुछ समय उपरान्त रावराजा ने दिल्ली से प्रस्थान किया और अलवर पहुँचे। किन्तु उन्हे चैन कहाँ ? आते ही जयपुर को पत्र लिखा—

रावराज अलवर गढ़ आये। षत भूपति कौं दिये पठाये ॥
(ये)पत बचि नृपति अब लीजै। दैन कहे गढ च्यारिस दीजै ॥

राजा को वहुत क्रोध आया और उत्तर देने की अपेक्षा अपनी सेना को उधर भेजा। हलकारो ने समाचार दिया कि राजा को वहुत वड़ी सेना लछमनगढ पर पडी हुई हैं। रावराजा ने फौरन ही चढाई की आज्ञा दे दी—

चढो वेग ही सो सवै फौज सजो।
पगै मारि जा भूप की फौज गजो ॥

मगलसिह भी आ मिले, किन्तु दक्खिन के दल मे फूट पड गई।[1] सिंधिया पटेल ने काफी कोशिश की पर सामना न कर सके और आमेरनाथ की विजय हुई। हार कर पटेल सिंधिया प्रताप के पास पहुँचा, उन्होने वहुत धैर्य वँधाया[2], कहा—'तुम

---

१. फिरि गई पूठि दिषणी दलान।
२. वर पातिल बोले वचन, रहो पटैल मन सेर।
जीत हार करतार हथ, करत न लागै देर ॥

यही रहो और इस स्थान को अपना ही समझो।' इस प्रकार पटेल की सेना अलवर मे आई। राजणोत आदि अनेक गढो को अपने अधिकार मे किया।

अन्त मे राव प्रतापसिंह का समय आ गया। कवि लिखता है—

धर अमर नर कोन रहायो। आयो गयो गयो फिरी आयो॥

'इस पृथ्वी पर अमर कौन रहा है ?' यहाँ तो आवागमन लगा ही रहता है।[1] कवि ने अन्त बडा ही शान्तिपूर्ण दिखाया है—

रावराज यौं वचन कहै, धरो चरन निज ध्यान।
पहर प्रात बैकुंठ धर, पातिल कियो पयांन॥

'कहर' पड गया। नर-नारी व्याकुल हो गए, किन्तु राजपूत रमणियो का शौर्य देखिये—

उर अनंद बीकावत राणी। सपत जनम अरधंगा जाणी॥

तथा—

सोला ओर बत्तीस सजी, मन कर अनत उमंग।
सती सकति बीकावती, जरीस पातिल संग॥

बख्तावरसिंह का राजतिलक हुआ।

कवि-परिचय

प्रस्तुत पुस्तक मे कवि ने अपना परिचय नही के बराबर दिया है। प्रसगवश इस पुस्तक मे प्रथम प्रभाव का चौथा छद—एक छप्पय, तथा नवम प्रभाव के अतिम दो छद—एक छप्पय और दूसरा एक दोहा, द्वारा ही कवि के सबध मे कुछ बाते जानी जा सकती हैं। ये तीनो छद भी—दो छप्पय और एक दोहा—कवि ने अपने परिचय हेतु नही लिये हैं, वरन् पुस्तक लिखने का हेतु तथा अपनी अज्ञता बताने के लिए ही लिखे हैं। प्रथम प्रभाव का छप्पय इस प्रकार है—

तास तात के बंधु कवर मंगल व्रत धारिय।
जिन दीनो बल हुकम कहो कवि ग्रंथ उचारिय॥

---

१ कहा कैरु जरजोध कहां पांडों रु पंचधर।
कह विक्रम कहा भोज कहां बलि दान करन कर॥
कहां चकवं मंडली कहा रावण बलवता।
हटवारं ज्यो हरषि आय चलि गये अनंता॥
यों कहैं रावराजा वचन, मंत्री बन्धुन तास वर।
मिटं न लिषीयौ लाष बुध जो करणी करतार कर॥

अठारैसै संतीस साष संवत सो ह्वैयत।
पोष मास वदि तीज वार विसपत गुरु कहियत॥
चौपई छंद दोहा छपै, कथि जाचिग जीवन नाम है।
जुगम जोय वरनन करूँ जो कूरम कुल ठाम है॥

इस छुप्पय से नीचे लिखी बातो का अनुमान लगाया जा मकता है—

(१) कवि का नाम 'जाचीक जीवरण' है। इसमे तनिक भी सदेह नही कि कवि का नाम यही था। पुस्तक के आरम्भ तथा प्रत्येक 'प्रभाव' के अन्त मे यह नाम दिया गया है। हाँ, इस नाम को विभिन्न स्थानो मे विभिन्न प्रकार से लिखा गया है—

पुस्तक के आरभ मे—'जाचिग जीवन'
पुस्तक के अत मे—'जाचीक जीवरण' (अलवर-म्यूजियम की प्रति मे)
'जाचिक्र जीवरण' (श्री रमानन्द वाली प्रति मे)

प्रथम प्रभाव के अत मे—'जाचिग जीवरण'
द्वितीय ,, ,, — ,,
तृतीय प्रभाव के अत मे—'जाचीग जीवरण'
चतुर्थ प्रभाव के अत मे—'जाचिक जीवरण'
पचम् प्रभाव के अत मे—'जाचिक जीवरण'
षष्ठ प्रभाव के अत मे— ,,
सप्तम् प्रभाव के अत मे— ,,
अष्टम् प्रभाव के अत मे—'जाचीक जीवरण'

'जाचीक जीवरण' अथवा 'जाचिक जीवरण' की आवृत्ति अधिक हुई है, अतः इसी प्रकार नाम होना चाहिए। मैने इन्हे 'जाचीक जीवरण' नाम से सबोधित किया है।

नाम की वर्तनी मे (क) ह्रस्व-दीर्घ का अतर—जाचिक, जाचीक
(ख) अघोप-सघोष का अतर—'क' 'ग' का अतर
(ग) 'रण' 'न'-जीवरण, जीवन

दो वाते विशेष उल्लेखनीय हैं। ह्रस्व-दीर्घ का विभेद लिपिकार ने वहुत कम किया है और इसीलिए कही इकार तथा कही ईकार मिलते हैं। अघोष का सघोष तथा सघोप का अघोष होना ध्वनि-परिवर्तन नियमो के अतर्गत हैं। 'न' और 'रण' मे विभेद कम पाया जाता है। राजस्थानी मे 'न' को 'रण' काफी लोग

अब भी बोलते है, अत 'जीवन' का 'जीवण' होना नितान्त स्वाभाविक है। अत कवि का नाम 'जाचीक जीवण' अथवा 'जाचिक जीवण' था।

'जाचिग' शब्द का प्रयोग एक स्थान पर कवि ने और किया है—

जाचिग दसौं देस के आई। आये जुड़ जाचन कू जोई॥

(चतुर्थ प्रभाव)

यहाँ 'जाचिग' का प्रयोग बहुवचन मे हुआ है और इसका संबध संस्कृत के 'याचक' से है। इनके आने का कारण 'जाचन'—याचना करना बताया गया है। सभव है, इनका नाम इसी 'याचक' शब्द से सबधित रहा हो। किन्तु इस विषय पर अधिक खींचतान करना कोई विशेष उपयोगी नही होगा।

इस नाम की आकृति देखकर और उसके अर्थ पर भी किंचित् विचार करते हुए राजस्थान प्राच्यविद्या प्रतिष्ठान के उप-निर्देशक श्री गोपाल नारायणजी बहुरा का मत है कि जाति से ये राणा ढोलिया रहे होगे। वैसे भी कवि अपने को किसी उच्च वश का नही कहता। जाचिक जीवण की स्थिति ऐसी महत्त्व की अवश्य थी कि कुवर मगलसिंह ने उनसे ही काव्य-रचना करने का अनुरोध किया।

(२) संवत् १८३७ तक कवि की प्रतिभा प्रकाश मे आ चुकी थी। इसीलिए कँवर मगलसिंह ने उन्हे 'कवि' नाम से सबोधित करते हुए 'प्रतापरासो' लिखने की आज्ञा दी। वैसे भी कवि की गतिशीलता देखकर यही प्रतीत होता है कि काव्य-क्षेत्र मे इनकी पहुँच हो चुकी थी। एक सभावना यह भी हो सकती है कि जाचीक जीवण कँवर मगलसिंह के आश्रित थे—

(क) कवि ने मगलसिंह के आदेश पर काव्य-रचना की।

(ख) प्रसगानुकूल मगलसिंहजी की बहुत प्रशसा की गई है। उन्हे न केवल वीर ही बताया गया है, वरन् नीतिज्ञ भी। जब कभी प्रताप पर सकट आया, मगलसिंहजी उपस्थित हुए।

(ग) 'काका कन्ह प्रवान' कहकर कवि ने अपनी सम्पूर्ण श्रद्धा व्यक्त कर दी है।

(३) कवि का काव्य-काल १८३७ से बहुत पहले शुरू हुआ होगा। भाषा, भाव, व्यग्य, ध्वनि, अलकार आदि की दृष्टि से प्रताप-रासो एक अच्छी रचना है। सभवत. १०, १२ वर्ष से कवि कविता करते रहे होंगे। पुस्तक मे १८४७ तक की घटनाओ का वर्णन है। अत इन दस सालो मे जहाँ कवि का 'प्रतापरासो' चलता रहा होगा, वहाँ अन्य कृतियाँ भी रची होगी, किन्तु उनका

कोई पता नही चलता। हाँ, १८४७ तक कवि अवश्य ही विद्यमान थे और कुछ समय तो और रहे होंगे, अत' इनका कविता-काल १८२५ से १८५० तक माना जा सकता है।

अतिम छप्पय और दोहा इस प्रकार हैं—

छप्पय : वरन हीन कुलहीन जाति आधीनवांन अति।
उर विचारि यों धारि अंक ये किये जोर वित॥
लघु दीरघ नही लहे चले सो कहो निगम गम।
मो मति अति अनुसार वार ये कहे वुधि सम॥
अरदास पतो कविजन सुनो जानौं नाहि न पूर कम।
लीजे सवारि कीजे क्रपा कवि पडित परवीन तुम॥

दोहा : मैं सिष हौं तुम चरन को, आठौं जाम अधीन।
परु पाय परनाम करि, कवि पडित परवीन॥

इन पक्तियो से जीवन-सामग्री तो कुछ नही मिलती, इनसे कवि की विनम्रता मात्र लक्षित होती है।

(१) 'वरन हीन कुल हीन ···· ' आदि के आधार पर कहा जा सकता है कि ये अद्विज थे और इनका कुल भी कोई विशिष्ट स्तर का न था। इसी के आधार पर, जैसा मैंने पहले कहा, कुछ लोग इन्हे राणा ढोलिया कह सकते है। इनका नाम भी कुछ इसी प्रकार का सकेत करता है। परन्तु ये सब कवि की अत्यन्त विनम्रता के द्योतक भी हो सकते हैं। तुलसी ने भी कहा था— 'मेरे जाति पाति न · · ·'

(२) 'लघु दीरघ नही लहै ···· ', 'जानौ नाहि न पूर कम' आदि से पता लगता है कि इन्होने काव्य-सिद्धान्तो का अध्ययन किया था और छद-शास्त्र से परिचित थे। लघु-दीरघ का जो दोष इनकी कविता मे मिलता है, वह लिपिकार का दोष ज्ञात होता है अथवा तत्सबधी उदासीनता।

(३) जाचोक जीवरण कवियो के परम भक्त हैं—जैसा कि अन्तिम दोहे से प्रतीत होता है। कवि की अटूट श्रद्धा लक्षित होती है। इसी के आधार पर यह भी कहा जा सकता है कि कवि की गरणना उस समय के प्रतिष्ठित कवियो मे रही होगी।

पुस्तक के आधार पर कवि की स्वभाव-सम्बन्धी कुछ वाते कही जा सकती हैं—

(अ) साधारणत, कवि विनम्र स्वभाव का है और कलाकार तथा पडितो के प्रति उसकी बहुत श्रद्धा है। अपने दोष स्वीकार करने मे उसे किसी प्रकार की आपत्ति नही है, और अपने को बढा-चढाकर कहना तो उसकी वृत्ति के नितान्त प्रतिकूल है।

(आ) दरबारी कवि होते हुए भी कवि का तथ्य-कथन वास्तविकता से दूर नही जाता। घटनाएँ, स्थान, समय आदि के निर्देश निश्चित रूप से असदिग्ध हैं। साथ ही कवि अपने भावो को व्यक्त करने मे पक्षपात-रहित प्रणाली स्वीकार करता है। कुछ उदाहरण—

१. अलवर, डीग, कुम्हेर, आमेर, गजगढ, बसवा, डेहरा आदि नगरो का वर्णन करने मे कवि ने यह कभी नही सोचा कि ये स्थान अलवर राज्य के हैं अथवा अन्य राज्यो के।

२ व्यक्तियो के वर्णन मे भी यही दृष्टिकोण है। हल्दिया बन्धुओ का वर्णन ही लीजिए। उनकी वीरता तथा राजनीतिक चातुरी की प्रशसा भी की है और साथ ही उनकी कपट-नीति पर 'हराम' आदि शब्दो से रोष भी प्रकट किया है। जब भी ये लोग अपनी स्वामिभक्ति से विचलित हुए, कवि ने उन्हे क्षमा नही किया।

३ युद्ध मे वीरता का वर्णन करते हुए सभी वीरो को समुचित स्थान प्रदान किया है—ये चाहे अलवर के हो, जयपुर के, भरतपुर के अथवा दिल्ली के मुसलमान व दक्षिण के मराठे हो। सिंधिया आदि के वर्णन भी इसी नीति के अनुसार है।

(इ) कवि उस समय की दरबार-परम्परा से पूरी तरह परिचित था। राजाओ का आपस मे मिलना, खिलत आदि प्रदान करना, फौज की तैयारी, कूच का सामान आदि सभी का वर्णन युक्तियुक्त है।

(ई) युद्ध-कौशल से भी कवि परिचित था। छत्तीस क्षत्रिय-कुलो के नाम, युद्ध मे काम आने वाले विविध अस्त्र, फौज की तैयारी के समय अनेक सकेतो का देना, व्यूह-रचना, घेरा डालना, पडाव आदि के विस्तृत चित्र उपस्थित किए हैं।

(उ) जयपुर, अलवर, भरतपुर, दिल्ली, मरहठा राज्य—कवि ने सभी का अनुशीलन किया। वहाँ जो भी क्रिया-कलाप चला, उससे कवि ने

अपने को परिचित रखा और यथा-स्थान अपनी पुस्तक में उनका उल्लेख किया। पुस्तक-रचना स० १८३७ में प्रारम्भ हुई और स० १८४७ मे समाप्त। इन दस वर्षो मे जो भी ऐतिहासिक घटनाएँ हुई तथा जिनका सम्बन्ध प्रतापसिहजी से रहा, उनका विधिवत् उल्लेख किया गया है।

ऐतिहासिकता

प्रताप-रासो मे नौ प्रभाव हैं और प्रत्येक प्रभाव मे केवल एक ही महत्त्वपूर्ण घटना की चर्चा की गई है, जिससे कवि की प्रबन्ध-पटुता विदित होती है—

१. प्रथम् प्रभाव — माधवसिहजी की सेवा से राव प्रताप का पृथक् होना,
२. द्वितीय प्रभाव— प्रतापसिह का भरतपुर-राजा की सेवा मे रहना,
३ तृतीय प्रभाव— मावडा युद्ध,
४ चतुर्थ प्रभाव — राजगढ-स्थापना,
५. पचम् प्रभाव — नजफखा के साथ दिल्ली की सेवा मे,
६. षष्ठम् प्रभाव — लछमनगढ की लडाई,
७ सप्तम् प्रभाव — प्रतापसिह की सुदृढ स्थिति,
८. अष्टम् प्रभाव — जयपुर-राजगढ के अच्छे सम्बन्ध, और
९ नवम् प्रभाव — प्रताप का स्वर्गारोहण।

(अ) इन सभी घटनाओ मे जो मूल बाते हैं, जैसे कि प्रतापसिह का (१) जयपुर नरेश, (२) भरतपुर नरेश, (३) बादशाह शाहआलम द्वितीय की सेवा मे अपना कुछ समय व्यतीत करना—वे सभी इतिहास-सम्मत हैं और इनके विपरीत किसी भी स्थान पर कोई बाते नही मिलती। इतिहास के अनेक विद्वान्, पिछले रिकार्ड, जयपुर का इतिहास, जाट-जाति का इतिहास तथा तत्सम्बन्धी खोजे सभी इस बात की पुष्टि करते हैं।

(आ) प्रतापसिह को जयपुर-नरेश तथा दिल्लीपति ने उपाधि[1] तथा सम्मान प्रदान किए। इसी प्रकार का उल्लेख सभी स्थानो पर मिलता है।

---

१. मुगल सम्राट द्वारा 'राजा बहादुर' का पद दिए जाने वाला परवाना इस प्रकार है—
"... प्रतापसिह वल्द मोहब्बतसिह मनसबे पंच हजारी जात व पच हजारी सवार व खिताबे राजा बहादुर व अताये आलम व नक्कारा सर अफराज शुद वाके ५ दहम शहर ..."

(इ) प्रतापसिहजी ने अनेक किले अपने अधिकार में किए, राजगढ का किला, महल, भवन, बगीचे आदि बनवाये—इनकी पुष्टि भी हो जाती है।

(ई) कुछ तिथियाँ—पुस्तक मे नीचे लिखी तिथियो का उल्लेख है—

१. अठारैसै सैतीस—(स० १८३७) यह रचना का प्रणयन-काल है, जब प्रतापसिहजी राजगढ पर राज करते थे और उनके काका मगलसिंह उनके पास रहते थे। प्रतापसिह का शासन-काल स० १८१३ से सं० १८४७ तक बताया गया है। (प्रथम प्रभाव)

२ सवत् १८२४ (सम चौबीसै साल) चतुर्थ प्रभाव—माधवसिहजी का देहावसान-काल। "सम चौबीसै साल काल माधव महीप किय" इतिहास-प्रसिद्ध तथ्य है कि माधोसिह प्रथम का राज्य-काल १८०२ वि० से १८२४ है। इनके पश्चात् इनके पुत्र पृथ्वीसिंह (पीथल) गद्दी पर बैठे।

३ स० १८३२ (अठारैसै बत्तीस साष सवत परवानन)—पचम् प्रभाव। अलवर लिए जाने की सुप्रसिद्ध तिथि। पहले अलवर का किला भरतपुर की अमलदारी मे था। मुगलो को सहायता देने के फलस्वरूप जब आगरा जाटो से खाली करा दिया, तो अलवर प्रतापसिह ने लिया।

४. अठारैसै पैतीस स० १८३५ (लछमनगढ की लडाई)—षष्ठम् प्रभाव। "लछमनगढ रासा" भी इसी तिथि का प्रतिपादन करता है[1]। इतिहास भी यही कहता है कि स० १८३५ मे नजफखाँ ने लछमनगढ घेरा, किन्तु परिणाम अनुकूल नही निकला।

५. अठारैसै षटतीस (स० १८३६)—सप्तम् प्रभाव। राव प्रताप का नजफखाँ को छोड़कर राजगढ लौटना। इस तिथि का इसी रूप मे प्रतिपादन कविराजा श्यामलदास ने अपने "वीर विनोद"

---

१. "लछमनगढ रासा" षुसाल कृत—

लछमनगढ अलवर के अतर्गत रहा, जहाँ का वश-वृक्ष इस तरह चलता है—उदैकरन, वरसिह, नरूसाहि, लालोजी, उदैसिह, लाडषा, फतेसिह, कलियानसिह, अनदसिह, तेजसिह, जोरावर, मोहब्बतसिह, प्रतापसिह सं० (१८१३-१८४७), बख्तावरसिह (१८४७-१८७१), विनयसिह स० (७१-१९१४), शिवदानसिह (१९१४-१९३१), मंगलसिह (१९३१-१९४६), जयसिह (१९४६-१९९४), तेजसिह (१९९४-)।

मे किया है—"विक्रमी स० १८३६ के लगभग उसने (प्रतापसिंह ने) नजफखाँ, बादशाही मुलाजिम के पजे से निकल कर लछमनगढ का ग्रासरा लिया।"

तिथियाँ तो केवल इतनी ही दी हैं, किन्तु जिन घटनाओ का वर्णन किया गया है, उनका क्रम इतिहास से प्रतिपादित होता है। प्रमुख घटनाओ का विवरण पहले ही दिया जा चुका है।

प्रताप रासो मे आए हुए प्रमुख व्यक्तियो के नाम इस प्रकार हैं :

१ कँवर मगलसिंह—प्रतापसिंह के काका। युद्ध-कुशल, राजनीतिज्ञ, अन्य राजाओ द्वारा मान्य।

२. (अ) प्रतापसिंह—राजगढ के रावराजा प्रतापसिंह। राज्यकाल १८१३ से १८४७ वि०। स० १८३२ से अलवर-अधिपति।

(ब) सवाई राजा प्रतापसिंह—आमेरपति, राज्यकाल १८३५-१८८० वि०

३. छाजूराम—प्रतापसिंह के मन्त्री, हल्दिया वधुओ के पिता।

४. खुशालीराम, दौलतराम, नदराम—हल्दिया वधु।

५. माधवसिंह—आमेर-अधिपति, स० १८०९ से १८३४ वि०।

६ गजसिंह—बीकानेर के अधिपति, स० १८०२ से १८४४ वि०।

७ सूरजमल--भरतपुराधीश, स० १८२० मे परलोक सिधारे।

८ जवाहरसिंह—सूरजमल के पश्चात् भरतपुर के राजा।

९. विजयसिंह—जोधपुर-नरेश, राज्यकाल १८०९ से १८४४ वि०।

१०. हरसहाय, गुरुसहाय—मावडा-युद्ध मे जयपुर की ओर से लडे और काम आये।

११. दलेलसिंह—धूला के राव, तीन पीढियो सहित युद्ध मे मारे गए।

१२. सदाशिव भट्ट—जयपुर के युद्ध-सधि विग्राहक।

१३. समरू—फ्रासीसी तोपची, भरतपुर राज्य की सेवा में था। मावडे की लडाई मे भरतपुर का सेवक।

१४. नजफखाँ—अलीगोहर-शाहआलम द्वितीय का प्रमुख सेनापति, राजस्थान के अनेक युद्धो मे भाग लेने वाला। भरतपुर, जयपुर, अलवर आदि के राजाओ से सपर्क।

१५. हमदानी—मोहम्मद बेगखाँ हमदानी, नजफखाँ का प्रमुख सहायक।

१७. पटेल सिंधिया—सभवत माधोजी सिंधिया, जो इतिहास के अनुसार जयपुर से हार कर अलवर की शरण मे रहा और कुछ दिनों बाद चला गया। प्रतापरासो मे भी यही वृत्तान्त आता है। माधोजी नाम नही मिलता। 'हलद्याजी की हाक सो सिंध्या भाग्यो जाय' अब भी प्रचलित है। जयपुर द्वारा सिंधिया का बुरी तरह हराया जाना प्रसिद्ध है।

१८. रावसेवक, मोजीराम, जीवनषाँ, शेख होशदारखाँ—रावप्रताप के सेनानायक तथा मुसाहिब।

१९. नवलसिंह—भरतपुर-नरेश के अभिभावक सन् १७६८ से १७७६ ई० तक। कवि ने इन्ही को राजा माना है।

२०. अनूपगिरि गोसाई—लछमनगढ मे नजफखाँ के साथ उस समय का एक अवसरवादी राजनीतिज्ञ।

२१. वस्तावरसिंह—अलवर के दूसरे नरेश, समय सन् १७९० से १८१४ तक (१८४७-१८७१ वि०)।

२२. रतनराय तथा रोडाराम षवास—जयपुर-नरेश के दो प्रमुख मत्री। खवासजी की वडी हवेली अभी तक जयपुर मे है।

२३. रानी बीकावती—राव प्रतापसिंह की रानी। पति के साथ सती हो गई।

२४. राजसिंह व फीरोजखाँ—आमेर-नरेश से मिलकर राव प्रताप से लडे।

२५. चावडदान—चारण—'चारण चाहि चावडदान' युद्ध मे भाग लेने थानागाजी छोड कर गए और रावराजा का साथ दिया। थानागाजी मे जागीरदार।

उक्त सभी नाम ऐतिहासिक हैं। कल्पित नाम एक भी नही मिलता।

इमी प्रकार स्थानो के नामो का भी इतिहास के द्वारा प्रतिपादन होता है। कुछ नाम इस प्रकार हैं —

१. अजुध्या—कछवाहो का आदि स्थान—'आदि अजुध्या धाम है'।

२. काशमीर—कछवाहो की जो तोन शाखाएं चली, उनमे एक

काश्मीर मे भी है[1]।

३. ग्वालियर नरवर—'सिवर ग्रप ग्वालेर नलस नरवल निकासै।'

४. ढुढाहड—आमेर देश 'धरा ढुढाहड'।

५. आमेर—'प्रथम पुत्र नरसिंह नृप आमैरि वषानिय'।

---

१. संवर के इतिहास से—

१ नारायण, २. ब्रह्मा, ३. मरीचि,······ ६८. राम, ६९ कुश, ७०. अतिथि, २०३ पद्मपाल, २०४ भीमपाल, २०५. नयपाल, ··· २२५ सुमित्र, २२६ मधुब्रह्म, २२७ कान्हीक, २२८ देवोन्हीक, २२९. ईशोसिंह, २३०. सोढदेव, २३१ दूल्हेराय, २३२ काकिलजी, २३३ हणूजी, २३४. जान्हडदेव, २३५ पजवनजी, २३६ मलेसीजी, २३७ बीजलदेव, २३८. राजदेव, २३९ कील्हणदेव, २४०. कुन्तलजी, २४१ जोणसीजी, २४२ उदयकरणजी

	जयपुर	अलवर	जम्मू
२४३	नृसिंहजी	वरसिंहजी	
२४४	बनवीर	महीराज	
२४५.	उद्धरण	नरूजी	
२४६	चन्द्रसेन	लालोजी	
२४७	पृथ्वीराज		
२४८.	पूर्णमल	उदयसिंह	
२४९.	भीमसिंह	लाडसिंह	
२५०.	रत्नसिंह		
२५१.	आसकर्ण	फतेसिंह	जगमालजी
२५२	भारमल	कल्याणसिंह	रामचन्द्रजी
२५३.	भगवन्तदास		
२५४	मानसिंह I	अनन्तसिंह	सूमेहलदेव संग्रामसिंह
२५५.	भावसिंह	तेजसिंह	हरीदेव
२५६.	जयसिंह I	जोरावरसिंह	पृथ्वीसिंह
२५७	रामसिंह I		
२५८	विशनसिंह	मोहब्बतसिंह	गजेसिंह
२५९.	जयसिंह II	प्रतापसिंह	ध्रुवदेव
२६०.	ईशरीसिंह	बख्तावरसिंह	सुरतसिंह
२६१	माधोसिंह I	विनयसिंह	जोरावरसिंह
२६२.	पृथ्वीसिंह		
२६३.	प्रतापसिंह	शिवदानसिंह	किशोरसिंह
२६४.	जगतसिंह		गुलाबसिंह
२६५.	जयसिंह III	मंगलसिंह	रणवीरसिंह
२६६.	रामसिंह II	जयसिंह	प्रतापसिंह
२६७.	माधोसिंहI		हरीसिंह
२६८.	मानसिंह II	तेजसिंह	करनसिंह

६. मौजमावाद 'थान मोजाद सुजानिय'।
७. अमरसर – 'वालो त्रियो सुनाम ठाम अमरसर अषिय'।
८ नीदरगढ—'सिव चोथो सिवब्रह्म ठाम नीदरगढ दषिय'।
९. लुहारू—'लुहारै'।
१०. उणियारा—'गढ उनियारै ठोर'।
११. रणतभवर—रणस्तभवर—रणथभोर—'आये अपदल राषि कै, रणतभवर गढ ठाम'।
१२. राजगढ—प्रतापसिंह द्वारा निर्मित—'डेरास राजगढ ठाम दीन'।
१३ हणवत थान—(खेडे के हनुमानजी) 'हनवत थाम गिरवर निकट कीने मुकाम परथम दिवस'।
१४. खोहरा—'ठाम षोहरा नाम ठाठ अमरेस पाट भनि'।
१५. छिलोहडी – 'छतो छिलोहडि ठाम'।
१६. बीजगढ—'वर विजोग संगी भये तज्यो वीजगढ़ थान'।
१७. जावली—अलवर जिला के अन्तर्गत—'ढलि डेरा गढ जावली पातिल उतरे आय'।
१८. दीघ (डीग, दीग) महाराज सूरजमल की राजधानी—
'तहां इन्द्र पुर सो ठाम। तन नगर दीघ सुजाम ॥'
१९. डहरा—'भरतपुर जिले मे—'नगर सु डहरा नाम ठाम कहियत अति भरिय'।
२० दिल्ली—मुगल बादशाह की राजधानी—'रुहला नजीम दिली समझि'।
२१ कुरुक्षेत्र—रणस्थल, "कुरुछेतर मधि राड मचाई'।
२२. मुरधर-मारवाड़—'मुरधर हडै मोड' राठौडो की राजधानी।
२३ पुष्कर (पुहकर)—'दीपदान आ देषियो हम तुम पुहकर मिलन'।
२४. कामा—'प्रगना येक कामा सुठाम'।
२५. षोहरि—'दूजैस पोहरि कहत नाम'।
२६. मावडा—'जयपुर-भरतपुर' की लडाई का क्षेत्र।
'रच्यो मावडै षेत दल दो विरुध। वतै जट जोहार दल भूपजुध'।
२७ लोलई— लीलई गाँव सुठाम तहाँ छति छये नृपति दल'।
२८. वीकानेर – 'यो सुन बीकानेर नृप, गजै (गजसिंह) आप उर धारि'।
२९. जयनगरा—'पीथल राव जयनगरा आये'।

३० थानागाजी—'थानगाज' सो राजई, पातिल उतरे आय'।

३१ से ३४ पलवा, ज्याढो, पेषवाई, राजलिया—'चत्र ठाम के वधु'।

३५. काकवारी—'नाम काकवारी गढ थानो। ता दिस पातिल कियो पयानो'।

३६ अलवर— अलवर साहि नगर सुनाम। वके किला विकट सु ठाम'॥

३७. से ५७. शेरगढ, नौगावा, रामगढ़, पीपडषेडा, गुजावली, हणवंतगढ, वहादुरपुर, हयगढ, केसरोली, बावोली, मोजपुर, जामडोली, राजपुर, सैथल, अजवगढ, बिजैपुर, बसई, गनदागिरा, पृथ्वीसिहपुर, मालापेडा, आदि ·········राजगढ के अन्तर्गत स्थान। सभी गाँव अलवर जिले मे हैं।

५८ लछमनगढ—'लछमनगढ रासा' का प्रमुख स्थान। 'लछमनगढ गढ लरनि की, रची वात निधान।'

५९ वरसाना—'वर वरसाने षेत जीति चलियेस जोम भरि'।

६० पहाडी 'ग्राम लूट पहारी लाये', भरतपुर के उत्तर मे।

६१. ककरा— कोस तीन दल नजब के, कहित ककरा नाम'।

६२-६४ काबिल, खदार (कन्दहार) मुलतान—प्रसगवश।

६५. घाटा—'डेरा दीन सुघाट'।

६६ जयपुर—'अलवर पतिसाहि वाहि जैपुर दिस ध्यायव'।

६७. बसवा— बसवो सहर सुनाम ठाव भूपति दल आयव'।

६८. धूला—'आयेस धकि धूलै स ठाम।'

६९ अजवगढ—'वहुरि कूंच पातिल दल कीने। डेरा आय अजबगढ दीने॥'

७०. जामडोली—'नाम जामडोली निकट, स जीति लडाई ठाम।'

प्रतापरासो मे राजपूतो के विभिन्न वशो और कुलो[१] का कई स्थानो पर उल्लेख हुआ है—

१. हमीरदेका—कुतल के पुत्र हमीर के वशधर।

२ मानसिहोत—ठि० पाडे।

---

१. टॉड का लिखना है—

"जाटों का वंश राजस्थान के छत्तीस राजवंशों मे एक था। उस वंश का बाद मे पतन हुआ, लेकिन पराधीन होने क बाद भी जाटों ने सदा स्वाधीन होने की चेष्टा की।"

३. स्योब्रह्मपोता—स्योब्रह्म के वंशधर—नीदड़ ।

४. खंगारोत—खंगारजी के वंशज—जोबनेर। शेखावतों के बाद यही वंश प्रसिद्ध है।

५ नाथावत्त—सामोद, चौमूं, अलीराजपुरा आदि ठिकाने।

६ कल्यानवोत्त—ठि० कालवाड।

७ कुम्भावत—ठि० महार। पृथ्वीराज के वंशज, १२ कोठड़ियों में से।

८ सूरसिंहोत—भगवतदास के वंशज।

९ चत्रभुजोत—ठि० बगरू, पीपला आदि।

१० धीरावत।

११. जोगी कछवाहा—रूपसिंहजी जोगी हो गए थे, फिर गृहस्थ हुए। इनके वंशज 'जोगी कछवाहे' कहलाये। ठि० बघेलखड।

१२. बांकावत—ठिकाना लवाण। किसी समय राजा कहलाते थे।

१३. पचाणोत—पचाणजी के वंशज, ठि० साभर्या, सामोद।

१४. बलभद्रोत—ठिकाना अचरोल। इतिहास मे प्रसिद्ध वंश। अन्य स्थान—मावडा, माडोली, रनतभवर, फागी, आदि।

१५. सुलताणोत—ठि० सूरोठ।

१६. कुंभाहरण—कुभाणी-कुम्भाजी के वंशज, ठिकाना वासखोह।

१७ राजधरका, १८ यादव, १९ सोढा, २०. तवर, २१. पंवार, २२. राठोड, २३. गौड, २४. बडगूजर, २५. निर्वाण, २६. चौहान, २७. गहलोत, २८. षीची, २९. सीसोद्या, ३० नरवर के कछवाहे

३१. झामावत (झामवोत) मछड़, रायपुरा (जालोन) गांव के।

३२ कीकावत।

३३. राजावत—सलहडी के।

३४ चदेल।

३५. शेखावत।

३६. हाडा।

इस प्रकार अनेक राजपूत कुलों के नाम प्रतापरासो में आए हैं। इन सभी कुलो की ऐतिहासिकता मे किसी को सन्देह नही हो सकता। प्रायः सभी कुलो के वंशज विविध स्थानो में आज भी पाये जाते हैं।

सेना

सेना के सम्बन्ध मे कवि ने (१) पैदल, (२) घोड़े, (३) हाथी, (४) तोपों आदि का वर्णन किया है। सख्या बताते समय कवि ने यथावत् सख्या देने का भी प्रयत्न किया है—लाखो, करोडो कहकर पुस्तक की ऐतिहासिकता नष्ट नहीं की। दो सख्याएं कवि ने कई स्थानो पर दी है—"असी सहस" "साठ सहस" सेना की ये सख्याएँ इतिहास-प्रमाणित हैं। जयपुर की सेना ५०-६० हजार का होना सभी जगह सिद्ध होता है, इसके अतिरिक्त सहायतार्थ आई फौजो से ८० हजार तक हो जाना स्वयसिद्ध तथ्य है। इतिहास मे वर्णित एक प्रसग—जोधपुर राज्य का इतिहास (गहलोत) के आधार पर सख्या इस प्रकार दी गई है—

५०,००० आमेर की सेना,
१०,००० दक्षिणियो की,
३,००० उदयपुर की,
३,००० कोटा की।

घोडो की अनेक किस्मे बताई गई हैं, जैसे—तुरकी, खदारी, कच्छी आदि। तोपों के भी तीन चार प्रकार आते हैं, जैसे—रामचगी, जमूरा, जजालं आदि। हाथियो के प्रकार कही नही बताये गए हैं। इन सब वृत्तान्तो मे किसी प्रकार के सन्देह का स्थान नही है। प्रतापरासो मे आए हुए प्रसगो को नीचे लिखे प्रामाणिक वृतान्तो से मिलाइए—

मुरक्के अलवर (हिन्दी में अनूदित) से उद्धृत

"(क) जब प्रतापसिहजी दीघ की ओर गये, तो जब उनके डेरे रसिया की डूंगरी पर पडे थे, नजफखाँ ने, ब अगवाये खुशालीराम, जो प्रतापसिहजी से नाराज होकर इस ओर चला आया था, लश्कर को कत्ल करके सामान लूट लिया।

(ख) खुशालीराम सन् १२०२ हि० (सम्वत् १८४०) मे रईस जयपुर को राजगढ पर चढा लाया। प्रतापसिहजी ने लड़ाई का समय न देखकर इन्होंने इसके लिये खुशालीराम से कहा-सुनी करी। उसने ऐसा ढग डाला कि जयपुर-नरेश ने उलटा लौटना ही गनीमत समझा।

(ग) खुशालीरामजी जयपुर का रहने वाला जाति का खण्डेलवाल बनिया था और हल्दी के व्यापार से इनका लकब-हल्दिया हुआ। लक्ष्मी की भी इन

पर कृपा थी, चुनाचे राव बहादुर दौलतराम जद्दे खुशालीराम शख्श नामवर हुआ। पहले तो वकालत जयपुर का काम किया था, फिर दिल्ली सम्राट की शुभ-चिन्तकता मे नाम कमाया। जहाँगीरशाह ने जागीर शाहजहाँपुर, जो अब हल्के रेवाडी मे है, उसको मरहमत की और बजरिये इस इनायत के कमाल इज्जत दी। इससे जयपुर मे भी इसका वडा आदरभाव हुआ और यहाँ तक जयपुर रियासत का ये ताजामी सरदार हुआ। इनकी सन्तान प्रतिष्ठित और प्रसिद्ध हुई और तलवार मे रणक्षेत्र मे कुशलता तथा विजय प्राप्त करने उनके सन्तत होसला रहा।

यह राव खुशालीराम का ही काम था कि उसने बुनियाद इस रियासत को जमाया, जव इसमे उनका अनादर किया, तो उसका मजा चखाया। राव हरवरश, वख्शीहाल और राज अलवर उसी खानदान से है और ताजीम व तकरीम मे वैसे ही आनवान से हैं।

३० वाँ पृष्ठ

सम्वत् १८३५ में भरतपुर के जीतने के पश्चात् नजफखाँ का दिल बिगडा और लक्ष्मणगढ पर चढ आया। महाराव राजाजी प्रतापसिंहजी ने कुवर मगलसिंहजी, शिवसहायजी और छाजूरामजी मन्त्री को दुर्ग की रक्षा के निमित्त लक्ष्मणगढ भेजा था। इन्होंने बहुत अच्छा प्रवन्ध किया। जिस समय नजफखाँ की फौज ने लक्ष्मणगढ का घेरा दे लिया, उस समय छाजूरामजी मगलसिंहजी अन्य सैनिको से कहने लगे कि "भाइयो! ससार मे मनुष्य का जन्म बार-बार नही होता—शरीर अनित्य है—माँ के दूध को लजाना कायरों का काम है—तुम सव जगह प्रसिद्ध हो रहे हो। आज भी यवनो को अपनी कठिन कृपाण से भयभीत करके विजयनक्कारा बजाओ।" फिर क्या था सिपाही लोग जोश में आ गए, उनके रोम-रोम मे वीर-रस छा गया और ऐसे वीरता के साथ लड़े कि मुसलमानो के पजे उखड गए।

३१ वाँ पृष्ठ

ऊपर लिखी लड़ाई मे जव नजफखाँ पराजित होने को था तो उसने गुसांइ अनूपगिरी, उमरगिरी द्वारा सधि होने का विचार प्रगट किया। महाराव राजा प्रतापसिंहजी ने इसके लिए खुशालीरामजी को अपनी तरफ से भेजा। खुशालीरामजी ने वहाँ पहुँच कर दोनो ओर का विघ्न मिटा कर शान्ति स्थापित की।

३२ वाँ पृष्ठ

डीग पहुँच कर नजफखाँ ने खुशालीरामजी को बुलवाया और कहा कि हम एक बार प्रतापसिंहजी से मुलाकात करना चाहते हैं। खुशालीराम ने यह सूचना पत्र द्वारा रावराजाजी के पास भेज दी। रावराजाजी साहब अपने सरदारो समेत डीग जाकर नजफखाँ से मिले।

३३ वाँ पृष्ठ

स० १८३६ में नजफखाँ ने खुशालीराम से कहा कि अलवर का किला हमको दिलवा दो। खुशालीरामजी ने यह स्पष्ट उत्तर दे दिया कि यह नही हो सकता। परन्तु जब नजफखाँ ने अत्यन्त उत्सुक होकर यह लोभ दिखाया कि मैं तुमको अपनी फौज का सेनापति बनाऊँगा, तो खुशालीरामजी ने अपने परिवारियो (दौलतराम, नन्दराम और छाजूराम) को बुला लिया। ये अपनी जगह छोड़ कर खुशालीराम के पास चले गए। खुशालीराम ने नजफखाँ की नौकरी कर ली।

३५ वाँ पृष्ठ

नजफखाँ ने खुशालीरामजी को अपनी सेना का हरवल बनाया। वे सेना लेकर व मुकाम घाट आ कर ठहरे। घाट से अपनी सेना की वाग थानागाजी की तरफ मोडी। थानागाजी का दुर्ग विजय करके खुशालीराम की समत्यानुसार सेना अलवर की ओर चली। पहला मुकाम कुशालगढ हुआ। एक दिन बीच मे और ठहर कर तीसरे दिन बाम्बोली मे डेरा डाला। प्रातःकाल ६० हजार सेना के साथ हरवल बनकर खुशालीरामजी अलवर की ओर चले। नजफखाँ भी साथ था। दोनो ओर से घमासान युद्ध हुआ और इस युद्ध मे खुशालीरामजी घायल हुए। नजफखाँ ने शिकस्त खाई।

३७ वाँ पृष्ठ

नजफखाँ हार कर दौलतराम, नन्दराम और खुशालीराम को साथ लेकर दिल्ली चला गया और तीनो हल्दिया थोडे ही दिन पश्चात् दिल्ली छोड़ कर जयपुर चले गए। जयपुर-नरेश ने इनको अपना पेशवा बनाया।

३८ वाँ पृष्ठ

थोडे दिनो पश्चात् दौलतराम और खुशालीराम बहुत-सी सेना लेकर जयपुर की ओर से राजगढ पर चढे। पहला मुकाम धौले हुआ। दोनो

ओर से लडाई होने पर जयपुर की सेना व्याकुल हो उठी। जयपुर-नरेश ने खुशालीरामजी से सहमत होकर रावराजा को शान्ति-पत्र लिखा भेजा। रावराजाजी ने पत्रानुसार शान्ति करी और उसकी इत्तला वापिस जयपुर भेजी।

इस घटना के थोडे ही दिवस पश्चात् किसी व्यक्ति ने जयपुर-नरेश को चुगली खाई कि यह हल्दिया रावराजाजी से मिले हुए हैं। इस पर इनको कैद किया। रावराजाजी यह सूचना पाते ही आग-बबूला हो गए और नव्वाब अहमंदानी को फौज समेत बुलवाकर अचानक जयपुर पर जा चढे। वहाँ बडी घबराहट मची। सब लोग कहने लगे—इन हल्दियो के कारण ऐसा हुआ है। सभा करके जयपुर-नरेश ने इनको मुक्त किया और तीनो भाइयो को सीरोपाव पहना कर कहने लगे कि इस आफत को टालो। हल्दिया फौज लेकर युद्ध-क्षेत्र मे आ जुटे, अन्त मे जयपुर की सेना हार गई।

उन्ही दिनो मे पटैल सैंधिया हिन्दू धरा से कर उगाने लगा और बहुत-से राजाओ को परास्त करता हुवा जयपुर के निकट पहुँचा। दौलतरामजी जयपुर की ओर से लडे, सैंधिया हार गया।

जब दिल्ली मे गडवड मच गई, खुशालीरामजी जयपुर महाराज की आज्ञा से तथा अहमदानी के अनुरोध से दिल्ली को ओर गये। मार्ग मे रावराजाजी की सेना भी सम्मिलित हो गई। इन्होने दिल्ली गनीम को हराया। दिल्ली-सम्राट ने प्रसन्न होकर कलगी माला, शमशेर, दुशाला, रत्नजटित सरपेच दिये।

छाजूरामजी हल्दिया तथा उनके तीनों पुत्रों के जीवन से संबंधित प्रमुख ऐतिहासिक घटनाएँ

छाजूरामजी

१ सवत् १८२९ अर्थात् सन् १७७२ ई० मे माचाडी के राव की ओर से रसिया की डूंगरी पर युद्ध किया।

२ सवत् १८३५ अर्थात् सन् १७७८ ई० मे नजफखाँ ने लछमनगढ पर चढाई की थी, उस वक्त छाजूरामजी वही थे और युद्ध मे विजय प्राप्त की। इस अवसर पर इनके दो पुत्र—खुशालीराम तथा दौलतराम भी साथ थे।

३ सवत् १८४५ अर्थात् सन् १७८८ मे इनकी मृत्यु सोरो घाट पर हुई। कहते हैं, ये वडे योगी थे, और सोरो मे जब ये योग-साधना कर रहे थे, तब

ब्रह्मांड फट जाने से स्वर्गगामी हुए। उक्त स्थान पर इनका बनाया हुआ रघुनाथजी का मंदिर तथा इनकी छत्री अभी भी मौजूद है।

खुशालीरामजी

(क) तारीखवार घटनाएँ—

१. संवत् १८२४ अर्थात् सन् १७६७ में जयपुर-नरेश की ओर से भरतपुर के महाराज जवाहरसिंह से युद्ध किया तथा विजय प्राप्त की।

२. संवत् १८२९ अर्थात् सन् १७७२ में माचेडी के राव प्रतापसिंह की ओर से जयपुर-नरेश के विरुद्ध लडे और विजय प्राप्त की।

३ संवत् १८३० में नजफखाँ की तरफ से भरतपुर के महाराज नवलसिंह से लड़कर विजय पाई।

४. संवत् १८३२ मगसर सुदि ३ को इन्होंने जयपुर-नरेश महाराज प्रतापसिंहजी को माचेडी पर चढाया और माचेडी का किला फतह किया।

५ संवत् १८३२ में नजफखाँ की तरफ से भरतपुर के महाराज रणजीतसिंह से युद्ध किया और फतह पाई।

६. संवत् १८३५ में जब नजफखाँ लछमनगढ पर चढ आया, तब इन्होंने नजफखाँ तथा माचेड़ी के राव प्रतापसिंह में संधि कराई।

७. संवत् १८३५ में नवाब अबदुल अहमदखाँ दिल्ली के बादशाह को लेकर जयपुर पर चढ आया। तब जयपुर-नरेश ने इनको खास रुक्का भेजकर बुलवाया। ये आगरा से नजफखाँ की एक लाख फौज लेकर जयपुर आए। नजफखाँ की मार्फत बातें तै कराकर बादशाह के हाथ से जयपुर-नरेश को टीका कराया, सिरोपाव पहनवाया और नारनौल, कोलूठा, बागड़ परगनों की उठंतरी कराई। इस पर जयपुर-नरेश प्रतापसिंहजी ने इनको दिल्ली में अपनी ओर से वकालत पर भेज दिया।

८ संवत् १८३५ में दिल्ली के बादशाह शाहआलम द्वितीय के दरबार में ये लखनऊ के नवाब आसफुद्दौला तथा उदयपुर के महाराणा की ओर से भी वकील थे।

९. संवत् १८३६ में भाटिया की लडाई में लड़े। इस लडाई में पुन. बादशाह के हाथ से जयपुर-नरेश को टीका कराया।

१०. संवत् १८३६ में जयपुर-नरेश की तरफ से मुरतजाखाँ भडेच से श्यामजी की खाटू की लडाई में लड़े और फतह पाई।

११. इसी वर्ष इन्होने नजफखाँ की नौकरी कर ली। नजफखाँ ने इन्हें अपनी सेना का हरवल बनाया तथा इनको दिल्ली ले गया।

१२. सवत् १८२९ मे जयपुर की तरफ से माचेडी वालो से राजगढ में लडे और विजय पाई।

१३ सवत् १८४१ अर्थात् सन १७८४ की ता० १५ नवम्बर को आगरे मे लक्खी के हाथ से छुरे से मारे गए। यह घटना गॉव सैयदपुरा (कनवा से पश्चिम की ओर) फतहपुर सीकरी, आगरा मे हुई और वही इनकी छत्री मौजूद है।†

(ख) बिना तारीख की घटनाएँ—

१ दिल्ली के बादशाह ने इन्हे राव बहादुरी का टाइटिल दिया था। यह फरमान शाहआलम द्वितीय का है।

२ दिल्ली के बादशाह ने इन्हे शाहजहाँबाद, शाहजहाँपुर तथा औरगाबाद परगने दिए थे, जिनकी आमदनी ११ लाख थी। सप्त हजारी मनसब, पाँच हजार सवार, तोप, नक्कारा, झालरदार पालकी, हाथी, सिरोपाव, माही-मुरातब भी दिए थे।

३ जयपुर, जोधपुर, माचेडी, उदयपुर, इन्दौर आदि राज्यो की सेवाएँ भी की थी, जिसके फलस्वरूप जागीर, हाथी, सिरोपाव आदि प्राप्त किए।

४ लोहागर‡, गगापुर मे कई मन्दिर बनवाए, जो अब भी हैं। गगापुर का पहला नाम कुशालगढ इन्ही के नाम पर था। गगाजी तथा गोपीनाथजी के मदिर व ढूंढेश्वर महादेव-कुड इन्ही के बनवाए हुए हैं।

५. जयपुर तथा अलवर राज्य के ताजीमी सरदार थे।

६. कई दफा जयपुर-नरेश इनसे नराज हुए और इन्हे नाहरगढ किले मे कैद किया। साथ ही अनेक बार प्रसन्न हो कर इन्हे ऊँचे पद प्रदान किए।

७ खुशालीराम बोहरा (राजा) से कई बार इनका झगडा हुआ और इसी कारण इनके जीवन मे अनेक उतार-चढाव देखे गए।

८ जयपुर-नरेश के दरबार मे रोडाराम खवास, फीरोज़ महावत, रसकपूरी वेश्या तथा रनवास की रूपा बडारण से इनकी खटपट चलती रहती थी,

---

†इस घटना का उल्लेख डेविड एण्डरसन व जेम्स एण्डरसन के मुन्शी खैरुद्दीन इलाहाबादी ने अपनी पुस्तक मे किया है।

‡लोहार्गिरि तीर्थ—जहाँ परशुरामजी ने तपस्या की थी।

परन्तु इन्होंने किसी की परवाह नही की। इसी कारण इनको कई बार कष्ट भी उठाने पडे।

९ पहले माचेडी के राव के नौकर थे। जयपुर-राज्य मे भी अनेक पदों पर काम किया। जयपुर-राज्य के दीवान भी हुए। कहा जाता है, दीवान पद पर आसीन कराने मे वोहरा खुशालीराम ने इनकी सहायता की, पर इन्होंने वोहराजी के ही विरुद्ध कार्य किए। इस प्रकार की अवसरवादिता कई बार देखी गई। हो सकता है, इसी कारण कई स्थानो पर इन्हे 'दगावाज़ हल्दिया' लिखा गया हो।

१०. जयपुर-नरेश की आज्ञा से दिल्ली के वादशाह की मदद की और वहाँ से कलगी, माला, तलवार, दुशाला तथा रत्नजटिल सरपेच द्वारा पुरस्कृत हुए।

११. भरतपुर के महाराज जवाहरसिंह के पास भी काम किया।

१२ माचेडी के राव से नाराज होकर नजफखाँ के पास चले गए।

१३ इनके तीन पुत्र थे—

१. चतुरभुजजी,

२. रामलालजी (लाओलाद फोत हुए),

३ वालमुकन्दजी (नन्दरामजी के गोद गए)।

दौलतरामजी

(क) तारीखवार घटनाएँ—

१. सवत् १८२२ मे माचेडी के राव प्रतापसिंह के साथ मावडा-युद्ध मे ५०० सवारो के साथ भरतपुर की फौज पर हमला किया।

२. संवत् १८३५ मे जयपुर-नरेश ने इनको मुसाहिव का काम दिया।

३ सवत् १८३५ मे लछमनगढ ताल्लुका इनका था। उस समय माचेड़ी के राव ने हिसाव-किताव के वारे मे नाराज़ होकर अपने हाथ से इनके मुँह पर तमाचा मारा। ये नाराज़ होकर अपने परिवार सहित मथुरा और वाद मे डीग (रियासत भरतपुर) चले गए। वहाँ से एक लाख फौज नजफखाँ से ली और रसिया की डूंगरी पर हमला किया।

४. सवत् १८३६ मे इनका विवाह हुआ वताया जाता है, परन्तु यह ज्ञात नहीं हो सका कि कहाँ और किससे हुआ। इस विवाह मे जयपुर-नरेश महाराज प्रतापसिंह पधारे थे।

५. संवत् १८४२ मे ये जोधपुर गए थे।

६. सवत् १८४३ मे जयपुर की ओर से माधवजी सिंधिया से लडे और फतह पाई।

७. सवत् १८४३ (ता० २० अप्रैल, सन् १७८६) को ये नाराज होकर लखनऊ चले गए। जब माधवजी सिंधिया ने जयपुर पर चढाई की, तो यहाँ के सरदारो ने आधीनता स्वीकार करने की सलाह दी। जयपुर-नरेश ने यह बात नही मानी और दौलतरामजी को खास रुक्का भेजा कि जयपुर की मदद करो। दौलतरामजी ने नबाब जुल्फकारुद्दौला से तीन लाख फौज प्राप्त की, और जयपुर को विजय प्राप्त कराई। जयपुर-नरेश ने प्रसन्न होकर हाथी, सिरोपाव, तलवार, घोडे तथा १ लाख की जागीर प्रदान की।

८. सवत् १८४४ मे माधव सिंधिया ने राव प्रतापसिंह के साथ मिलकर जयपुर पर चढाई की। उस समय जोधपुर के महाराज मानसिंह की सेना सहित दौलतरामजी ने जयपुर की सहायता की।

९. सवत् १८४४ मे इनकी माँ की मृत्यु हुई, जिनकी छत्री जयपुर मे है।

१०. सवत् १८४४ मे लखनऊ के नबाब ने इन्हे ५ लाख की जागीर दी थी, जो कि, बाद मे, इनके वहाँ न जाने से खालसा हो गई।

११ सवत् १८४७ में इनको जयपुर-नरेश ने जोधपुर से पुनः बुला लिया।

१२ सवत् १८४८ मे जयपुर-नरेश प्रतापसिंहजी के उपास्य ठाकुरजी श्री व्रजनदनजी के विग्रह का विवाह इनकी उपास्या श्री राधिकाजी की प्रतिमा से हुआ (सगाई वैसाख वदी ९ को तथा विवाह जेठ सुदि ६ को)। महाराज स्वयं इनके यहाँ पधारे और दौलतरामजी ने दहेज मे दस हजार नकद, कुल जागीर, एक बगीचा, एक हवेली तथा एक नोहरा और बहुत-से आभूषण दिए।

१३ सवत् १८४८ मे जयपुर-नरेश ने इन्हे मुसाहिब नियुक्त किया।

१४ स० १८४९ (वैसाख वदी १) मे जयपुर-नरेश ने इनको राव बहादुर की पदवी दी।

१५ सन् १८५० मे जयपुर नरेश की ओर से कालख के ठाकुर वैरीसाल से कालख मे लडे। यह लडाई २१ दिन तक चली और कालख का किला ले लिया। इनके भाई वख्शी नन्दरामजी उस समय खडेला-युद्ध मे व्यस्त थे, अत उनके स्थान पर दौलतरामजी को यह लडाई लडनी पडी।†

---

†कालख थारी काल, दोल बहादुर तोड़सी।
चौछै वैरीसाल, बिन मारचा छोड़ै नहीं॥

१६ पोस सुदी २ स० १८५० को तोप के गोले से इनकी मृत्यु हुई। कहा जाता है, शत्रु के किसी आदमी ने धोखा देकर इनको मार डाला।

(ख) बिना तारीख की घटनाएँ—

१. जयपुर राज्य के दीवान हुए।†

२ जयपुर-नरेश की ओर से इन्होने कुल मिलाकर ५२ लडाइयाँ लडी।

३. जयपुर के ठाकुर लोग जयपुर-नरेश से नाराज होकर सिंधिया को जयपुर पर चढा लाए और किशनगढ पर डेरा किया। जयपुर-नरेश ने सधि की प्रार्थना की। अन्य शर्तों मे एक शर्त यह थी कि दौलतरामजी को बरखास्त किया जाय। तभी ये जोधपुर चले गये।

४ इन्होंने भोमियो को हराया।

५ इनकी तसवीर व इनका इतिहास लखनऊ के म्यूजियम में भी बताया जाता है।

६. इनके तीन पुत्र थे—

१. सुखलालजी,‡

२ हरनारायणजी,

३. बलदेवजी (बख्शी नदरामजी के गोद गए)।

नंदरामजी

१ सवत् १८३५ मे जयपुर-नरेश प्रतापसिंहजी ने इन्हे बख्शीगीरी दी।

२ ये भरतपुर के महाराज जवाहरसिंहजी के पास भी रहे तथा वहाँ इनकी जागीर भी थी।

३. शेखावाटी मे फौज के अफसर हुए और बादशाह की तरफ से वसूली की।*

४ सवत् १७५३ मे इनकी मृत्यु भरतपुर मे हुई और इनका दाह-सस्कार गोवर्धन मे किया गया। गोवर्धन मे रामलीला के मैदान मे अभी तक इनकी छत्री देखी जा सकती है।††

---

†संभावित संवत् १८४४।

‡इनके नाम देहली रेजीडेण्ट सर चार्ल्स मेटकाफ का एक पत्र देखा था, जिससे सुखलालजी का महत्त्व प्रकट होता है।

*टॉड राजस्थान मे इनका विस्तृत विवरण 'शेखावाटी इतिहास' के अतर्गत मिलता है—देखें, तिरेसठवाँ परिच्छेद।

††भरतपुर के, प्राय, सभी राजाओं की छत्रियाँ गोवर्धन मे हैं, इनमे से कुछ तो वास्तुकला की महत्त्वपूर्ण कृतियाँ हैं। ये छत्रियाँ आज भी देखी जा सकती हैं। नन्दरामजी का दाह-संस्कार गोवर्धन मे किया जाना इस बात का द्योतक है कि भरतपुर मे भी इनका बहुत सम्मान था।

५. राजा हिम्मतवहादुर से इनका पत्र-व्यवहार होता रहता था।

६. इनके कोई पुत्र न था। पहले दौलतरामजी के तृतीय पुत्र वलदेवजी गोद आए, पर वे नन्दरामजी के जीवनकाल में ही मृत्यु को प्राप्त हो गए। तदुपरान्त झाग† से हरिकिशनजी गोद आए। वह भी दुर्भाग्य से काल-कवलित हो गए। तव खुशालीरामजी के वेटे वालमुकुन्दजी को गोद लिया गया।

७ नन्दरामजी ख्यातिप्राप्त सेनापति थे और अनेक देशी नरेश उनसे सहायता की आशा रखते थे।

८ सेनापति नन्दराम ने प्रतापसिंह को सम्पूर्ण खडेला राज्य का अधिकारी वनाया। (यह प्रतापसिंह शेखावाटी के सामन्त इन्द्रसिंह के पुत्र थे)।

९ नन्दराम हल्दिया ने आमेर राज्य की वहुत सेवाएँ की। कई-एक जागीरे आमेर राज्य मे मिलाई तथा आधीन राज्यो से नियमित कर वसूल करने की चेष्टा की।

१०. नवलगढ के सामन्तों को तुई नगर मे घेर लिया। कालान्तर मे तुई और ग्वाला आदि लौटा दिए।

११ दो लाख रुपया सीकर के अधिकारी लक्ष्मणसिंह से वसूल कर जयपुर की आधीनता स्वीकार कराई। कहा जाता है, एक लाख रुपया अपने लिए भी लिया।

१२. युद्ध, विग्रह, सधि आदि मे, उस समय, इनका महत्त्वपूर्ण भाग रहा और इनके पराक्रम से आसपास के सामन्त काँपते रहे।‡

इन एतिहासिक बातो को मिलाने मे मैंने अनेक पुस्तको का आश्रय लिया और सभी वातें ठीक पाई। कुछ पुस्तको के नाम इस प्रकार है—

१. वीरविनोद—श्यामलदास।

---

†कहा जाता है, हल्दीघाटी के वैश्य कौम के कुछ सिपाही (जो वाद मे हल्दिया कहे जाने लगे) राजा मानसिंह के साथ आमेर आए। ये लोग जयपुर राज्य के अंतर्गत झाग नामक ग्राम मे वस गए। इस गाँव में हल्दिया वश के लोग अव तक मौजूद हैं। यहीं से हरिकिशनजी गोद आए थे। आज भी यह परंपरा चलती है। लगभग २५ वर्ष पूर्व रामचन्द्र नामी एक बालक बख्शी रामप्रतापजी हल्दिया के यहाँ गोद आया था।

‡जयपुर के रावबहादुर नृसिंहदास हल्दिया द्वारा सचित सामग्री तथा बनारस के श्री दामोदरदास खडेलवाल के अनुसंधान पर आधारित।

२. राजपूताने का इतिहास—जोधपुर का इतिहास, बीकानेर का इतिहास—ओझा।
३ अलवर राज्य का इतिहास—जोगी।
४. जाट-जाति का इतिहास—देशराज।
५ व्रजेन्द्रवंश भास्कर—गोकुलचन्द दीक्षित।
६. कछवाहो का इतिहास—तवर।
७ वंश-भास्कर—सूर्यमल्ल।
८. लावारासा—गोपालदास कविया।
९ मत्स्यप्रदेश की हि० सा० को देन—मोतीलाल गुप्त।
१०. हल्दियावंश के रिकार्ड—नरसिंहदास।
११. जोधपुर की ख्यात।
१२. बीकानेर का इतिहास—गहलोत।
१३. जोधपुर का इतिहास—गहलोत।
१४. मुरक्के अलवर।
१५ हल्दिया वंश (अप्रकाशित)—दामोदरदास खडेलवाल।
१६. The Fall of the Moghul Empire—Sarkar.
१७. History of Bharatpur—Jwala Sahaya.
१८ Alwar Gazetteer—Powlett.
१९. Gazetteer of E. R. State—Burkmann.
२०. Annals & Antiquities of Rajasthan—Tod.
२१ Bharatpur Gazetteer—Walter
२२. Travels—Records of George Thomas.
२३ Rajputana Gazetteer.
२४. Imperial Gazetteer.

प्रतापरासो में दी गई लड़ाइयों का ऐतिहासिक विवरण

(विविध इतिहास, राजकीय रिकार्ड तथा रुक्कों के आधार पर)

न०	स्थान का नाम	सं०	कौन लड़ा	किससे लड़ा	हल्दिया वंश का व्यक्ति	परिणाम	अन्य
१.	मावडा	१८२४	महाराज माधोसिंह जयपुर	महाराज जवाहरसिंह भरतपुर	राव खुशालीराम, रा० ब० दौलतराम, बख्शी नदराम—जयपुर की ओर से	जयपुर विजयी	—
२	राजगढ	१८२९	राजसिंह फीरोजखाँ जयपुर की ओर से	रावराजा प्रतापसिंह	साह छाजूराम तथा उनके तीनो पुत्र—माचेडी की ओर से	रावराजा प्रतापसिंह विजयी	—
३.	भरतपुर	१८३०	नजफखाँ	महाराज नवलसिंह भरतपुर	राव खुशालीराम नजफखाँ की ओर से	विजयी नजफखाँ	—
४.	अलवर	१८३२	नजफखाँ	महाराज रणजीतसिंह भरतपुर	,,	,,	(इस दुर्ग को नजफखाँ ने जीत कर राव खुशालीरामजी को किलेदारो से खाली कराने के लिए दिया। उन्होने अपने मालिक रावराजा प्रतापसिंह जी नरूका को भेट कर दिया)
५.	डीग	१८३३	नजफखाँ	,,	,,	,,	—
६.	लछमनगढ	१८३५	नजफखाँ	रावराजा प्रतापसिंह	शाह छाजूराम राव खुशालीराम	विजयी रावराजा प्रतापसिंह	(दो लाख रुपया फौज खर्च का लेकर नवाब से सन्धि की गई)
७.	राजगढ़	१८३८	महाराज प्रतापसिंह जयपुर	,,	खुशालीराम आदि तीनो भाई जयपुर की ओर से	जयपुर	—

प्रताप रासो की भाषा

इस ग्रथ की भाषा को विश्लेपित करने मे मैं उन पद्धतियो का प्रयोग तो न कर सकूँगा, जो अपनी गणित-वहुलता के कारण समभने मे कठिनाई उपस्थित करती हैं, किन्तु आधुनिक प्रचलित सिद्धान्तो पर अपना ध्यान अवश्य रखूँगा। प्रधानत मेरा विश्लेषण (१) ध्वनि-श्रेणिमूलक और (२) आकृतिमूलक होगा जिसमे शब्दो के रूप और वाक्य मे उनके निर्दिष्ट स्थानो का समावेश भी होगा। ध्वन्यात्मक टिप्पणी किसी भी प्रकार का निश्चित आधार न होने के कारण आनुमानिक होगी, साथ ही वर्ण, पद, स्वराघात, वाक्य-विन्यास, अर्थ आदि पर भी विचार किया जा सकेगा। विश्लेपण करने से पूर्व कुछ वातो की ओर ध्यान रखना आवश्यक है। यथा—

(१) इस विश्लेपण की सामग्री 'प्रतापरासो' की उस प्रति से ली गई है, जो 'अलवर म्यूजियम' मे सग्रहीत थी और जो अव 'राजस्थान प्राच्य-विद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर' के अधिकार मे है।

(२) यह भापा सवत् १८३७ से १८४७ के आसपास वोली जाने वाली वह भाषा है, जो काव्य-सृजन हेतु कुछ परिष्कृत कर ली जाती थी। भाषा का क्षेत्र व्रजभापा प्रभावित अलवर प्रान्त है। अलवर मे रचित उस समय की काव्य-भाषा का प्रायः यही रूप उपलब्ध होता है।

(३) भौगोलिक दृष्टि से इस भापा का विस्तार राजगढ-अलवर के आसपास समभना चाहिए।

(४) यह वात निश्चित-सी प्रतीत होती है कि 'प्रतापरासो' की इस भाषा मे वोलचाल की भाषा से विशिष्टता है। प्राय· देखा गया है कि काव्य की भाषा वोलचाल की भाषा से अलग होती है। आज यह प्रवृत्ति अवश्य, यत्र-तत्र, देखी जाती है कि यह अंतर यथाशक्ति कम कर दिया जाय।

(५) लेखन और उच्चारण मे अतर है—

(क) ह्रस्व-दीर्घ की अव्यवस्था—

जाचिक[१], जाचीक[२] (इ~ई)। छाजु[३], छाजू[४] (उ~ऊ)।

---

१ छठे प्रभाव के अंत मे। २ आठवें प्रभाव के अत मे। ३ छं० सं० १८१
४ छ० स० ५५।

(ख) वर्णान्तर-व्यवस्था—

जाचिक[१], जाचिग[२] (अघोष ⌣ घोष)।

सेवग[३], सेवक[४] (घोष ⌣ अघोष)।

(ग) संयुक्ताक्षर-प्रयोग—

हृथ[५], हृथ्थ (समव्यजन समुच्चय)।

सजै[६], सज्जै (समव्यजन समुच्चय)।

(घ) लेखन मे अतर—लिखने मे बोलने की ध्वनियो का प्रयोग—

सुरतानोत[७], सुरताणवोत[८], सुरतानवत[९]।

(ङ) शब्दो का उच्चारित रूप स्वीकार किया गया है—

नाम[१०], नाम[११], आन[१२], आन[१३] (सानुनासिकता की स्वीकृति)। लेखन का रूप उच्चरित रूप से भ्रमात्मक हो गया है।

(७) कुछ वर्णो के रूपो मे अन्तर—

/ख/~[ख] [ष]

'पुस्याली राम'[१४] आधुनिक 'खुस्यालीराम' के स्थान पर प्रायः सर्वत्र ही [ष][१५] को आधुनिक [ख] के रूप मे स्वीकार किया गया है।

(८) छद भग होने पर भी यथासाध्य उपर्युक्त अलवर म्यूजियम वाली प्रति का रूप ही, विश्लेषण की दृष्टि से, स्वीकार किया गया है।

(९) ध्वनि-प्रसग मे आधुनिक उच्चारण पर ही ध्यान रखा गया है। यह इसलिए करना पडा कि उस समय का 'उच्चारण-आधार' अब अनुपलब्ध है।

(१०) ध्वनि-विश्लेपण मे यात्रिक विश्लेषण मभव न होने से अनुभवीय पद्धति को ही अपनाया गया है।

(११) व्याकरण का आधार खडी बोली का आधुनिक व्याकरण है—उसी के वर्गीकरण, पारिभाषिक शब्दावलि आदि को स्वीकार किया गया है।

(१२) गौण रूप मे, उपलब्ध, राजस्थानी तथा व्रजभाषा के व्याकरण पर भी ध्यान रखा गया है।

---

१. छठे प्रभाव मे। २ छं० स० ४। ३ छं० स० ४५२। ४ छं० सं० *। ५. छं० स० २३१। ६ छं० स० १५२। ७ छं० स० ३६२। ८. छं० स० १५२। ९. छं० स० १२६। १० छं० स० ६९। ११. छं० स० ७८। १२ छं० स० १७३। १३ छं० स० १६४। १४. छं० स० २०६। १५ छं० सं० ४, ५, २९, ३३, ४१, ४२, ५३, ५४, ६४, ७०, ८५, ९०, १०३, २०३, ३१२, ४०८, आदि सर्वत्र ही।

(१३) उच्चारण का वैसा ही रूप लिया गया है, जैसा मैं, स्वय, इस प्रति को पढते समय उच्चारण करता हूँ। कही, कही स्थानीय व्यक्तियो से भी पुष्टि कराई गई है। गाकर पढने मे कुछ अतर प्रतीत हुआ। सामान्य रूप मे अतर दिखाई नही देता।

(१४) ध्वनि श्रेणी, सहस्वन आदि मे स्वीकृत / /, [ ], सकेतो का यथा सभव प्रयोग किया गया है।

(१५) प्रस्तुत विश्लेषण विवरणात्मक है, अत शुद्ध, अशुद्ध, उचित, अनुचित, वाछनीय, अवांछनीय, सभावित, शक्य आदि का कोई विचार नही किया गया है।

(१६) भाषा-विश्लेषण मे अतर्राष्ट्रीय लिपि और सकेतो का व्यवहार होता है। पजाबी[१], भोजपुरी[२], कन्नड[३], खडीबोली[४], सिंधी[५], बागरू[६] आदि पर किए गए कार्य इसी माध्यम से है। मैंने नागरी लिपि का व्यवहार करने की चेष्टा की है।

(१७) विश्लेषण को अधिक वैज्ञानिक रूप न देने के साथ ही सामान्य रूप देने की चेष्टा की गई है।

ध्वनि-तत्त्व

प्रचलित पद्धति के अनुसार ध्वनियो का वर्गीकरण स्वर और व्यजन की ध्वनियो के अन्तर्गत करना उचित होगा। इस ग्रन्थ मे जिन ध्वनियो का प्रयोग हुआ है, वे अधिक पुरानी नही हैं और आज भी सामान्य रूप से बोली जाती हैं। उच्चारण मे कुछ परिवर्तन अवश्य हुआ होगा, क्योकि (२०२०—१८३७=)१८३ वर्ष का समय ध्वनि-परिवर्तन की दृष्टि से बहुत होता है, परन्तु अन्य कोई व्यवस्था न होने पर और प्रचलित ध्वनियो से मेल खाने के कारण उन्हे आज के रूप मे ही लिया जा रहा है।

स्वर, अर्द्धस्वर तथा व्यजन की व्याख्या यहाँ अपेक्षित नही, जो ध्वनियाँ इन विभाजनो के अन्दर साधारण रूप से वर्गीकृत की गई है, उन्हे उसी प्रकार लिया जा रहा है।

---

१ बनारसीदास। २. उदयनारायण तिवारी, विश्वनाथ प्रसाद। ३. विलियम ब्राइट, हिरेमठ। ४. गम्पर्ज। ५ खूबचदानी। ६. जगदेवसिंह।

स्वर-ध्वनियाँ—

आधुनिक उच्चारण के अनुसार—

ई ऊ
इ उ
ए ओ
ऐ औ
अ
आ

ये स्वर और इनकी सानुनासिकता, जो उदाहरण सहित आगे अंकित हैं।

इन ध्वनियों को घटा कर इस प्रकार भी रखा जा सकता है—

(क) अ इ उ ए ऐ ओ औ।

(ख) आ ई ऊ।

(ख) के /आ/, /ई/, /ऊ/ (क) के /अ/, /इ/, /उ/ की दीर्घताएं कही जा सकती हैं।

अ (अ), आ (आ), इ, ई, उ, ऊ, ऐ, ओ (ओ), औ (औ)।

इनके अतिरिक्त एक ध्वनि-संकेत /ए/ का प्रयोग सम्पूर्ण पुस्तक में केवल एक शब्द मे हुआ है।[1] अन्य सभी स्थानो पर /ये/ से ही काम लिया गया है। इसके दो अर्थ निकलते हैं—

(१) /ए/ ध्वनि-संकेत ग्रन्थकर्त्ता को मालूम था—कम-से-कम लिपिकार इस ध्वनि-संकेत से अवश्य परिचित था।

(२) प्रयोग मे /ए/ ध्वनि-संकेत कम ही लाया जाता था और इसके स्थान पर /ये ही चलता था।[2] कही-कही /य/ भी प्रयुक्त होता था।[3,4]

स्वर-ध्वनियों के निम्नलिखित सानुनासिक रूप भी मिलते हैं—

/अ/—/अ/—'अमावति'[5], 'अगद'[6], 'अस'[7], 'अच'[8], 'अगी'[9], 'अतरा'[10], 'अग'[11], 'अके'[12]। (इसे अनुस्वार रूप कहना उपयुक्त होगा)।

---

१ छं० सं० १३१, ३७१, ३७४—'एक'। २ छं० सं० ६ (येको), छं०स० ४६, १०३, १२१ आदि (येक)। ३ छ० सं० ६ (यक), छं० सं० ८५, १४२ आदि (यसी)। ४ /य/ और /ए/ की कठिनाई कम से कम अत तथा मध्य वर्ण में आज भी है—'कीजिए'-'कीजिये'; 'गये'-'गए'; 'जाएगा'-'जायेगा' (यदाकदा 'जावेगा' भी)। ५ छं० सं० २८६। ६ छ० सं० ६। ७. छं० सं० २६। ८. छं० सं० २६। ६. छं० सं० ५१। १०. छं० स० ७४। ११. छं० सं० १३१। १२. छ० सं० १५५।

/आ/~/आ/ —'आवावति'[1], 'आन'[2], 'आनि'[3] ।

/इ/~/इ/ —'इद्र'[4], 'इद्रपुर'[5], 'इद्रेस'[6], 'इद्रसिह'[7] ।

/ई/~/ई/ —'ईद्र'[8] ।

/उ/~/उ/ —'लगु'[9], 'गुसाई'[10], 'दुहु'[11] ।

/ऊ/~/ऊ/ —'ऊचे'[12] ।

/अै/~/अै/ —'अैन'[13], 'मै'[14] ।

/ओ/~/ओ/ —'करो'[15] ।

/औ/~/औ/ —'हौं'[16] ।

स्वरो का प्रयोग शब्दो मे किन-किन स्थानो पर होता है, वह भी द्रष्टव्य है। किसी ध्वनि-सकेत को हम शब्द के आरम्भ मे, बीच मे तथा अन्त मे प्रयोग कर सकते हैं। यथा—/ई/

आरभ—ईसरसिह'[17] ।

मध्य —'जोईये'[18], 'फिरईस'[19] ।

अत —'घाई'[20], 'फूरमाई'[21], 'ह्याई'[22] ।

ऊपर लिखे उदाहरणो में /ई/ स्वर का प्रयोग स्वतत्र रूप में हुआ है। आरम्भ मे तो नही, किन्तु शब्द के मध्य तथा अन्त मे /ई/ आदि स्वरों की मात्राओ का प्रयोग व्यजनो के साथ भी होता है, और अधिक होता है। जैसे—व्यजन के साथ /ई/

आरभ—× ।

मध्य —'मीर'[23], 'षटतीस'[24] ।

अत —'सारी'[25], 'ठी'[26], 'विनती'[27] ।

इस दृष्टि से स्वरो का वितरण, विभिन्न स्थानो पर, प्रस्तुत किया जाता है।

---

१ छं० स० १६। २ छं० स० १६४। ३ छं० स० १८४। ४. छं०सं० ३७, ६३, १२३, १२६ आदि। ५ छं० स० ७०। ६ छं० स० १३०। ७. छं० स० ३१५। ८ छं० स० १८७ (आधुनिक रूप मे 'ईंद्र' को 'इंद्र' का ही रूपान्तर मानना चाहिए—किन्तु लिपिकार ने, किसी भी कारण से हो, इन्हें अलग-अलग स्वर-सकेतों से सम्बन्वित करते हुए लिखा है, अत' इनको /इ/ तथा /ई/ दोनो की सानुनासिकता बताने के लिए प्रयोग मे लाया गया है। ६ छं०सं० ११ १० छं०सं० २६२। ११ छं०सं० ३४०। १२. छं०सं० २१३। १३ छं० सं० २३५। १४ छं० स० ८३। १५ छं० स० २। १६ छं० सं० २। १७ छं० सं० ५७। १८ छं० स० ३०५। १६ छं०स० २०८। २०. छं० सं० ३४०, ३५३। २१ छं० स० ४०५। २२ छं० स० ६७। २३ छं० सं० ३०३। २४ छं०स० ३१५। २५ छं० स० ३१४। २६ छं० स० ३१४। २७. छं० सं० २।

/अ/ आरभ —'अनग'[१], 'अजमेरी'[२], 'अप'[३]।

मध्य —'पचरग' ∽ 'पच्+/अ/रंग'[४], 'घर' ∽ 'घ्+/अ/र',

सानुनासिक 'पचरग' ∽ 'पचर्+/अ/ग'।

अन —'पास' ∽ 'पास्+/अ/'[६], 'पठाय' ∽ 'पठाय्+/अ/'[७],

सानुनासिक 'युध' — 'युध्+/अ/'[८]।

/आ/ आरभ—'आमावति'[९], 'आगल'[१०], 'आज'[११]।

मध्य —'चारण' ∽ 'च्+/आ/रण'[१२], भारी ∽ 'भ्+/आ/रो'[१३],

'नवाव' ∽ नव्+/आ/ब'[१४], सानुनासिकता सहित भी

'माची' ∽ म्+/आ/ची'[१५]।

अंत —'घरा' ∽ 'घर्+/आ/'[१६], 'ककरा' ∽ 'ककर्+/आ/'[१७],

सानुनासिकता सहित भी 'कामा' ∽ 'काम्+/आ/'[१८]।

/इ/ आरभ —'इत'[१९], 'इसी'[२०], 'इति'[२१], 'इतै'[२२]।

मध्य —'जोइये'[२३], घारिये' ∽ धार्+/इ/ये'[२४]।

अत —'टरि' ∽ 'टर्+/इ/'[२५], 'नरपति' ∽ 'नरपत्+/इ/'[२६]।

/ई/ आरभ —'ईसरसिह'[२७], 'ईदरेस'[२८], 'ईद्र'[२९], 'ईस'[३०]।

मध्य —'उपाईय'[३१], 'सुनाईय'[३२], 'तीयार' ∽ 'त्+/ई/यार'[३३],

'चढीये' 'चढ+/ई/ये'[३४]।

अत —'जोई'[३५], 'लराई'[३६], 'सोई'[३७], 'दिषणी' ∽

'दिषण्+/ई/'[३८], 'कैसी' ∽ 'कैस्+/ई/'[३९]।

सानुनासिक्ता 'गुसाईं'[४०]।

---

१ छं० स० १३१। २. छं० स० १३१। ३ छं० सं० २२४। ४ छं०सं० ३८९। ५ छं०स० ३११। ६ छं० स० ३८९। ७ छं० स० ३८९। ८ छं० स० १८९। ९ छं०सं० १४५। १० छं०सं० १९२। ११ छं०स० २५७। १२ छं०स० ३२८। १३ छं० स० ३२८। १४. छं० सं० ३३१। १५ छं० स० ३०६। १६ छं० स० ३५४। १७ छं० सं० २८८। १८ छं० स० २१०। १९ छं० सं० ९९,११७। २० छं० स० १६३। २१ छं० स० २८९। २२ छं०स० ३७,८५। २३ छं०सं० ३०५। २४ छं० स० ३०५। २५ छं०स० ३०८। २६ छं० स० १४५। २७ छं०स० ५७। २८ छं० स० २२५। २९. छं० स० १५१। ३०. छं० सं० ५१। ३१. छं०सं० २७६। ३२. छं०सं० २७६। ३३ छं० स० २८३। ३४. छं० सं० ३०५। ३५ छं० सं० ३५४। ३६ छं० स० ३५४। ३७ छं० स० ४३८। ३८. छं०स० ४३९। ३९ छं० सं० ४४१। ४०. छं० स० २६४।

/उ/ आरभ—'उसी'[१], 'उनियारे'[२], 'उमर'[3]।

मध्य —'जुध'—'ज्+/उ/ध'[६], 'रघुकुल'—'रघुक्+/उ/ल'[५]।

अंत —'दोउ'[६], 'राजरु'—'राजर्+/उ/'[७], सानुनासिकता 'लगुँ'—'लग्+/उ/'[८]।

/ऊ/ आरभ—'ऊगत'[९], 'ऊपर'[१०], 'ऊचारिये'[११], 'ऊचे'[१२]।

मध्य —'रजपूत'[१३] —'रजप्+/ऊ/त', 'सूर'—'स्+/ऊ/र'[१४]।

अंत —'तंबू'—'तब्+/ऊ/'[१५], 'नरू'—'नर+/ऊ/'[१६], 'कोऊ'[१७], सानुनासिकता सहित 'कूँ'~कू+/ऊ/'[१८], 'सूँ'~'स्+/ऊ/'[१९]।

/ए/ ध्वनि-सकेत का प्रयोग केवल इस प्रकार के लिखित रूप मे एक ही शब्द मे हुआ है और वह शब्द के आरभ मे[२०]। मध्य तथा अंत मे इसका मात्रा-रूप प्रचुर मात्रा मे उपलब्ध है।

/अै/ आरभ—'अैन'[२१], 'अैसेस'[२२], 'अैसी'[२३], सानुनासिक 'अैंन'[२४]।

मध्य —'आमैरि'~'आम्+/अै/रि'[२५], 'कैसी'~'क्+/अै/सी'[२६], 'यसी'~'य्+/अै/सी'[२७], सानुनासिक 'करिहैंच'~'करिह्+/अै/च'[२८]।

अंत —'करैं'~'कर्+/अै/'[२९], 'हलकारैं'~'हलकार्+/अै/'[३०], सानुनासिक 'बातैं'—'बात्+/अै/'[३१]।

/ओ/ आरभ—'ओर'[३२]।

मध्य —'भोर'—'भ्+/ओ/र'[३३], 'वहोर'—'वह्+/ओ/र'[३४], सानुनासिक 'जोहार'—'ज्+/ओ/हार[३५]।

अंत —'को'—'क्+/ओ/'[३७], 'कहो'—'कह्+/ओ/'[३८], सानुनासिक 'योँ'—'य्+/ओ/'[३९], 'रहलो'—'रहल्+/ओ/'[४०]।

---

१ छं० सं० ४०४। २ छं० सं० १६५। ३. छं० सं० ३६३। ४ छं० सं० १६६। ५ छं० सं० १६६। ६ छं० सं० ८५। ७. छं० सं० १६०। ८ छं० सं० १। ९ छं० स० २१५। १० छं० स० ९५। ११ छं० सं० ३३६। १२ छं० सं० २१३। १३ छं० स० २५९। १४ छं० स० २६०। १५ छं० सं० २६१। १६ छं० स० ८०। १७. छं० स० ८५। १८ छं० स० २५८। १९ छं० स० २६१। २० छं० सं० १३१ आदि। २१ छं० सं० १०४, ११०। २२ छं० स० ६। २३. छं० स० १३३। २४ छं० सं० २३५। २५ छं० सं० ४३९। २६ छं० सं० ४४१। २७ छं० स० ४४१। २८. छं० सं० ३२७। २९. छं० सं० ४४१। ३० छं०स० ४३६। ३१ छं० सं० ३५०। ३२ छं० स० १२६। ३३. छं० स० २५७। ३४ छं० सं० २८। ३५ छं० स० १२८। ३६ छं० स० २५७। ३७ छं० स० २५७। ३८ छं० स० ३८। ३९ छं० स० २१०।

/औ/ आरभ—'औगुण'[१]।

मध्य —'चौडे'⌐'च्+/औ डे'[२], 'दौरि'⌐'द्+/औ/रि'[३],
सानुनासिक 'पहौंचे'⌐'पह्+/औ/चे'[४]।

अत —'जाणौ'⌐'जाण्+/औ/'[५], 'कह्यौ'⌐'कह्य+/औ/'[६],
सानुनासिक 'सौं'⌐'स+/औं/'[७], ।

/ए/ यह ध्वनि-सकेत इस रूप मे केवल एक ही प्रसग मे देखा जाता है। परन्तु इससे सवधित मात्राएँ सामान्य तथा सानुनासिक रूप मे मध्य तथा अन्त स्थानो मे पाई जाती हैं—

मध्य —'सेरगढ'⌐'स्+/ए/रगढ'[८], 'लीनेस'⌐'लीन्+/ए/स'[९],
'येक'⌐'य्+/ए/क'[१०], सानुनासिक रूप मे 'भेंट'⌐भ्+/ए/ट'[११]।

अत —'जिते'⌐'जित्+/ए/'[१२], 'किते'⌐'कित्+/ए/'[१३], 'षटे' 'षट्+/ए/'[१४], सानुनासिक 'मे'⌐'म्+/ए/'[१५]।

इसके अतिरिक्त-स्वर सकेतो मे /य/ का योगदान भी विशेष देखने योग्य है। पहले कहा ही जा चुका है कि 'एक' को छोड़कर /ए/ का कार्य /य/ द्वारा ही होता है। और भी देखिये।

/अ/ 'यर'[१६] आधुनिक 'अर'।

/इ/ 'यन'[१७] आधुनिक' इन'।

/अै/ 'यैस'[१८] आधुनिक 'अैस', 'येकने'[१९], 'यते'[२०], 'यती'[२१], 'येस'[२२], 'यन'[२३]।

ध्वनियो सम्बन्धी कुछ टिप्पणियाँ नीचे लिखे अनुसार हैं—

(क) केवल 'एक' शब्द को छोडकर /ए/ अथवा /अे/ ध्वनि-संकेत नहीं मिलता। मात्रा रूप मे यह ध्वनि बराबर मिलती है।

(ख) विसर्ग ध्वनि का अभाव है। इमी कारण /अः/ विसर्ग ध्वनि का रूप भी नही पाया जाता।

---

१ छ० सं० ३८५। २ छ०स० २५८। ३ छं०सं० २६१। ४ छं० स० १९५। ५ छ० स० ३८६। ६ छ० सं० ३८६। ७ छ० सं० २८२। ८ छं० सं० २१०। ९. छ० स० २०८। १० छ० स० २१३। ११ छ० सं० २०८। १२. छं० सं० २५९। १३ छ० सं० २५९। १४. छं० सं० १९०। १५ छं० सं० २६, १३०। १६. छं० सं० १३१। १७. छं० स० २३९। १८. छं० सं० १६६। १९ छ० स० ४४६। २० छं० स० २१२। २१ छं० सं० १६४। २२. छं० स० १८१। २३ छ० स० ३५२।

(ग) /अ/ के दो लिखित रूप मिलते है—/अ/ ⌐ [अ] तथा [अ] किन्तु इस पुस्तक मे केवल एक ही रूप स्वीकार किया गया है।

(घ) /अै/ का एक ही रूप मिलता है, [ऐ] अथवा [अं] उपलब्ध नही होते।

(ड) जैसा ऊपर स्वर-वितरण मे स्पष्ट किया जा चुका है, ध्वनियो की सानुनासिकता बहुत स्थानो मे दिखाई देती है।

(च) कही-कही आधुनिक उच्चारण के अनुसार शब्द का रूप अंकित किया गया है। यथा—

'ग्रान' इस पुस्तक मैं 'ग्रान'[1], 'ठाम' इस पुस्तक मे 'ठाम'[2], 'काम' इस पुस्तक मे 'काम'[3]।

किन्तु लिपिकार इस प्रवृत्ति का यदाकदा ही प्रयोग करता प्रतीत होता है। अत इस प्रवृत्ति के आधार पर यह तो नही कहा जा सकता कि अकन अधिक वैज्ञानिक है, किन्तु इस ओर लेखक का ध्यान कभी-कभो आकर्षित हो जाता है, ऐसा अवश्य प्रतीत होता है। और इसी कारण जब उसका ध्यान इस ओर जाता है, तो लेखन-परपरा के अनुकूल शब्दो को न लिखकर उच्चारण के अनुसार लिखता है।

खडी बोली मे 'सानुनासिकता' की एक विशेष प्रवृत्ति दिखाई देती है। कई विद्वानो ने इस पर प्रयोगशालीय कार्य भी किया है।[4] ऐसा प्रतीत होता है कि यह आधुनिक खडी बोली की ही प्रवृत्ति नही है। बोलियो मे भी यह बात पाई जाती है, और हो सकता है, बोलियो के स्थान पर जब खड़ी बोली प्रचलित हुई, तो सानुनासिकता चलने लगी।

(छ) प्राय सभी स्वर-ध्वनियो के सानुनासिक रूप पाये जाते है। उदाहरण यथास्थान दिए गए हैं।

(ज) /ए/, /ऐ/[5] के अतिरिक्त स्वर-सकेतन मे कोई विशेष उल्लेखनीय बात नही है।

---

१ छं० स० १६४। २ छ० सं० १८, ७० आदि। ३ छं० सं० १६७। ४. आर० के० रस्तोगी—लदन विश्वविद्यालय मे—'हिंदी मे सानुनासिकता'। ५. /ए/ का कार्य /य/ से चलाया गया, तथा /ऐ/ के लिए /अै/ का प्रयोग किया गया है—इस ध्वनि-संकेत का यही रूप काका कालेलकर ने अपने सुझावो मे नागरी लिपि के सुधार-संदर्भ मे प्रस्तुत किया था।

(झ) मात्राओ के रूप इस प्रकार मिलते हैं—

/अ/ की मात्रा प्राचीन परम्परा के अनुसार कोई चिह्न नही।
/आ/ की मात्रा 'ा'
/इ/ की मात्रा 'ि'।
/ई/ की मात्रा 'ी'।
/उ/ की मात्रा 'ु'।
/ऊ/ की मात्रा 'ू'।
/ए/ का मात्रा 'े'।
(यह ध्वनि-सकेत स्वतत्र रूप में तो केवल एक शब्द मे दिखाई देता है, मात्रा यथावत् मिलती है।)
/ऐ/ की मात्रा 'ै'।
/ओ/ की मात्रा 'ो'।
/औ/ की मात्रा 'ौ'।
सानुनासिक /अ/ 'ं'।

(ञ) पुस्तक मे विसर्गों का प्रयोग कही भी नही मिलता। प्राचीन भारतीय आर्य भाषा—सस्कृत—मे विसर्गों का प्रयोग यथेष्ट मात्रा मे था, पर कालान्तर मे यह प्रयोग धीरे-धीरे समाप्त हो गया। आधुनिक भारतीय आर्य भाषाओ मे संस्कृत शब्दो का तत्सम रूप लिए जाने से इस ओर पुन प्रवृत्ति हो चली है। विसर्गों को हिन्दी का कहे अथवा सस्कृत का ही—इसमे विद्वानो का मतभेद है। कुछ का तो निश्चित मत है कि विसर्ग हिंदी के नही माने जाने चाहिएँ—प्रथम तो वैसे ही इनका प्रयोग बहुत कम होता है, दूसरे हिंदी का हिदीत्व जैसा तद्भव रूपो मे विकसित होता दिखाई देता है, वैसा तत्सम रूपो मे नही।

(ट) /ऐ/ तथा /औ/ का प्रयोग—

स्थान-भेद से इन ध्वनियो के दो उच्चरित रूप सुनाई पडते हैं—एक पश्चिमी-हिन्दी प्रान्त मे, दूसरा पूर्वो हिन्दी-प्रान्त मे। जैसा इस पुस्तक की छद-बद्धता से प्रतीत होता है, इन ध्वनियो को पश्चिमी हिन्दी-प्रान्त मे उच्चरित सामान्य रूप मे लिया गया है। यथा—

/ऐ/—'कै'[1], 'अठारैसै'[2]।
/औ/—'कौण'[3], 'फौजै'[4]।
'क्+[इ]', 'अठार्+[इ] सै'।
'क्+[उ] ण', 'फ्+[उ] जै'।

पीछे लिखे रूपो मे नही। और यह स्वाभाविक ही है,

---

१. छं० सं० १। २ छं० सं० ४। ३ छं० सं० २। ४. छं० सं० ६१।

क्योकि प्रतापरासो की भाषा व्रज है, जो पश्चिमी हिन्दी की एक शाखा है।

(ठ) /ऋ/ ध्वनि का स्वतत्र प्रयोग कही नही मिलता। जहाँ भी इसकी आवश्यकता हुई है, /रि/ द्वारा ही व्यक्त किया गया है—

(१) सुनत वचन रिष सीत के, सग लै गये तास।
दई राषि रिजनीन सग, वन घन ग्रहै निवास ॥[1]

(२) आई फुरमाई अवधि, जब रिष बूझे राम।[2]

किन्तु इसका अस्तित्व अवश्य स्वीकार किया गया है। यह अस्तित्व, सभवत., स्वर की अपेक्षा व्यजन के रूप मे अधिक है—जैसे ऊपर के उदाहरणो से स्पष्ट भी होता है।

मात्रा के रूप मे /ऋ/ का प्रयोग अनेक शब्दो मे मिलना है और उसी रूप मे, जो आज प्रचलित है, अर्थात् [ृ]। साथ ही इस को व्यजन रूप मे स्वीकार करके सयुक्त व्यजन के रूप मे भी देखा जा सकता है और तब इसका रूप [्र]— इस प्रकार है। जैसे—'नृप'[3], 'त्रप'[4], 'वृजि'[5], 'व्रजधर'[6]।

(ड) स्वर के रूप मे /य/ का प्रयोग। जैसा ऊपर लिखा जा चुका है, /ए/ ध्वनि के लिए /ए/ संकेत केवल एक प्रसग मे प्रयुक्त हुआ है। इसके स्थान मे /य/ ध्वनि-सकेत दिखाई देता है और सभवत इसका उच्चारण भी /य/ के रूप मे होता रहा होगा—अतः इस ध्वनि-सकेत को हमने स्वर-ध्वनियो मे शामिल नही किया है, व्यजन-ध्वनियो के सम्मिलित किया जावेगा। आज तक भी यह /य/, /व/, /ए/ की समस्या मिटी नही है। उदाहरण के लिए 'जावेगा' शब्द लीजिए। इसके कम-से-कम तीन रूप तो प्रचलित हैं ही—

'जाएगा', 'जायेगा', 'जावेगा'।

'एक' के स्थान पर 'यक' का प्रयोग, मुसलमानी प्रभाव के कारण हो सकता है, और इसे—

---

१. छं० सं० ११। २. छं० सं० १४। ३. छं० सं० २२, २६, ३८, ४०, ४३, १२८ आदि। ४. छं० सं० १६। ५. छं० सं० २२८। ६. छं० सं० ८६।

'एक' ~ [यक][1], [येक][2] साथ ही 'येकने', 'येको' आदि प्रयोग भी मिलते है।

'ऐसा' ~ ['यैस][3] [येस][4] प्रयोग भी हैं।

इसके अतिरिक्त /य/ कही-कही/आधुनिक /इ/ ध्वनि का भी कार्य करता दिखाई देता है।

आधुनिक 'इतने', इस पुस्तक मे 'यतने'[5]

आधुनिक 'इतनी', इस पुस्तक मे 'यतनी' 'यती'[6]

आधुनिक (बोली) 'इतै', इस पुस्तक मे 'यतै'[7]

(ढ) /व/ का आधुनिक स्वर-ध्वनि के रूप मे प्रयोग। प्रायः देखा जाता है कि आधुनिक हिन्दी मे भी /व/ ध्वनि कई स्वरो की स्थानापन्न बन जाती है। यथा—

'कौवा'—'कौआ' के स्थान पर

'हुवे'—'हुए' के स्थान पर

बोलियो मे तो इस प्रवृत्ति का और भी प्राचुर्य है। प्रस्तुत पुस्तक मे आधुनिक /ओ/ ध्वनि के स्थान पर इसका प्रयोग पाया जाता है। कही-कहीं /उ/ ध्वनि के स्थान पर भी इसका प्रयोग हुआ है।

/ओ/ आधुनिक 'ओर', इस पुस्तक मे 'वोर'[8]

आधुनिक 'ओट', इस पुस्तक मे 'वोट'[9]

/उ/ आधुनिक 'उनसो' इस पुस्तक मे 'वनसो'[10]। राजस्थान में आज भी 'वठै', 'उठै' दोनों प्रयोग सुने जाते हैं। इस पुस्तक मे 'वतै'[11], 'वत'[12] आदि प्रयोग हुए है, जो 'उधर' शब्द के समानार्थी हैं।

/य/, /व/ के ये प्रयोग अभी तक चल रहे है, और हिन्दी के स्थिरीकरण मे इनका रूप-निर्धारण करना बहुत ही आवश्यक है।

स्वर-समुच्चय

स्थान-स्थान पर दो स्वर-ध्वनियाँ साथ-साथ भी प्रयुक्त हुई हैं—

/अ/ + /ई/—'दई'[13], 'लीलई'[14], 'राजई'[15]

---

१ छं० सं० ६६, ६७, ६८, ७७, ९१, १०५, ११४ आदि। २ छं० सं० ४६, १०३, १२१। ३ छं० सं० १६६। ४ छं० स० १८१। ५ छं० सं० २११। ६. छं० स०, १६५। ७ छं० सं० २६१। ८. छं० स० २९, ३७, १२६, १४२, २८३ आदि। ९ छं० सं० ६, २७ आदि। १०. छं० स० १६६। ११ छं० सं० २५९। १२. छं० स० २१६। १३. छं० सं० ११। १४. छं० सं० १३५। १५ छं० सं० १६५।

/अ/+/उ/—'वउ'[१]

/आ/+/इ/—'आइय'[२], 'भाइय'[३]

/आ/+/ई/—'लड़ाई'[४], 'पाई'[५], 'रचाई'[६]

सानुनासिक भी 'गुसाईंन'[७]

/उ/+/ई/—'हुई'[८]

/ए/+/ई/—'हरेई'[९]

/ओ/+/इ/—'जोइये'[१०], 'सोइ'[११]

/ओ/+/ई/- 'दोई'[१२], 'जोई'[१३], 'सोई'[१४]

/ओ/+/उ/—'दोउ'[१५]

/ओ/+/ऊ/—'कोऊ'[१६]

व्यंजन-ध्वनियाँ

क	ख	ग	घ	
च	छ	ज	झ[१७]	
ट	ठ	ड (ड़)[१८]	ढ (ढ़)[१९]	ण
त	थ	द	ध	न
प	फ	ब (व)[२०]	भ	म
य	र	ल	व (ब)[२१]	
श	ष (श)	स	ह	

क्ष	त्र	(सयुक्त ध्वनियाँ)

---

१. छ० सं० २०३ । २. छं० सं० १६३ । ३. छं० सं० १६३ । ४. छ० सं० २६१ । ५. छं० सं० २६१ । ६. छं० सं० २३३ । ७ छं० सं० २६३ । ८ छं० सं० ३८६ । ९. छं० सं० १८७ । १०. छं० स० ३०५ । ११. छं० स० १५२ । १२. छ० सं० १३० । १६. छं० सं० ३०६ । १४ छं० सं० २२७ । १५ छं० सं० ८५ । १६. छं० स० ८१ । १७. हस्तलिखित प्रति मे /झ/ का प्राचीन रूप मिलता है, परन्तु प्रेस मे /झ/ होने के कारण यही ध्वनि संकेत लगाया गया हैं । १८, १९. /ड़/ तथा /ढ़/ ध्वनियाँ भी बराबर मिलती हैं। हिन्दी मे भी ये ध्वनियाँ हैं । जैसे 'पढ़ना', 'पढ़ना' परन्तु वर्णमाला का ज्ञान कराते समय इन ध्वनियों को नहीं बताया जाता। इस पुस्तक मे भी 'गढ़े' (छ० स० २१५) 'गढ़' (छ० सं० २१५) प्रयुक्त हुए हैं। २०, २१. /ब/ तथा /व/ मे कोई अन्तर नहीं किया गया है। आधुनिक खड़ी बोली में ये दो अलग ध्वनियाँ हैं और इनके ध्वनिग्राम भी अलग हैं। पर इस पुस्तक मे कोई अन्तर किया गया प्रतीत नहीं होता।

इन व्यंजन-ध्वनियों का आधुनिक रूप इस प्रकार है :

			ओष्ठ्य	दन्तोष्ठ्य	दन्त्य	वर्त्स्य	मूर्द्धन्य	तालु वर्त्स्य	तालव्य	कण्ठ्य	काकल्य
स्पर्श	अल्पप्राण	अघोष	प्		त्		ट्			क्	
		सघोष	ब्		द्		ड्			ग्	
	महाप्राण	अघोष	फ्		थ्		ठ्			ख्	
		सघोष	भ्		ध्		ढ्			घ्	
स्पर्श सघर्षी	अल्पप्राण	अघोष						च्			
		सघोष						ज्			
	महाप्राण	अघोष						छ			
		सघोष						झ्			
संघर्षी		अघोष				स्	[ष्]	श्			
		सघोष									ह्
अनुनासिक		सघोष	म्			न्	ण्				
पार्श्विक		सघोष				ल्					
लुण्ठित		सघोष				र्					
उत्क्षिप्त	अल्पप्राण	सघोष					ड़्				
	महाप्राण	सघोष					ढ़्				
अर्द्ध स्वर		सघोष	[व]	व्					य्		

[ष्] यह ध्वनि उस समय के उच्चारणानुसार आधुनिक/ख/ही प्रतीत होती है, 'रिष', 'षट' आदि शब्दो मे भी; 'अष्ट' में निश्चित रूप से ऊष्म ध्वनि है।

मूल स्वर-ध्वनियो के आधार पर प्रतापरासो की स्वर-ध्वनियो तथा व्यजन-ध्वनियो का अन्तर्राष्ट्रीय चार्ट के अनुसार उच्चारण-स्थान नियत करना सभव नही, क्योकि ध्वनियो के अंकित रूप तो हमे प्राप्त हैं, उच्चरित रूप का अभाव है। जहाँ कही भी इन ध्वनियो के उच्चरित रूप की वात कही गई है, वहाँ यही अनुमान लगाया गया है कि आज के अनुसार ही ये ध्वनिया निसृत होती होगी। अत इस वात का प्रयास करना व्यर्थ-सा है कि उच्चारण की दृष्टि से इन ध्वनियो का सम्यक् स्थान निर्धारित किया जाय।

कुछ विशेष बातें—

(१) /ष/ वर्ण का दो ध्वनियो के रूप मे प्रयोग हुआ है—

/ष/~[ख], [ष] वर्त्तमान रूप

यथा [ख] 'पुस्यालीराम',[१] 'षत्री',[२] 'षेत',[३] 'षवर',[४] 'षत',[५] 'पिलत',[६] 'पोज',[७] 'पीचो',[८] 'षेडे',[९] 'षरचन',[१०] 'षरी',[११] 'पास',[१२] 'षिसे',[१३] 'षाई',[१४]।

[ष] 'रिष',[१५] 'रिषनीन',[१६] 'अष्टजाम',[१७]।

मूर्द्धन्य-ध्वनि के रूप मे /ष/ ध्वनि, जो आधुनिक हिंदी मे समाप्तप्राय. है, इस पुस्तक मे भी नही मिलती। /ष/ का अधिक प्रयोग आधुनिक /ख/ के रूप मे ही मिलता है। किसी समय यह प्रचार इनना अधिक था कि पुराने सस्कारो के फलस्वरूप मैं स्वय कभी-कभी 'तमा/खू/' के स्थान पर 'तमा/षू/' लिख जाता हूँ। इसका कारण परिवार मे /ख/ ध्वनि को इस रूप मे लिखा जाना है।

इस कृति मे /ष/ के दो स्पष्ट रूप हैं—

/ष/~[श][१८], [ख] कथ्य प्रयोग का वाहुल्य है। लिखित/ख/वर्ण तो मिलता ही नही है।

---

१. छ० स० २०६। २. छं० सं० २६, ११४, ११५, १२४ आदि। ३ छ० स० ४१, १३० आदि। ४ छ० स० ७०, ८५, १२६ आदि। ५ छ० सं० ६०, ६१, ६२ आदि। ६ छ० स० ४३१। ७ छ० स० ११४। ८. छ० स० १२६, २५६। ९ छ सं० २१०। १०. छ० स० ७७। ११. छं० स० ४०४। १२ छं० स० १६३। १३. छं० स० ३४१। १४. छं म० ३४०। १५ छ० सं० १६, २०, ७७, ८५ आदि। १६ छ० स० ११। १७ छं० स० ४६५। १८ आधुनिक [ष] को समवत उस समय [ख] ध्वनि ही माना जाता रहा होगा। यथा— रिष' (छं० सं० ६), 'सतोष' (छ० सं० ५५), आजकल इन उदाहरणों मे प्रयुक्त [ष], 'श' बोला जाता है।

'श' का स्वतत्र प्रयोग कई स्थानो पर मिलता है—

'शकति',[१] 'श्रवण',[२] 'श्रीमुष',[३] 'श्रोन'[४], किन्तु अपेक्षाकृत कम। ऊपर लिखे चार उदाहरणो मे केवल एक उदाहरण ही 'श' को स्वतन्त्र रूप मे प्रस्तुत कर रहा है, अन्य तीन मे उसका सयोग /र/ के साथ है। प्रायः संस्कृत तथा विदेशी /श/ ध्वनि /स/ के रूप मे मिलती है। अत /श/ के दो सहस्वन हैं—

/श/ ~ [श], [स]

ऊपर [श] के उदाहरण दिए गए हैं। [स] के अनेक उदाहरण है—

'पुसी',[५] 'नरेस',[६] 'सुभ',[७] 'दिसा',[८] 'साह',[९] 'पेस',[१०] 'सेष'[११]।

(२) /ङ/, /ञ/ध्वनियाँ—आधुनिक हिन्दी खडी बोली मे ये ध्वनियाँ समाप्तप्राय हैं। सस्कृत तथा बोलियो मे इनका प्रयोग देखा जा सकता है। उदाहरण के लिए हिन्दी मे प्रयुक्त 'वाङ्मय' अथवा व्रजभाषा का 'नाञ्' आदि शब्द लिए जा सकते हैं। इसी आधार पर आजकल कुछ विद्वानों द्वारा इन ध्वनि-सकेतो को हिंदी की वर्णमाला से हटा देने के प्रस्ताव भी आ रहे हैं। सरकारी तथा गैर सरकारी कुछ समितियो के सुझाव भी इसी प्रकार के हैं।† इन ध्वनियो के सकेत प्रतापरासो मे भी नही मिलते, किन्तु कवि इन ध्वनियो का अस्तित्व अवश्य स्वीकार करता है। क्योकि जब वह नागरी वर्णमाला के वर्णों को गिनाता है‡, तो /ङ/, /ञ/ के स्थानो मे /न/ का प्रयोग करता है, इनके अस्तित्व को भुलाता नही। हम यह कह सकते हैं कि कवि ने एक व्यावहारिक दृष्टिकोण अपनाया है और इन ध्वनियो को /न/ की सह-ध्वनियो के रूप में स्वीकार किया है। उसके अनुसार—

/न/ ~ [ङ],[१२] [ञ][१३] [न][१४]

---

१ छं० सं० २। २ छ० स० १०३। ३. छ० सं० ११४। ४ छं० स० १३१। ५ छं० सं० १६८। ६ छ० सं० २१, ४७ आदि। ७ छ० स० १। ८ छ० स० ८१। ९ छं० स० ४३०। १०. छं० सं० ४०६। ११ छं० सं० ११८, २३६। १२ छ० सं० १३१। १३ छ० स० १३१। १४. छं० सं० १३१।

---

†इस संबंध मे लेखक द्वारा एक पत्र-वाचन के अखिल विश्व ध्वनि-विज्ञान सम्मेलन, मुस्टे (पश्चिम जर्मनी) मे होने को है।

‡छं० सं० १३१, प्रभाव तृतीय।

कवि द्वारा स्वीकृत ध्वनियाँ†

छन्द मोतीदाम—

/उ/ उर उर सो नर सोहै उछाह।
/न/ नर नर नेम लिये षग वाह॥
/म/ मर मर माचि रही दल दोय।
/स/ सर सर सेल पडै भड होय॥‡

/क/ कर कर कायर रोम सुकपि।
/ख/ षर षर मोर लई सिर चपि॥
/ग/ गर गर बजी अरव विरट।
/घ/ घर घर घोरत तास त्रमट॥
[ङ] /न/ नर नर नैंक न त्यागत टेक।
/च/ चर चर चंपत एक कू एक॥
/छ/ छर छर होय छड़ालस पार।
/ज/ जर जर जोय वहै षगधार।
/झ/ झर झर श्रोन बहैत सुरंग।
[ञ] /न/ नर नर रूप चढ्यो नर अग॥
/ट/ टर टर येक न येक टरंत।
/ठ/ ठर ठर ठीक सु पाव धरत॥
/ड/ डर डर त्यागि दियो दल दोय।
/ढ/ ढर ढर जो गज चामर होय॥
/ण/ रण रण रचि रहो रण जग।*
/त/ तर तर तेग वहत अभग॥
/थ/ थक थक थाकियो रवि रथ।
/द/ दर दर टूटत सूर सुमथ॥

---

†तृतीय प्रभाव (मावडा युद्ध-वर्णन) छ० सं० १३१।

‡/उ/, /न/, /म/ तथा /स/—ये चार ध्वनियाँ "ॐ नम. सिद्धम्" के द्योतनार्थ दी गई प्रतीत होती हैं।

*/ण/ का प्रयोग शब्द के आरम्भ मे नहीं पाया जाता, अत कवि ने बड़ी युक्ति से उसका भत्य प्रयोग करके ध्वनि का स्वतंत्र अस्तित्व प्रतिपादित किया है।

/घ/ घर घर तोवन के घमचक ।
/न/ नर नर वाजि गजस गरक ॥
/प/ पर पर पोलिये दल बहक ।
/फ/ फर फर ते पचरग फरक ॥
/ब/ बर बर षेत पडे हरसाह ।†
/भ/ भर भर भट जोहार भजाय ॥
/म/ मर मर मान पडे चहुवान ।
/य/ यर यर अजमेरी सुराण ॥
/र/ रर रर रण दलो पडि अवाज ।
/ल/ लर लर लछमण कंवार ॥
/व/ वर वर लागि पड़े गुरुसाहि ।†
(श) /स/ सर सर सूर किलकित धाय ॥
(ष) /ख/ षर षर षेत षीस्यो जोंहार ।‡
/स/ सर सर नोवति नृपति दुवार ॥

/ह/ आश्चर्य है कि कवि ने /ह/ ध्वनि-सबधी पक्ति नही लिखी। इस मे तो कोई सदेह नही कि कवि ने इस ध्वनि का सभी रूपों और स्थानो मे प्रयोग किया है, परन्तु इस वर्णमाला-विवरण मे इस वर्ण का अभाव है। इसका एक कारण यह हो सकता है कि यदि /ह/ पर एक पक्ति लिखी जाती—जैसा प्रत्येक अन्य वर्ण के लिए किया गया है—जो दूसरी पक्ति लिखने के लिए कवि के पास कोई अन्य ध्वनि बाकी नही थी। प्रचलित /क्ष/, /त्र/, /ज्ञ/ ध्वनियो को कवि ने इस विवरण मे स्थान नही दिया है। इन ध्वनियो मे से कवि ने प्रथम दो ध्वनियो का प्रयोग तो प्रथक् ध्वनि-सकेतो के रूप मे किया भी है—

---

†कवि ने /ब/ तथा /व/ के स्वतंत्र अस्तित्व तो स्वीकार किए हैं, परन्तु आधुनिक प्रयोग के अनुसार उनका अंतर नहीं दिखाया है और पुस्तक मे अनेक स्थानों पर इन ध्वनियों का उलटफेर देखा जाता है।

‡कवि ने तीनों ध्वनियों—/श/, /ष/ तथा /स/—का अस्तित्व स्वीकार किया है, क्योंकि तीनों के लिए पृथक् पंक्तियां लिखी हैं, परन्तु /श/ तथा /स/ दोनों के लिए /स/ का ही प्रयोग करके यह बताया है कि उसे /स/~[श] [स] मानने मे आपत्ति नहीं। इसी प्रकार की प्रवृत्ति भी बराबर देखने को मिलती है—/श/ का प्रयोग बहुत कम देखने को मिलता है। /ष/ ध्वनि तो कवि ने मानी है, किन्तु प्रचलित ध्वनि-प्रयोग के आधार पर उसे आधुनिक /ख/ध्वनि का ही स्थानापन्न स्वीकृत किया जाना प्रतीत होता है। इस पक्ति को पढ़ने में ही आधुनिक /ष/ ध्वनि न बोलकर /ख/ उच्चरित करना ही अधिक समीचीन प्रतीत होता है।

/क्ष/ 'अक्षर'[१]

/त्र/ आदि—'त्रियो'[२], 'त्रमाट'[३], 'त्रहूँ'[४], 'त्रिय'[५], 'त्रतीयेस'[६],

अंत—'पुत्री'[७], 'सत्रु'।[८]

ऊपर के उद्धरण से निकले हुए कुछ निष्कर्ष—

/न/ ‿ [ङ] [ञ] [न]

/न/ ~ [ण] विकल्प से

प्रयोग की दृष्टि से /ण/ का स्वतंत्र अस्तित्व भी है और राजस्थानी प्रभाव से अनेक स्थानो मे /न/ के स्थान पर भी प्रयुक्त हुआ है।

/व/ ‿ [व] [व] एक प्रकार से दोनो का अभेद।

/ष/ उच्चारण की दृष्टि से, प्रायः, /ख/ (दो-चार स्थानो को छोड कर)

/स/ ‿ [श] [स] प्रायः /स/ ही।

(३) /य/ अर्द्धस्वर तथा व्यजन दोनो रूपो मे

/य/ ~ [य] [य]।

उदाहरण [य] /इ/ तथा /ए/ के रूप मे

'होयस'[९], 'कीजिये'[१०], 'जोय'[११], 'किय'[१२], 'आय'[१३],
'येक'[१४], 'लियेस'[१५], 'लषिये'[१६], 'हुय'[१७]
[य] 'यो'[१८], 'या'[१९]—आदि
'त्यागि'[२०], 'ध्याय'[२१]—मध्य
'गाय'[२२], 'भाज्या'[२३]—अत्य स्वर से पूर्व

निष्कर्ष—

/य/ ‿ [य] [य] $\frac{\text{/इ/, /ए/}}{\text{अन्य}}$: $\frac{\text{स्वर‿अर्द्ध स्वर}}{\text{व्यंजन}}$

---

१ छं० स० १। २ छं० सं० २२। ३ छं० सं० ६४, ६६, १२८ आदि। ४. छं० स० ७८। ५ छं० स० ८८। ६ छं० सं० २६। ७. छं० सं० १०। ८ छं० स० ३। ९ छं० स० ५०। १०. छं० सं० १०५। ११. छं० स० १०, ५३, १०३, ११० आदि। १२ छं० सं० ११०। १३. छं० सं० १३४। १४ छं० स० ४६, १०३ आदि। १५ छं० सं० २०५। १६ छं० सं० १३६। १७ छं० सं० ८८। १८ छं० सं० १०१, १०३ ११७ आदि। १९ छं० स० १५, ८५, ६७ आदि। २० छं० स० १३१। २१ छं० सं० १४५। २२ छं० सं० ५२। २३. छं० सं० १३६।

(४) प्रतापरासो की लिखित ध्वनि-सकेतावलि के अनुसार

/ड/ — [ड] [ड]

/ढ/ — [ढ] [ढ]

/व/ [व] [व]

आधुनिक हिन्दी मे ये ध्वनियाँ अलग-अलग हैं, जैसे—

/ड/ 'डोला', /ड/ 'पकड'

/ढ/ 'ढकना', /ढ/ 'पढ'

/व/ 'बिस्तर', /व/ 'विनय'

शब्दो के आदि स्थान मे /ड़/ /ढ/ नही मिलते।

प्रतापरासो मे इनका अभेद है—

/ढ/, /ढ/ 'गढ'[१], 'गढ'[२]; 'चढै'[३], 'चढे'[४]

/ड/ /ड/ 'पडै'[५] 'पडे'[६], 'पीपलअेडै'[७] 'पेडे'[८], 'वड'[९], 'वड'[१०]

/ब/ /व/ 'नजब'[११], 'नजव'[१२], 'वदूक'[१३], 'वदूकै'[१४], 'वहै'[१५], 'वहै'[१६]

ऐसा तो नही कहा जा सकता कि इन शब्दो का उच्चारण ध्वनियो की दृष्टि से भी ऐसा ही था, जैसा कि लिखा गया है—क्योकि एक ही छद मे भी दोनो प्रकार के ध्वनि-सकेत देखे जाते हैं। हम इसे लिपिकार की असावधानी भी कहना उचित नही समझते, क्योकि अनुमान यही किया जाता है कि मूल प्रति मे भी इसी प्रकार की प्रवृत्ति रही होगी। इसका एक ही कारण समझ मे आता है कि उन दिनो, उस प्रान्त विशेष मे, इन ध्वनियो मे भेद-भाव नही रहा होगा। यह प्रवृत्ति आज भी देखी जाती है—बोलने तथा लिखने, दोनो मे ही। अत इनका इधर-उधर उलट-फेर होना स्वाभाविक-सा ही है।

उच्चारण सम्बन्धी कुछ अन्य बातें

(अ) राजस्थानी ध्वनि-प्रभाव—

ग्रन्थ की भाषा ब्रज है। परन्तु राजस्थान मे लिखे जाने के कारण, राजस्थान के राज्यो से सम्बन्धित होने से, राजस्थानी

---

१. छं० सं० ३१। २. छ० सं० २७। ३. छ० सं० ५५। ४ छं० स० ७४। ५. छं० स० ८५। ६ छं० सं० १३१। ७. छ० स० २१०। ८. छ० स० ४२८। ९. छं० स० ५१, ५४। १० छ० सं० २१०। ११ छ० स० २१७। १२ छ० स० २१८। १३ छं० सं० २३१। १४. छ० स० १८७। १५ छ० सं० १८९। १६ छ० स० १८९।

वोगे का चित्रण करने से कवि की भाषा पर राजस्थानी प्रभाव पड़ा है। इन सभी कारणो मे स्थान का प्रभाव अधिक महत्त्वपूर्ण है। वैसे व्यक्तियो का प्रभाव भी देखा गया है, जैसे सूदन द्वारा लिखित सुजानचरित्र मे, काव्य की भाषा व्रज होने पर भी, मुसलमान पात्रो द्वारा खडी वोली का प्रयोग कराया गया है।[†] इस पुस्तक मे यह प्रवृत्ति दिखाई नही देती। इसमे भी अनेक मुसलमान पात्र हैं—नजवखा, फीरोजखा, होशदारखा आदि। परन्तु वे व्रजभाषा ही वोलते हैं—

नजवखा—

'अलवर साहि सुठाँम किला यह हमकु दीजत।'[१]

होशदारखा—

'होसदारषा वोलिये, सुनतो यसो जुवाव।
वा घर या घर येकही, आनौं नजव नवाब॥'[२]

फीरोजखा—

'महाराज राजै नृपति नरेस।
दीजियेक हुकम प्रवेस॥[3]

कुछ शब्द प्रस्तुत हैं, जिन पर राजस्थानी ध्वनि-प्रभाव दिखाई देता है—

'पठाण'[४], 'कौण'[५], 'जाण'[६], 'वणी'[७], 'वपाण'[८], 'जीवणषा'[९], 'अणि'[१०], 'निभप'[११], 'हलद्या'[१२], 'सीसोद्या'[१३], 'सीध्यो'[१४], 'राम सेवग'[१५], 'सूं'[१६], 'राडि'[१७]।

यह स्वाभाविक ही है कि उच्चारण पर यह प्रभाव ढूंढाडी और मेवाती है।[‡]

---

१ छं स० २९८। २ छं० स० २४३। ३ छं० सं० १७६। ४. स० छ० ११८। ५ छं० स० २। ६ छं० स० २९। ७ छं० स० २०६। ८ छं० सं० २८। ९. छं० स० १७६। १० छं० स० ३६६। ११ छं० सं० ३५६। १२ छं० स० ३६३। १३ छं० स० ३६३। १४ छं० स० ४२१। १५. छं० सं० १७६। १६. छं० स० ७२। १७ छं० सं० १८५।

---

† "इस वास्ते तुम से अरज वहु भाति कीजत है वली।
अव हाथ उस पर रक्खिये तव लेइ जंग फते अली॥"

‡ अलवर के काफी हिस्से में अव भी मेव रहते हैं, जो मेवाती का प्रयोग करते हैं। ढूढाड देश का प्रभाव तो पड़ना ही चाहिए।

(आ) ब्रजभाषा-ध्वनि-प्रभाव सर्वत्र लक्षित है और इसी कारण मै इस काव्य को राजस्थानी ध्वनियो से किंचित प्रभावित ब्रजभाषा-काव्य मानता हूँ। ध्वनियो के अतिरिक्त शब्दो पर भी यह प्रभाव है।

(इ) सयुक्त (प्रायः सम-समुच्चय) उच्चरित ध्वनि के स्थान पर एक मात्र ध्वनि। यथा—

'हथ'[1] हथ्थ', 'भजिय'[2] 'भज्जिय', 'विरट'[3] 'विरट्ट', 'गरक'[4] 'गरक्क', 'चक'[5] 'चक्क', 'फरक'[6] 'फरक्क', 'रथ'[7] 'रथ्थ', 'मथ'[8] मथ्थ'।,

इसी प्रकार बहुत-से अन्य स्थानो मे—

'कछी अरबी तुरकीस ताजी'[9] पढने पर 'कच्छ्छी अरब्बी तुरक्कीस ताजी' उच्चरित होगा।

सस्कृत के उच्चारण नियमानुसार द्वित्व—

"नर नवलेस ब्रजपति सोई"[10] ('ब्रजप्पति' उच्चारण किया जायगा)

(ई) एक अन्य महत्त्वपूर्ण विशेषता—

अतिरिक्त /स/ का प्रयोग—(अनेक उदाहरणो मे से कुछ ही दिए जा रहे है)—

/अ/	'अगैस'[11]	'अटकैस'[12]	'अगै /स/',	'अटकै /स/'
/आ/	'आयेस'[13]	'आगैस'[14]	'आये /स/',	'आगै /स/'
/इ/	'इदरेस'[15]		'इदर /स/'	
/ई/	'ईदरेस'[16]		'ईदर /स/'	
/उ/	'उवरतस'[17]	'उमगेस'[18]	'उवरत /स/',	'उमगे /स/'
/औ/	'औसेस'[19]		'औसे /स/'	
/क/	'कीजैस'[20]	'कहीस'[21]	'कीजै /स/',	'कही /स/'
	'करनीस'[22]	'कोटस'[23]	'करनी /स/',	'कोट /स/'

१. छ० स० ३६७, 'ज्याये तो मो हथ ही, मारू तो मो हथ।' २. छं० स० ३१५ 'घने बड भजिय षगनसींह। ३ से ८ तक सभी छं० स० १३१ मे—३ गर गर वजी अरव विरट (अरव्व भी)। ४ नर नर वाजि गजस गरक (गजस्स भी)। ५ घर-घर तोवन के घम चक। ६ फर फर ते पचरंग फरक। ७ थक थक थाकि रवि रथ। ८ दर दर टूट सूर सु मथ। ९ छ० स० ३८२। १०. छ० स० २२७। ११ छं० सं० ३५५। १२ छ० सं० २७३। १३ छं० सं० २०८। १४ छ० स० २४६। १५. छ० स० ५७। १६. छ० सं० २२५। १७ छं० सं० २७। १८ छ० स० ३२१। १९ छ स० ६। २०. छ० सं० १९८। २१ छ० स० १९७। २२ छ० स० १८१। २३. छ० स० २१०।

/प/	'पत्रीस'[१]		'पत्री /स/'	
/ग/	'गजस'[२]	'गढस'[३]	'गज /स/',	'गढ़ /स/'
	'गाजीसथान'[४]		'गाजी /स/ थान'	
/घ/	'घडीयालस'[५]		'घडीयाल /स/'	
/च/	'चलियेस'[६]	'चढियेस'[७]	'चलिये /स/',	'चढ्ढिये /स/'
	'च्यारिस'[८]		'च्यारि /स/'	
/छ/	'छत्रीस'[९]		'छत्री /स/'	
/ज/	'जरीस'[१०]	'जैपुरस'[११]	'जरी /स/',	'जैपुर /स/'
	'जोडीस'[१२]	'जोडेस'[१३]	'जोडी /स/',	'जोडे /स/'
/ट/	'टरिहैस'[१४]	'टहलैस'[१५]	'टरिहै /स/',	'टहलै /स/'
/ठ/	'ठीकस'[१६]		'ठीक /स/'	
/ड/	'डेरास'[१७]		'डेरा /स/'	
/त/	'तुरकीस'[१८]	'तिनकेस'[१९]	'तुरकी /स/',	'तिनके /स/'
	'तेगस'[२०]	'तीजैस'[२१]	'तेग /स/',	'तीजै /स/'
/थ/	'थपेस'[२२]		'थपे /स/'	
/द/	'देषुस'[२३]	'दाहिनीस'[२४]	'देषु /स/',	'दाहिनी /स/'
	'दगोस'[२५]	'दूजैस'[२६]	'दगो /स/',	'दूजै /स/'
/ध/	'धरणीस'[२७]	'धूलैस'[२८]	'धरणी /स/',	'धूलै /स/'
	'धरेस'[२९]	'धारीस'[३०]	'धरे /स/',	'धारी /स/'
/न/	'नामस'[३१]	'निरवाणस'[३२]	'नाम/स/',	'निरवाण /स/'
	'नायस'[३३]	'नलस'[३४]	'नाय/स/',	'नल /स/'
/प/	'पाछैस'[३५]	'पछिमस'[३६]	'पाछै/स/',	'पछिम /स/'
	'प्रथमोस'[३७]	'पूछीस'[३८]	'प्रथमी/स/',	'पूछो /स/'

---

१ छं० सं० १२१। २ छं० सं० १३१। ३ छं० सं० २१०। ४ छं० सं० ३२७। ५. छं० सं० २१५। ६ छं० सं० १५२। ७. छं० सं० १७१। ८ छं० सं० ४३४। ९. छं० सं० ३५। १०. छं० सं० ४६०। ११. छं० सं० ४१४। १२ छं० सं० १०३। १३. छं० सं० १०३। ४ छं० सं० १७६। १५ छं० सं० ४४९। १६. छं० सं० २१०। १७ छं० सं० ४७। १८. छं० सं० ३७८। १९. छं० सं० १८१। २० छं० सं० ३७। २१. छं० सं० १८१। २२ छं० सं० ६। २३ छं० सं० ३३६। २४. छं० सं० १५२। २५ छं० सं० २०२। २६ छं० सं० १८१। २७ छं० सं० २१६। २८. छं० सं० २५६। २९ छं० सं० ४५। ३०. छं० सं० ३९४। ३१. छं० सं० ४१९। ३२ छं० सं० ३१५। ३३. छं० सं० ४०४। ३४. छं० सं० १९। ३५. छं० सं० २४६। ३६ छं० सं० ४१४। ३७ छं० सं० २८३। ३८. छं० सं० १०।

/फ/	'फिरईस'[१]	फिरजीस'[२]	फिरई/स/',	'फिरजी/स/'
/ब/	'बाहिरस'[३]	'बूझीस'[४]	'बाहिर/स/',	'बूझी/स/'
	'बोलोस'[५]	'बकसेस'[६]	'बोली/स/',	'बकसे/स/'
/भ/	'भनियेम'[७]	'भजेस'[८]	'भनिये/स/',	'भजे/स/'
	'भारीस'[९]	'भलेस'[१०]	'भारी/स/',	'भले/स/'
/म/	'मानैस[११]	'मिलियेस'[१२]	'मानै/स/'.	मिलिये/स/'
	'मुहीमस'[१३]	मनहारस'[१४]	'मुहीम/स/',	'मनहार/स/'
	'मत्रीस'[१५]	'मेरीस'[१६]	'मत्री/स/',	'मेरी/स/'
/र/	'रावराजास'[१७]	'रटकैस'[१८]	'रावराजा/स/',	'रटकै/स/'
/ल/	'लरिहैस'[१९]	'लीनैस'[२०]	'लरिहै/स/',	'लीने/स/'
	'लियेस'[२१]	'लगेस'[२२]	'लिये/स/'.	'लगे/स/'
/व/	'वीजोस'[२३]	'वढेस'[२४]	'वीजो/स/',	वढे/स/'
	'वसवैस'[२५]		'वसवै/स/'	
/स/	'साजेस'[२६]	'सीतासराम'[२७]	'साजे/स/',	'सीता/स/राम'
	'साम्हीस'[२८]	'सामीस'[२९]	'साम्ही/स/',	'सामी/स/'
	'सुतस'[३०]	सुनिहोस'[३१]	'सुत/स/',	'सुनिहो/स/'
/ह/	'हसतीस'[३२]	'होदास'[३३]	'हसती/स/ ,	'होदा/स/'
	'होवेस'[३४]	'हुनेस'[३५]	'होवे/स/',	'हुने/स/'

इन उदाहरणो मे /स/ का योग—

(क) प्रायः अत मे हुआ है।

(ख) कुछ स्थानो पर बीच मे भी है। जैसे—

'गाजी/स/थान'[३६], 'सीता/स/राम'[३७]

---

१ छ० स० २०८। २ छ० स० २२८। ३ छ स० ३२७। ४ छ० स० १६६। ५ छ० स० १०। ६. छ० स० ६। ७ छ० स० २१५। ८ छ० स २०८। ९ छ० स० १३८। १० छ० स० २८३। ११ छ० स० १९८। १२ छं० सं० २०८। १३ छ० स० १७४। १४. छ० सं० ७६। १५ छं० स० ४७। १६ छ० स० १०५। १७ छ० स० ३६६। १८ छ० स० ३८२। १९ छ स० १७६। २० छ० सं० २०८। २१ छ० स २०५। २२. छ० स० २०८। २३ छ० स० १९८। २४ छ० स० २४४। २५ छ स० ३७४। २६ छ० सं० १७१। २७ छ० स० २२९। २८. छ० स० ४३२। २९ छ० स० १२८। ३०. छ० स० २३। ३१ छ० स० १२१। ३२ छं०स० १२१। ३३ छ० स० २८३। ३४. छ० स० ४०४। ३५. छ० स० ३४०। ३६. छ०स० २२९। ३७ छ० सं० ३२७।

(ग) सभी प्रकार के पदो मे हुआ है—

सज्ञा . 'हसतीस'[1], 'होदास'[2], 'रावराजास'[3], 'गढस'[4], 'जैपुरस'[5], डेरास'[6]।

सर्वनाम .. 'मेरीस'[7], 'तिनकेस'[8]।

विशेषरण दुजैस'[9], तीजैस'[10], 'प्रथमीस'[11], 'च्यारिस'[12] (प्रायः सख्यावाचक विशेषरणो मे)।

क्रिया : 'पूछीस'[13], 'थपेस'[14], 'टरिहैस'[15], 'चलियेस'[16]।

अव्यय · आगैस'[17], 'अगैस'[18], 'अैसेस'[19], 'वाहिरम'[20]।

यह एक विचारणीय प्रश्न है कि कवि ने शब्दो के साथ /स/ का योग क्यो किया है। नीचे लिखी कुछ बाते सामने आती हैं—

(१) छद-भंग की दृष्टि से—जहाँ कही छद-भग होता दिखाई पडता है, कवि /स/ ध्वनि को वढा देता है। इस सभावित कारण मे तीन प्रश्न उठते हैं—

(क) क्या कवि इतनी निम्न कोटि का है कि उसे भरती की ध्वनियाँ पग-पग पर अपेक्षित होती हैं?

(ख) क्या एक /स/ ध्वनि के द्वारा ही कवि छद-भग दोप से वचने की चेष्टा करना चाहता है? ध्वनियाँ तो और भी अनेक हैं, फिर वह /स/ ध्वनि का प्रयोग सर्वत्र क्यो करता प्रतीत होता है?

(ग) कवि ने इस अतिरिक्त ध्वनि का प्रयोग प्राय. शब्द के अन्त मे किया है। दो-चार स्थानो पर वीच मे भी यह ध्वनि आ गई है। इस प्रकार का निश्चित प्रयोग क्या केवल छंद-भंग दोष को ही वचाने के लिए किया गया है?

इन तीनो प्रश्नो के कोई सतोपजनक उत्तर नही दिखाई देते। यह तो नही माना जा सकता कि कवि को भरती की ध्वनियाँ रखने की आवश्यकता

---

१ छं० सं० १२१। २. छ० सं० २८३। ३ छं० सं० ३६६। ४ छं० स० २१०।
५ छ० स० ४१४। ६ छ० स० ४७। ७. छ० स० १०५। ८ छ० स० १८१।
९ छ० स० १८१। १० छं० स० १८१। ११. छं० स० २४६। १२. छ० स० ४३४।
१३. छ० सं० १०। १४. छ० स० ६। १५ छं० सं० २१०। १६ छं० स० १५२।
१७ छ० सं० २४६। १८ छं० स० ३५५। १९ छ० स० ६। २०. छं० सं० ३२७।

पडी हो। यदि उसे ऐसा करने की आवश्यकता भी पडी थी, तो एक ही ध्वनि के पीछे पडना उचित प्रतीत नही होता। कवि का शब्द-कोष और भाषा-ज्ञान देखने पर हम उसे साधारणत. अच्छा ही स्थान देंगे। अतः इस अतिरिक्त वर्ण के प्रयोग मे कोई और कारण देखना चाहिए।

(२) संभव है १५०, २०० वर्ष पूर्व बोलचाल मे अतिरिक्त /स/ का प्रयोग था और वाणी-माधुर्य की दृष्टि से कवि ने भी इस ध्वनि का प्रयोग किया हो। इस सम्बन्ध मे व्यक्तिगत अनुभव के आधार पर एक निवेदन है।

मैं लगभग चार वर्षो तक अलवर मे रहा हूँ और वहाँ सामान्यत बोली जाने वाली बोली का भी कुछ अध्ययन किया है। आज भी /स/ ध्वनि का योग कई स्थानो पर पाया गया —

(१) अगर आप आ गए, तब /स्/ तौ मैं चला जाऊँगा।

(२) जब /स्/ तौ आप आ गए, तब /स्/ तौ मैं चला ही चलूँगा।

(३) अपन /स्/ तौ कभी पीछे हटते नहीं।

(४) रामू /स्/ तौ काम कर नही सकता।

१. यहाँ (क) अव्यय पद 'तब' 'जब'
(ख) सर्वनाम पद 'अपन'
(ग) संज्ञा पद 'रामू'

के साथ /स/ का योग है। और इस अतिरिक्त ध्वनि का योग भी शब्द के अत मे ही है।

२. /स/ ध्वनि के उपरान्त 'तौ' का प्रयोग सभी स्थानो पर हो रहा है। सभव है, अन्य प्रसगो मे भी प्रयोग होता हो, पर मैंने /स/ का प्रयोग इसी प्रकार के सदर्भ मे सुना था।

३ /स/ का प्रयोग क्रिया पदो के साथ मेरे सुनने मे नही आया।

४. ऐसा प्रतीत होता है कि /स/ का योग (क) अर्थ को बल प्रदान करने हेतु किया जा रहा हो, अथवा (ख) बोलने मे जो विलगता दिखाई दे रही है, उसको जोडने के लिए किया जा रहा हो। (ग) 'तौ' सहित शब्द एक ही मालूम होता है

'तबस्तौ'	यदाकदा	'तबस्+तौ'
'जबस्तौ'	,,	'जबस+तौ'

'तवस्तौ'	कभी-कभी	'तवस+तौ'
'अपनस्तौ'	,,	'अपनस+तौ'
'रामूस्तौ'	,,	'रामूस+तौ'

इन उदाहरणो के आधार पर यही कहा जा सकता है कि काव्यकार ने बोलचाल की यह सकारता स्वीकार कर ली हो। माधुर्य की अभिवृद्धि तो हुई ही है। सभवत आज की शब्द-सकारता १५०, २०० वर्ष पूर्व अधिक सकारता का अवशिष्ट मात्र हो। वैसे भी पद-पूर्ति की दृष्टि से स्थान-विशेष मे किसी एक ध्वनि को कवि अपनालेता है और स्थल-स्थल पर उसका प्रयोग करता है। सस्कृत, राजस्थानी आदि मे भी यह प्रवृत्ति देखी जाती है। यह प्रवृत्ति काव्य-शास्त्र से भी स्वीकृत है।

(उ) आधुनिक हिन्दी मे प्रयुक्त 'एक' -'ऐसा' 'लिए' 'सुनिए' आदि स्थान पर 'येक'[1] 'येस'[2] 'लिये'[3] 'सुनिये'[4] आदि।

इस स्थिति पर दो भागो मे विचार किया जा सकता है—

(१) 'एक'—'येक', 'यक'[5] भी आरम्भ मे प्रयुक्त
'ऐसा'—'येस, 'यैस'[6] भी

सभवतः यह विदेशी प्रभाव है। 'एक' को 'यक' कहा जाता है। कवि ने 'यक' को भी स्वीकार किया है और अनेक पक्तियो मे यह प्रयोग देखा जा सकता है। साथ ही हिन्दी के 'एक' को भी विदेशी 'यक' के साथ मिलाकर 'येक' बना दिया। जब /ए/ ध्वनि को 'ये' मे बदल दिया, तब 'ऐसा' के लिए 'येस', यैस', 'यसे'[7] आदि प्रयोग किए। इसके साथ ही—

'ऐसी'—'यसी'[8]	'इन्होने'—'यन'[12]
'इतने'—'यतने'[9]	'एकही'—'येकौ'[13]
'इतनी'—'यतनी'[10]	'इमि'—'यम'[14]
'एक ने'—'येक ने'[11]	'इन'—'यन'[15]

आदि मे /य/ का प्रयोग देखा जाता है।

---

१. छं० सं० ४६, १०३, १२७ आदि। २. छ० सं० १८१। ३. छं० सं० २०५। ४ छं० सं० ६८। ५ छं० सं० ६६, ६७, ६८, ७७ आदि। ६ छं० सं० १६६। ७ छ० सं० २४३। ८ छं० स० ८५, १४२। ९ छं० सं० १०३। १०. छं० सं० ५२। ११ छं० सं० ४४६। १२ छं० स० ३५२। १३ छं० स० ३१०। १४ छं०स० ६८। १५. छं० सं० २३९।

कवि ने केवल एक स्थान को छोडकर /ए/ का प्रयोग नही किया है। इसके स्थान पर /य/, /ये/, /यँ/ आदि का यथा अवसर प्रयोग किया है। साथ ही बहुत-से स्थानो पर आधुनिक आरम्भिक /इ/ ध्वनि भी /य/ के द्वारा प्रतिपादित की गई है। (ऊपर के उदाहरण देखे)।

(२) 'लिए' 'लिये' —अन्त मे (स्वर सहित) प्रयुक्त
'सुनिए' 'सुनिये'

/ये/ और /ए/—वर्तनी का यह विवाद आज भी चल रहा है। वर्णमाला-सुधार तथा वर्तनी-स्थिरीकरण की अनेक बाते और प्रस्ताव सुने जाने पर भी, /ये/ और /ए/ (यदाकदा /यी/ और /ई/) की समस्या हल होती दिखाई नही देती। वर्णमाला के तो कुछ प्रस्ताव भी उपस्थित हुए और आज भी प्रश्न चल रहा है, परन्तु शब्दो के अन्त मे आने वाले इन वर्णों के तो अभी तक सुझाव भी नही देखे गये। किशोरीदास वाजपेयी आदि ने अपना निष्कर्ष देने की चेष्टा अवश्य की, परन्तु विद्वानो ने अभी तक कुछ निश्चित् मत नही बनाया है और मनमाने रूप मे इनका प्रयोग किया जाता है। कभी-कभी एक ही लेखक विना किसी कारण के कभी एक प्रकार से लिखता है, कभी दूसरे प्रकार से। कवि ने /ए/ ध्वनि को स्वीकार न करके अपने को इस विवाद से बचा लिया है। जब वह /ए/ को मानता ही नही, तब

/ए/ ~ [ए] [ये]

का विवाद ही कैसा ? हिन्दी में—

'सुनि/ए/ ~ /ये', 'करि/ए/ ~ /ये', 'कीजि/ए/ ~ /ये'
'दि/ए/ ~ /ये', 'लि/ए/ ~ /ये', 'ग/ए/ ~ /ये'

बिना किसी अंतर के चलते हैं। इन अङ्कनो पर पर्याप्त विचार-विनिमय होकर कोई रूप स्थिर होना चाहिए। ध्वनि-विज्ञान, लिपि-विज्ञान, भाषा-विज्ञान आदि किसी भी दृष्टि से यह स्थिति वाञ्छनीय नही। जाचीक जीवण ने इस स्थिति को समाप्त कर दिया है, लिपिकार के लिए किसी प्रकार के विकल्प का प्रश्न ही नही छोडा।† /ए/ के स्थान पर /ये/ का प्रयोग आदि, मध्य, अंत—तीनो स्थानो मे हुआ है—

†एक स्थान पर जो /ए/ का प्रयोग मिलता है, उसे लिपिकार की भ्रांति मानना ही उचित होगा। मैं इस विषय पर अपना निर्णय देकर स्वीकृत-लिपि के महत्त्व को घटाना उचित नहीं समझता।

आदि—'ये/क/'[1]

मध्य —'चलि/ये/स'[2]

अत —'लि/ये/'[3]

हिंदी के उदाहरणो मे/ए/~/ये/ की समस्या प्राय: अत मे आती है। जाचीक जीवण ने इस समस्या के सभी पहलुओ पर अपना व्यक्तिगत समाधान प्रस्तुत किया है। हिन्दी के विद्वान आदि तथा अत दोनो स्थानो का भी ध्यान रखते हुए कवि द्वारा प्रस्तुत समाधान पर विचार कर सकते हैं।

इस प्रकार प्रतापरासो के ध्वनिग्राम ऊपर लिखे अनुसार हैं। इनका प्रयोग नीचे लिखे प्रकारो मे मिलता है—

(१) स्वर (i) एक स्वर का स्वतंत्र रूप मे प्रयोग—
'अरवी'[4] 'आज'[5] 'इति'[6]—आदि
'उपाईय'[7] 'जोईये'[8]—मध्य
'पाई'[9] 'लराई'[10]—अंत

(ii) एक से अधिक स्वरो का साथ-साथ प्रयोग—
'आइय'[11],

(iii) व्यजनो के साथ मात्रा रूप मे—
'लडाई'[12]—'/ल्/+/अ/+/ड़्/+/आ/+/ई/'
'पिलत'[13]—'/प्/+/इ/+/ल्/+/अ/+/त्/+/अ/

(२) व्यंजन (i) व्यजन+स्वर—'गजस'[14]—'/ग्^{c}/+/अ^{v}/+/ज्^{c}/+/अ^{v}/+/स्^{c}/+/अ^{v}/' cvcvcv

(ii) व्यजन+व्यजन+स्वर—'स्योह'[15]—
'/स्^{c}/+/य्^{c}/+/ओ^{v}/+/ह/+/अ/' ccv

(iii) व्यंजन+व्यजन+व्यंजन+स्वर 'सत्र' का त्र'—/स्^{c}/+/त्^{c}/+/र्^{c}/+/अ^{v}/ cccv

(vi) अन्य समुच्चय

१. स्वर+व्यंजन+स्वर 'अति'[16]—'/अ$_{v}$/+/त्$_{c}$/+इ$_{v}$/' vcv

---

१. छ० न० ४६। २. छ० स० २२५। ३. छं० स० २०५। ४. छं० स० १८७। ५ छं० सं० २५७। ६ छं० स० २८६। ७ छं० सं० २७६। ८ छ० सं० ३०५। ९ छं० मं० ३४०। १०. छं०स० ३५४। ११. छं०सं० १६३। १२. छ-सं० २६१। १३. छं०सं० ४३१। १४. छं०सं० १३१। १५ छं०सं० ४३७। १६. छं०सं० २०३।

२ स्वर+स्वर+व्यजन+स्वर

'आइय'[१]—'/आ$_V$/+/इ$_V$/+/य्$_C$/+/अ$_V$/'
VVCV

३. स्वर+व्यजन+स्वर+व्यजन

'आयव'[२]

'/आ$_V$/+/य्$_C$/+/अ$_V$/+/व्$_C$/' VCVC

यहाँ /व्/ व्यजनात ही बोला जाता है—लिखने मे स्वरात करते हैं।

संयुक्त वर्णो मे विभिन्न प्रकार के योग उपलब्ध होते हैं, जिनका स्पष्टीकरण संलग्न तालिका से हो सकेगा। बहुत-से योग इस पुस्तक मे ऐसे हैं, जो लिखित रूप मे उपलब्ध नही है, किन्तु जिनका उच्चरित रूप निःसदेह 'समुच्चय' प्रवृत्ति का प्रतिपादन करता है। यथा—

'हथ'[३]—'हत्थ', 'हथ्थ'

'चक'[४] 'चक्क'

'जट'[५]—'जट्ट'

'जुध'[३]—'जुद्ध', 'जुध्ध'

'कजै'[७]— कज्जै'

'बरछी'[८] 'वरच्छी', 'वरछ्छी'

'चलय'[९]—'चल्लयं'

'नवाव'[१०]—'नव्वाव'

इन सयुक्त वर्णो का उच्चरित अस्तित्व दो रूपो मे दिखाई पडता है—

(i) लेखन-सुगमता—'हथ', 'चक', 'जट', 'जुध'(ऊपर के उदाहरणो मे),

(ii) छद-पूर्ति, लय-नियोजन—'वरछी, 'नवाव'(ऊपर के उदाहरणो मे)।

प्रतापरासो में व्यंजन-वितरण

/क/ आदि—'कनक'[११] 'कोट'[१२] 'कारी'[१३]

मध्य —'काकबाडी'[१४] 'वाकाव्रत'[१५] 'बकसेस'[१६]

---

१ छं० स० १९३। २. छ० सं० ३७५। ३. छं० सं० ३९७—ज्याये तो भो हथ ही मारे तो भो हथ'। ४ छ स० १३१—'घर घर तोवन के घमचक'। ५ व ६. छ० सं० १३०—'वर्तं जट जोंहार हल भूप जुध'। ७ छ० सं० १८७—'वजी त्रमाद चढ़े जुध कजै'। ८ छ० सं० १८७—'चढे तेग तीरे कमानै वरछी'। ९ छं०सं० १९४—'गजंस बाजि चलय'। १० छ०स० ४०१—'यो सुन जुवाब नवाव नर, दल साम्ही घर ध्याय'। ११ छ०सं० १४९। १२ छ० स० २०८। १३ छं० सं० २३१। १४. छ० सं० २१०। १५. छं०स० १२६। १६ छ०स० ६।

अर्त—'कनक'[१] 'येक'[२] 'कीतेक'[३] 'कटक'[४]

/ख//ष/ आदि—'षुसाल'[५] 'षवरि'[६] 'षास'[७]

मध्य —'नषेस'[८] 'दिषरणी'[९] 'तोषार'[१०]

अत —'असेष'[११] 'दुष'[१२] 'लष'[१३]

/ग/ आदि—'गगन'[१४] 'गरकै'[१५] गढी'[१६]

मध्य —'गगन'[१७] 'चौगान'[१८] 'जगतेस'[१९]

अत —'जोग'[२०] 'चंग'[२१] 'सग'[२२]

/घ/ आदि—'घर'[२३] 'घायल'[२४] 'घटि'[२५]

मध्य —'वाघणी'[२६] 'सुघर'[२७] 'सुघाट'[२८]

अत —'वाघ'[२९] 'दीरघ'[३०]

/च/ आदि—'चमचमै'[३१] 'चौबीस'[३२] 'चौकौर'[३३]

मध्य —'चमचमै'[३४] 'चचोहै'[३५] 'पचरंग'[३६]

अत —'करिहैंच'[३७] 'पच'[३८] 'कुच'[३९]

/छ/ आदि—'छाजूराम'[४०] 'छल'[४१] 'छुटे'[४२]

मध्य —'लछमरण'[४३] 'लछधरण'[४४] 'चरछंद'[४५]

अत —'मोरपछ'[४६] 'प्रतछ'[४७]

---

१. छं० सं० १४९। २ छं० स० ३४०। ३. छं० सं० १५२। ४ छं० सं० २२४। ५. छं० सं० ५४। ६ छं० सं० १७२। ७. छं० सं० १९३। ८ छं० सं० ४०४। ९. छं० सं० ४१९। १० छं० सं० ४२१। ११. छं० सं० २४२। १२ छं० सं० ४२९। १३. छं० सं० २८। १४. छं० सं० २३०। १५ छं० स० १८७। १६ छं० सं० ३७७। १७ छं० सं० २३०। १८ छं० सं० १६५। १९ छं० स० १८१। २०. छं० सं० २४५। २१. छं० सं० ३६८। २२ छं० स० ११। २३. छं० सं० १०१। २४ छं० स० ३१५। २५ छं० सं० १३४। २६. छं० सं० २६१। २७. छं० सं० १४२। २८ छं० सं० १४३। २९ छं० स० १४३। ३० छं० सं० १०। ३१. छं० सं० ४६२। ३२. छं० सं० २३३। ३३ छं० स० २८३। ३४ छं० स० ४६२। ३५ छं० सं० २५७। ३६. छं० सं० १९४। ३७ छं० सं० ३२७। ३८. छं० सं० २९। ३९. छं० सं० २८५। ४०. छं० सं० ७३। ४१ छं० स० ४११। ४२. छं० सं० ८५। ४३ छं० छ० १३१। ४४ छं० स० ८८। ४५. छं० सं० ३४९। ४६ छं० सं० २८३। ४७ छं० सं० २९।

---

[१]अन्त से यहां स्वर में पहले व्यंजन का अभिप्राय है, क्योंकि इस पुस्तक मे पूर्णतः व्यजनांत शब्दों का प्रायः अभाव ही है। उच्चारण करने में कुछ शब्द व्यंजनात अवश्य हैं, पर लिखित रूप में उनकी संख्या बहुत ही कम है।

/ज/ आदि—'जमूरा'[1] 'जवमर्द'[2] 'जलद'[3]
मध्य —'जोजन'[4] 'जरजोध'[5] 'कीजिय'[6]
अंत —'समाज'[7] 'तेज'[8] 'भुज'[9]

/झ/† आदि—'झरोप'[10] 'झड'[11] 'झलकंत'[12]
मध्य —'झुझार'[13] 'समझाय'[14] 'सझ्झकै'[15]
अंत —'मझ'[16]

/ट/ आदि—'टीवन'[17] 'टरिहै'[18] 'टेक'[19]
मध्य —'टूटत्त'[20] 'कटक'[21] 'अटकि'[22]
अंत —'टूट'[23] 'थाराथट'[24] 'जट'[25]

/ठ/ आदि 'ठाम'[26] 'ठानी'[27] 'ठोर'[28]
मध्य —'ठाठस'[29] 'पठान'[30] 'पठवाय'[31]
अंत —'दूठ'[32] 'ठाठ'[33] 'ठठ'[34]

/ड/ आदि—'डेरा'[35] 'डहरा'[36] 'डिगात'[37]
मध्य —'डडत'[38] 'मुरडत'[39] 'मंडली'[40]
अंत —'वड'[41] 'रूंड'[42] 'मुंड'[43]

[ड़] आदि—×
मध्य —'जामड़ोली'[44] 'लड़ाई'[45] 'जोड़ेस'[46]
अंत —'छीवड़'[47] 'छोड़ि'[48] 'पकड़'[49]

---

१. छं०सं० १८६। २ छं० सं० २४३। ३ छं० सं० ३४३। ४ छं० सं० २१३। ५ छं० सं० ४६१। ६. छं० सं० १०५। ७. छं० सं० २३। ८ छं०सं० २५। ९. छं० सं० २६। १० छं० सं० २१५। ११ छं० सं० १३१। १२. छं० सं० २८३। १३ छं० सं० १८१। १४ छं० सं० ११२। १५ छं० सं० १८७। १६. छं० सं० ७०। १७ छं० सं० २३३। १८ छं० सं० १९८। १९ छं० सं० १०३। २०. छं० सं० २३९। २१ छं० सं० १३२। २२ छं० सं० २४१। २३ छं० सं० १३१। २४ छं० सं० २१०। २५. छं० सं० १०२। २६. छं० सं० ४। २७ छं० सं० ४९। २८ छं० सं० ३४०। २९. छं० सं० २४४। ३० छं० सं० २१५। ३१ छं० सं० १६०। ३२ छं० सं० २१०। ३३ छं० सं० ४९। ३४ छं० सं० ३२१। ३५ छं० सं० ६४। ३६. छं० सं० ७८। ३७ छं० सं० ३११। ३८ छं० सं० ४७। ३९ छं० सं० ४१४। ४० छं० सं० ४५७। ४१. छं० सं० १५५। ४२ छं० सं० १८६। ४३ छं० सं० १८६। ४४. छं० सं० ३७६। ४५ छं० सं० २६१। ४६. छं० सं० ३८५। ४७ छं० सं० ३७८। ४८. छं० सं० ३५४। ४९ छं० सं० ४१६।

---

†पुराना झ टाइप न होने से सर्वत्र नया /झ/ ही प्रयुक्त किया गया है।

/ढ/ आदि—'ढुढाहर'[१] 'ढाल'[२] 'ढरढर'[३]

मध्य —'ढुढाहर'[४] 'चढिये'[५] 'वढेस'[६]

अत —'चढ'[७] 'गढ'[८]

[ढ़] आदि—×

मध्य —'चढिया'[९] 'गुढीगंज'[१०] 'गढपति'[११]

अत —'गढ़'[१२] 'चढ़'[१३]

/ण/ आदि—×

मध्य —'हणवंत'[१४] 'गण.पति'[१५] 'थ.णपट'[१६]

अत —'जीवण'[१७] 'कौण'[१८] 'निरवाण'[१९]

/त/ आदि—'तलाव'[२०] 'ताजी'[२१] 'तातं'[२२]

मध्य —'ततकाल'[२३] 'तातेस'[२४] 'पातलि'[२५]

अत —'तकत'[२६] 'तपत'[२७] 'लीजत'[२८]

/थ/ आदि—'थान'[२९] 'थिर'[३०] 'थपे'[३१]

मध्य —'प्रथमहि'[३२] 'नाथूसिह'[३३] 'पोथल'[३४]

अत —'दसरथ'[३५] 'हथ'[३६] 'साथ'[३७]

/द/ आदि—'दुलहनि'[३८] 'दसौ'[३९] 'देपत'[४०]

मध्य —'ईद्रेस'[४१] 'चादसी'[४२] 'हमीरदेका'[४३]

अत —'गरद'[४४] 'हद'[४५] 'कागद'[४६]

/ध/ आदि—'धरा'[४७] 'धरत'[४८] धाभाई'[४९]

मध्य —'वलत्रधोत'[५०] 'माधव'[५१] 'मुरधरपति'[५२]

१, छं० स० १३३। २. छ० सं० ६४। ३ छ० स० १९। ४ छं० सं० २४२। ५. छ० सं० ९८। ६. छ० सं० २४४। ७ छ० स० ४२७। ८. छ स० २१२। ९ छ० सं० १८१। १० छ० स० २१०। ११ छं० स० ७६। १२ छ० सं० २४३। १३. छ० सं० ८४। १४ छ० स० २। १५ छ स० २। १६ छं० स० २१०। १७ छ० स० ४। १८ छ० स० २। १९ छं० स० १८१। २० छ० स० २१५। २१ छ० स० १५५। २२ छं० स० १७४। २३ छ० सं० १४७। २४ छ०सं० २१५। २५ छ०स० ९९। २६ छ स० २२८। २७. छ स० २१६। २८ छ० स० २२०। २९ छ० स- ५८। ३० छ० स० ११८। ३१. छ० स० ९५। ३२ छ०स० १। ३३ छ०स० ५९। ३४ छ०स० १४८। ३५ छ सं० ७। ३६. छ० स० ३७। ३७ छ० स० ४७। ३८ छ स० १५३। ३९. छ०स० १५४। ४० छ० स० १५९। ४१ छ० स० ५१। ४२ छ० स० १०३। ४३. छ० स० १०३। ४४ छ० स० ६४। ४५ छ० स० ६४। ४६ छ० स० ९५। ४७ छ० स० ७४। ४८. छ० स० १३१। ४९. छं० स० ४३७। ५० छ० स० १०३। ५१ छ० स० १०३। ५२ छ० स० १०७।

अंत —'जुव'[1] 'सुध'[2] 'जरजोध'[3]

/न/ आदि—'नकीव'[4] 'निसान'[5] 'नगर'[6]

मध्य —'जानियो'[7] 'मनहारस'[8] 'अनमानत'[9]

अत —'जान'[10] 'कीन'[11] 'गगन'[12]

/प/ आदि—'पीथल'[13] 'परताप'[14] 'पचरग'[15]

मध्य —'भूपति'[16] 'रजपूत'[17] 'नृपति'[18]

अत —'भूप'[19] 'नृप'[20] 'प्रताप'[21]

/फ/ आदि—'फतमाल'[22] 'फरकै'[23] 'फूरमाई'[24]

मध्य —'कुफर'[25] 'सानफतेलो'[26] 'तडफडत'[27]

अत —'माफ'[28]

/व/ आदि—'वीकानेरि'[29] 'वैकुंठ'[30] 'धरणी'[31]

मध्य —'सबल'[32] 'षवर'[33] 'मजबूत'[34]

अंत —'नवाव'[35] 'नजव'[36] 'वब'[37]

/भ/ आदि—'भोमिया'[38] 'भीर'[39] 'भई'[40]

मध्य —'अभगिय'[41] 'सुरभर'[42] 'बलिभद्र'[43]

अंत —'नायभ'[44]

/म/ आदि—'मारिलै'[45] 'मत्री'[46] 'मन'[47]

मध्य —'अमावति'[48] 'समय'[49] 'सामोत'[50]

अत —'राम'[51] 'तुम'[52] 'सम'[53]

---

१ छं० स० १२१। २. छं० स० १०१। ३ छं० स० ४५७। ४ छं० स० ६४। ५. छं० स० ६४। ६ छं० स० ७०। ७ छं० स० ८०। ८. छं० सं० ७६। ९ छं० स० १०५। १० छं० स० ८१। ११. छं० स० ८३। १२. छं० स० ८२। १३ छं० स० १५८। १४. छं० स० १६३। १५ छं० स० १७१। १६ छं० सं० १७५। १७ छं० स० १७६। १८ छं० स० १९९। १९ छं० सं० १६६। २०. छं० स० १२१। २१ छं० स० ९३। २२ छं० स० २४। २३ छं० स० १३०। २४. छं० स० ४०५। २५. छं० स० २६६। २६ छं० स० ३४६। २७ छं० सं० ४६५। २८ छं० स० १९८। २९ छं० स० १४७। ३० छं० स० ४५८। ३१. छं० स० २०९। ३२ छं० स० २६। ३३ छं० स० २३६। ३४ छं० स० २५९। ३५. छं० स० २६१। ३६ छं० स० २५६। ३७ छं० स० २५७। ३८. छं० स० २०८। ३९. छं० स० २८७। ४० छं० स० १८७। ४१ छं० सं० २३६। ४२ छं० स० २४४। ४३ छं० स० २८१। ४४ छं० स० २४०। ४५. छं० स० ३०६। ४६ छं० सं० ३०९। ४७ छं० स० ३०५। ४८ छं० स० २८९। ४९. छं० स० २७६। ५०. छं० स० २८१। ५१. छं० स० ३०१। ५२ छं० स० २९९। ५३. छं० स० ३०३।

/य/ आदि—'यसों'[१] 'यत'[२] 'यसोराव'[३]
मध्य —'स्याम'[४] 'सुनैयत'[५] 'पुस्याली'[६]
अंत —'जोय'[७] 'मारिय'[८] 'जाय'[९]

/र/ आदि—'राव'[१०] 'रचियेस'[११] 'रसिये'[१२]
मध्य —'आत'[१३] 'घारिये'[१४] 'विरठ'[१५]
अंत —'वार'[१६] 'धमधार'[१७] 'नर'[१८]

/ल/ आदि—'लपन'[१९] 'लार'[२०] 'लघुता'[२१]
मध्य —'फलवाह'[२२] 'अलवर'[२३] 'सलाह'[२४]
अंत —'वल'[२५] 'काविल'[२६] 'हरोल'[२७]

/व/ आदि—'वोट'[२८] 'विरुध'[२९] 'विक्रम'[३०]
मध्य —'रावराजा'[३१] 'नवाव'[३२] 'रणवार'[३३]
अंत —'दाव'[३४] 'दलव'[३५] 'राव'[३६]

/श/ आदि—'शकति'[३७] 'श्रवण'[३८] 'श्री'[३९]
मध्य - ×
अंत — द्वादश[४०]

/ष/ (आधुनिक हिंदी में मूर्द्धन्य /ष/ वोले जाने वाले)
आदि—'षट'[४१]
मध्य —'अष्टजाम'[४२]†

१. छं० स० ३०६। २ छं० स० ३०५। ३ छं० स० ५१। ४ छं० स० ३०२। ५. छं० स० ३१०। ६ छं० स० ३०१। ७ छं० सं० ३०३। ८ छं० सं० ३१०। ९. छं० स० ३०६। १०. छं० स० २९९। ११. छं० स० ३०५। १२. छं० स० ३०५। १३ छं० सं० ३०३। १४. छं० स० ३०५। १५ छं० स० ३०७। १६. छं० स० ३०२। १७ छं० स० ३०८। १८ छं० स० ३०५। १९ छं० स० २३५। २० छं० स० २१८। २१ छं० स० ३९६। २२ छं० स० ३१५। २३ छं० स० ३२०। २४. छं० स० ३२०। २५ छं० स० ३१३। २६ छं० स० ३२१। २७ छं० स० ३२१। २८ छं० स० २०८। २९ छं० स० ३४०। ३० छं० स० ४५७। ३१ छं० स० ३१२। ३२ छं० स० ३२१। ३३. छं० स० ३१५। ३४ छं० स० ३१६। ३५. छं० स० ३०५। ३६. छं० स० २९९। ३७ छं० स० २। ३८ छं० स० १०३। ३९. छं स० १। ४० छं० स० १४। ४१ छं० स० ३५३ ४२ छं० स० ४६५।

† ष्ट' की /ष/ ध्वनि वास्तव मे मूर्द्धन्य ऊष्म है। इसे दूसरे रूप मे वोला भी नहीं जा सकता।

अंत —'रिष'[१], 'सतोष'[२], 'पुरप'[३] ।†

/स/ आदि—'सुनतै'[४], 'समाज'[५], 'स्याम'[६] ।

मध्य —'सिवसाहि'[७], 'पुस्यालीराम'[८], 'रसिये'[९] ।

अत —'हसतीस'[१०], 'पास'[११], 'दिस'[१२] ।

/ह/ आदि—'होदास'[१३], 'हमीरदेक'[१४], 'हमकु'[१५] ।

मध्य —'सोहन'[१६], 'पहौचे'[१७], 'बहोरि'[१८] ।

अत —'कह'[१९], 'छोह'[२०], 'पतिसाह'[२१] ।

इनके अतिरिक्त /क्ष/ तथा /त्र/ के प्रयोग भी है। /ज्ञ/ का प्रयोग नही मिलता—

/क्ष/ आदि—

मध्य —'अक्षर'[२२]‡

अत —

/त्र/ आदि—'त्रिमाट'[२३], 'त्रिय'[२४], 'त्रहाँ'[२५] ।

मध्य —'चत्रसाल'[२६], 'चत्रभुजोत'[२७], 'छत्रीस'[२८] ।

अत —'चत्र'[२९], 'पुत्र'[३०], 'नषत्र'[३१] ।

/क्ष/, /त्र/ व्यजन-गुच्छ के रूप मे लिये जा सकते है, किन्तु प्रचलित वर्णमाला मे इनका स्वतन्त्र अस्तित्व है अतः इन्हे भी इस रूप मे दिखा दिया गया है ।

---

१ छं० सं० ९ । २ छं० स० ५४ । ३. छं० सं० २२३ । ४. छं० सं० २५४। ५ छं० स० २५३ । ६. छं० स० २५२ । ७ छं० सं० २५३ । ८. छं० स० २६८ । ९. छं० सं० ३०५ । १० छं० सं० २८३ । ११. छं० स० २८१ । १२. छं० स० २८३ । १३ छं० स० २८३ । १४. छं० सं० २८१ । १५. छं० स० २९८। १६ छं० सं० २९१ । १७ छं० स० २८५ । १८. छं० सं० ३०४ । १९. छं० स० ४५७ । २० छं० स० ४३९ । २१ छं० स० ४२९ । २२ छं० सं० १ । २३ छं० स० ४९ । २४ छं० स० ८८ । २५ छं० सं० ३०३ । २६. छं० स० ११८ । २७ छं० स० १०३ । २८ छं० स० १५१ । २९ छं० स० २१ । ३० छं० स० २१ । ३१ छं० सं० २३ ।

---

†यद्यपि इनके तत्सम रूप मे /ष/ ध्वनि ऊष्म है, परन्तु उस काल के उच्चारणानुसार तथा कहीं-कहीं आज भी इसे आधुनिक /ख/ के रूप मे मानना चाहिए ।

‡प्राय यह ध्वनि /छ/ के रूप मे पाई जाती है । यथा 'लछमन' (छं० स० ८), 'छत्री' (छं० स० ७८), 'छिति' (छं० स० ८२), 'छिनक' (छं० स० ३५), 'कुरुछेतर' (छं० स० ८४) ।

व्यंजन-गुच्छ

आधुनिक हिंदी के अनुसार प्रताप-रासो मे आदि, मध्य तथा अन्त स्थिति मे पर्याप्त व्यजन-गुच्छ मिलते हैं। व्यजन-गुच्छो की क्लिष्टता और लेखन-कठिनाई के कारण प्रताप-रासो के लेखक ने उन्हे सरल वनाने का भी प्रयास किया है। यहाँ परिनिष्ठित हिंदी को आधार मान कर इस पर विचार किया जा रहा है। इस पुस्तक मे व्यजन-गुच्छ हमे दो प्रकार से मिलते हैं—

१ उच्चारण के अनुरूप लिखे गए व्यजन-गुच्छो के रूप मे।

२ व्यजन-गुच्छो के रूप मे न लिखे जाकर उच्चारण के आधार पर।

पहले के उदाहरण—'प्रतापरासो'[1], 'गर्भवति'[2], 'उद्योत'[3]।

दूसरे के उदाहरण—'सथै'[4], 'सज'[5], 'चलिव'[6]।

'सथ्थै', 'सज्ज', 'चल्लिव'।

दूसरे प्रकार के उदाहरणो मे सम व्यंजन-गुच्छो की अधिकता मिलती है। तीनो स्थितियो मे व्यजन-गुच्छ देखिए—

आदि—'प्रतापरासो'[7], 'ह्वैयत'[8], 'स्योब्रह्मवोत'[9]।

मध्य—'भगवतस्यह'[10], 'चक्रसाल'[11], 'इद्रेस'[12]।

अत—'महमत्त'[13], 'वैस्य'[14], 'मध्य'[15]।

यह कहा जा सकता है कि व्यजन-गुच्छ अधिक मात्रा मे लक्षित नही होते और वर्ण-द्वित्व—सम व्यजन-गुच्छ—उच्चारण रूप मे अधिक पाया जाना है। /य/ के साथ योग के वहुत उदाहरण मिलते हैं—

/क्/ + /य/ ⌞ 'वक्यो'[16]

/ग्/ + /य/ ⌞ 'जग्य'[17]

/च्/ + /य/ ⌞ 'च्यारि'[18]

/ज्/ + /य/ ⌞ 'भाज्या'[19]

/झ्/ + /य/ ⌞ 'अलझ्यौ'[20]

/ठ्/ + /य/ 'वैठ्यौ'[21]

---

१ छ० स० २। २ छ० स० ८। ३ छ० स० ८८। ४ छ० स० ६७। ५ छ० स० ४४०। ६ छ० स० ४३२। ७ छं० स० २। ८. छ० स० ४। ९ छ० स० २८०। १० छं० सं० २७८। ११. छ० स० २२९। १२. छं० सं० १३०। १३ छ० सं० ५१। १४ छ० स० ७८। १५ छ० सं० २१५। १६ छ० स० ३०६। १७ छ० स० १६३। १८ छ० स० ६८। १९ छं० सं० १३६। २० छ० स० ३८०। २१ छ० स० ३६४।

ड्र

मे पर्याप्त
के कारण
यहाँ परि
इस पुस्त

:

पहले के
दूसरे के

तीनो रि

होते श्र
/य/ ३

१ छ
५ छ
६ छ
१३०
१६
१२६

/ड्/+/य/ ‘जुड्येस’[१]
/ढ्/+/य/ ‘चढ्यौ’[२]
/त्/+/य/ ‘त्यागि’[३]
/द्/+/य/ ‘द्यौसा’[४]
/ध्/+/य ‘अजुध्या’[५]
/न्/+/य/ हन्यौ’[६]
/ब्/+/य/ ‘ब्याहन’[७]
/र्/+/य/ ‘हार्यौ’[८]
/ल्/+/य/ ‘ल्यो’[९]
/व्/+/य/ ‘व्योन’[१०]
/स्/+/य/ ‘स्याम’[११]
/ह्/+/य/ ‘ह्याई’[१२] आदि।

/ल्ह/, /म्ह/, /न्ह/, /ह्व/ ध्वनियाँ भी पाई जाती हैं। इन्हे स्वतन्त्र ध्वनियाँ कहे या व्यजन-गुच्छ—यह प्रश्न हिंदी भाषा-शास्त्रियो के सामने है। /म्ह/, /न्ह/ आदि के सम्बन्ध मे स्वतन्त्र ध्वनि-संकेत होने के विचार सुने गए हैं। /ल्ह/ ध्वनि बोलियो मे चलती है। प्रताप-रासो मे इनके अतिरिक्त /ह्व/ ध्वनि भी मिलती है। इनके उदाहरण नीचे लिखे अनुसार है—

/म्ह/ ‘तुम्हारिय’[१३], ‘तुम्हारी’[१४], ‘तुम्हरे’[१५]
/न्ह/ ‘कन्ह’[१६]
/ह्व/ ‘ह्वैयत’[१७]

लिखित रूप मे वर्णो की सयुक्त प्रवृत्ति अपेक्षाकृत कम दिखाई देती है। उच्चरित रूप मे कुछ ‘एकत्व’ भी ‘द्वित्व’ प्राप्त कर लेते हैं। उदाहरण अन्यत्र दिए गए है।

कुछ सयुक्त वर्णो के दो रूप भी मिलते है—

---

१ छं० सं० ३५। २ छ० सं० १३१। ३ छ० स० १३१। ४ छं० स० १९। ५ छ० स० ८। ६ छ० स० ५। ७ छ० सं० १५०। ८ छ० स० ३२०। ९ छं० स० २। १० छ० स० २४४। ११ छं० स० २५७। १२. छं० स० ९७। १३ छ० स० ६८। १४ छं० स० १११। १५ छ० स० ११२। १६ छ० स० २५४। १७ छ० स० ४।

व्यजन+स्वर (व्यंजन ध्वनि के रूप मे ही लिया गया)

/न्/+/ऋ/~'नृप'[1], 'नृपति'[2], 'वृजि' (२२८)

'न्रप'[3], 'न्रपति'[4], 'व्रज'[5]

व्यजन+व्यजन/श्/+/र्/~'श्रवण'[6], 'स्रवण'[7]

एक अन्य प्रवृत्ति सस्कृत तत्सम शब्दो के तद्भव रूप मे देखी जाती है। इस प्रकार के अनेक शब्द ध्वनि-परिवर्तन सहित दृष्टिगोचर होते है।

कवि ने विदेशी भाषाओ के शब्दो को भी लिया है, परन्तु उनको देशी ढाँचे मे ढाला है। ध्वनि की दृष्टि से हमे कोई विदेशी ध्वनियाँ नही मिलती। सभी ध्वनियाँ स्वीकृत हिन्दी ध्वनियो के अन्तर्गत हैं। उदाहरण—

'हुकम'[8], 'कुफर'[9], 'अवाज'[10], 'किला'[11]।

'जालिम'[12], 'कागद'[13], 'जघ'[14], 'षबर'[15]।

'फौजे'[16], 'फिरगिय'[17], 'तुरक'[18]।

'पदार'[19], 'मुगल'[20], 'नजब'[21], 'नजवषान'[22]।

'नकीब'[23], 'पुसी'[24], 'लायक'[25], 'अला'[26], 'अरज'[27]।

सस्कृत तत्सम शब्दो की ध्वनियो मे भी अनेक परिवर्तन है। कुछ शब्द देखे—

'छत्री'[28] < 'क्षत्रिय'

'जोग'[29] < 'योग्य'

'जोग्य'[30] < 'योग्य'

'स्यो'[31] < 'शिव'

'माझि'[32] < 'मध्य'

---

१ छ० स० २२। २ छ० स० ३९। ३. छं० स० १९। ४ छं० स० २२८। ५. छ० स० ४०५। ६. छ० स० १०३। ७ छं० सं० ३५७। ८ छ० स० ४ (हुक्म)। ९ छ०स० २६६ (कुफ्र)। १०. छ० स० ७२ (आवाज)। ११. छ० सं० २५६(क़िला)। १२ छ० स० ५३ (ज़ालिम)। १३ छ० सं० ९५ (काग़ज)। १४ छ० सं० ११९ (जग)। १५ छ० सं० १२८ (ख़बर)। १६. छ० स० १३१ (फौजें)। १७ छ० स० २३९ (फिरगी)। १८ छ० स० २२८ (तुर्क)। १९ छ० म० २३६ (मददहार)। २० छ० स० २३६ (मुगल)। २१ छ० स० २५६ (नजफ़)। २२ छ० म० २६२ (नजफ़ख़ाँ)। २३. छ० स० १८६ (नकीब)। २४ छं० सं० २२५ (ख़ुशी)। २५ छ० स० २५५ (लायक़)। २६ छ० स० २६१ (अल्लाह)। २७ छ० म० ३१० (अर्ज़)। २८. छ० स० ३०८। २९ छ० स ४७। ३० छं० स० १३०। ३१ छ० सं० २८०। ३२. छ० म० २६०।

'जादम'[1] < 'यादव'

'परताप'[2] < 'प्रताप'

'जुद्द'[3] < 'युद्ध'

'पछ्छिम'[4] < 'पश्चिम'

'दीठि'[5] < 'दृष्टि'

'रछिक'[6] < 'रक्षक'

व्यंजन-गुच्छ

वर्णों का क्रम भाषा-वैज्ञानिको द्वारा स्वीकृत क्रम के अनुसार है। शब्दो के आगे छद-सख्या दी गई है—

/प/ 'प्रथमहि'—१, 'छप्प'—४, 'कोप्यो'—६७

/त/ 'उत्तर'—२०६, 'कत्री'—२३१, 'त्याग'—४८

/क/ 'कुरुक्षेत्र'—८५, 'क्रोध'—१०५, 'वक्यौ'—३०६

/ब/ 'ब्रजि'—१३८, 'ब्याहन'—१५०

/द/ 'इद्र'—३७, 'उद्योत'—८८, 'जुद्द'—२४५, 'द्वादश'—१४, 'द्योसा'—१६

/ग/ 'ग्वालेर' १६, 'ग्राम'—२८४, 'डिग्यो'—४६१, 'नग्र'—१६३

/म/ 'कुभावत'—१०३, 'कमैन' १८७, 'तुम्हारिय'—६८, 'कपे'—५५

/न/ 'अहमदान'—३६८, 'अटच'—४४०, 'कीन्ह'—११०, 'किलंगी'—१८७ 'जगन्नथ'—२६, 'न्याय'—३, 'न्रप'—१६, 'न्हान' ११०, 'भडार'—१८७, 'भजैस'—४१८, 'मगलेस'—१३०, 'राजवस'—५१, 'भिन'—५२, 'समथ'—१०३, 'जघ'—११६, 'सहुनी'—४०८

/ठ/ 'बैठ्यो'—३६४

/भ/ 'भ्राता'—१२

/घ/ 'घ्रम'—३२, 'मध्यम'—१७६

/ढ/ [ढ] 'चढ्यो'—१३१

/व/ 'व्योन'—२४४, 'व्रत'—४

/स/ 'पुस्याल'—१०३, 'पुस्षा'—२२५, 'अस्त'—२४६

---

१ छं० स० २५६। २ छं० स० २५७। ३ छं० स० २४५। ४. छं० स० २३५। ५. छं० स० २२२। ६ छं० सं० १८३।

/श/ 'श्रीमुख'—११४

/च/ 'च्यारि'—६८, 'मुच्चौ'—३०६

/ज/ 'उपज्यौ'—१३८, 'गज्जन'—२८७, 'ज्वाव'—६७

/झ/ 'अलझ्यौ'—३८०

/ह/ 'कह्यौ'—३८६, 'ब्रह्म'—७८, 'ह्व' - १६३

/ल/ 'दुल्है'—५३, 'मारल्यौ'—२६१

/र/ 'अर्जं'—४०७, 'हारचौ'—३२०, 'गर्भवति'—८, जवमर्द—२४३

उच्चारण के आधार पर—

'नि/क्/कासै'—१६, 'अ/ष्/षिय'—२२, 'तेग/स्/स'—३७,

'दि/ल्/ली'—८२, 'जु/ट्/टे'—८५, 'वर/छ्/छी'—८५,

'अ/र्/रै'—१४५, 'स/व्/वै'—१८१, 'ठ/ठ्/ठै'—१८७,

'म/भ्/भ'—२५३, 'च/ढ्/ढै'—३१२, 'उ/ड्/डै'—३८२,

'च/ढ्/ढि'—४२५, 'प/च्/छिम'—२१४, 'बु/द्/धितम'—२,

'अर/व्/वी'—३८२।

व्यजन-गुच्छो पर कुछ निष्कर्ष—

(१) सम-व्यंजन द्वित्वो मे प्राय सभी योग मिलते है, किन्तु आधिक्य उन द्वित्वो का ही है, जो उच्चारण के आधार पर स्वीकृत किए गए हैं।

(२) आधुनिक/ष/का योग दो स्थानो मे स्पष्ट है। (यद्यपि/ष/का उच्चारण/श/मे होने लगा है।)

'अक्षर'[1] [क्ष], [क्श]

'अष्ट'[2] [ष्ट], [श्ट]

(३) /न/के योग के अनेक उदाहरण है। जहाँ भी अनुस्वार का योग होता है, वहाँ/न/तथा/म/की सभावना होती है।

/म/का अन्य व्यजनो मे योग अपेक्षाकृत स्पष्ट है—

'कपे'[3], 'कमैत'[4]

'तंबू'[5], 'पातलराव'[6]

/न/का योग इतना स्पष्ट नही है। कही कही जाचीक जीवण द्वारा अस्वीकृत वर्णों (/ङ/तथा/ञ/) का आभास होने लगता

१ छं० सं० १। २. छं० सं० ४६५। ३. छं० सं० ५५। ४ छं० सं० १८७।
५ छं० सं० २६१। ६ छं० सं० १४०।

है। ये सभी/न/के अतर्गत लिए गए है। 'त' वर्ग के योग मे कोई कठिनाई नही आती। अन्य वर्गों मे ऐसा नही है।

(४) गुच्छो मे दूसरे वर्ण के स्थान पर/य/काफी आया है। यह ब्रज भाषा का प्रभाव है। इस सबध मे अन्य वर्णों के साथ/य/का योग अन्यत्र दिखाया गया है।

(५) /ढ/, /ढ/को व्यजन-गुच्छो मे अलग न दिखाकर एक ही स्थान पर लिया गया है, क्योंकि ये दोनो ध्वनियाँ एक दूसरे की स्थानापन्न-सी प्रतीत होती हैं—
'चढयो'[१], 'चढ्यो'[२]।

(६) जिन अको को '†' से अकित किया गया है, वे गुच्छ उच्चारण के अनुसार माने गए हैं। लिपिकार ने उन्हे एक ही वर्ण के रूप मे लिखा है।

(७) '‡' अकित अक उन गुच्छो को बताते है, जिनकी सबधित ध्वनियाँ शुद्ध/न/को स्पष्टतः नही बताती।

(८) ध्वनियो का क्रम भाषा-वैज्ञानिको द्वारा स्वीकृत-क्रम के अनुसार है, वर्णमाला के अनुसार नही।

तीन व्यजनो के गुच्छ—

'रामचन्द्र'[३]—'न्द्र' /न्/+/द्/+/र्/+/अ/
'सस्त्र'[४]—'स्त्र' /स्/+/त्/+/र्/+/अ/
'मत्री'[५]—'न्त्री' /न्/+/त्/+/र्/+/अ/

रूप-तत्त्व

किसी भाषा-विशेष का अध्ययन और विश्लेषण करने मे उस भाषा का रूप-तत्त्व बहुत महत्त्वपूर्ण होता है। सबध-तत्त्व के आधार पर ही भाषा की प्रकृति का निर्णय अधिक उपयुक्त माना गया है। इसीलिए प्रायः माना जाता है कि आकृतिमूलक वर्गीकरण भाषा के समझने मे अधिक सहायता प्रदान करता है। आज की प्रवृत्ति भी यही है कि भाषा के रूप-तत्त्व का अध्ययन करने मे अधिक ध्यान दिया जाय। मौखिक भाषा का अध्ययन, भाषा के छात्रो का प्रिय विषय

१ छं० स० १३१। २ स० स० १३१। ३ छं० स० ५। ४. छं० स० ६३। ५. छं० स० २७५।

होता जा रहा है और किसी भी क्षेत्र-विशेष की भाषा अथवा बोली का ध्वनि तथा रूप के आधार पर वर्णन करने की ओर विभिन्न प्रयास हो रहे है। भाषा-अध्ययन की इस प्रवृत्ति को अधिक प्रचलित कराने मे अमेरिकन भाषा-विदो का योग माना जाता है, यद्यपि वहाँ के विद्वानो ने भी इस बात को मुक्त कठ से स्वीकार किया है कि भाषा-अध्ययन की यह विवरणात्मक पद्धति भी भारतवर्ष की देन है। अमेरिका द्वारा निर्मित एक योजना के अनुसार भारत तथा अमेरिका के भाषा-शास्त्रियो को पारस्परिक मिलन और अध्ययन का अवसर मिला है। भारत के अनेक भाषा-छात्र अमेरिका गए और अमेरिका के भाषा-शास्त्री यहाँ आए। साथ ही भाषा के क्षेत्र मे नवागतुको के हेतु भाषा-विज्ञान के स्कूल भी आयोजित किए गए। इन सब का परिणाम यह हुआ कि भाषा-विज्ञान के अध्ययन मे अमेरिकन पद्धति का अधिक प्रचार हो गया और भारत के कुछ विश्वविद्यालयो मे भाषा-शोध के छात्रो ने अपने अध्ययन के लिए इस प्रकार के विषय चुने। भाषा-अध्ययन की यह पद्धति लिखित भाषा का रूप स्पष्ट करने मे अधिक सहायक होती है। भाषा का मौखिक रूप जहाँ निरंतर बदलता रहता है, उसका लिखित रूप स्थिर रहता है, अतः उसका अध्ययन भी अधिक निश्चित होना चाहिए। प्रयत्न तो इस ओर भी चल रहा है, और हिंदी के तुलसी, सूर आदि प्रमुख कवियो के भाषा-वैज्ञानिक अध्ययन प्रस्तुत हो रहे है। कुछ समय पूर्व मैंने १६ वी सदी की गुजराती का एक भाषा-अध्ययन देखा था, जिस पर श्री दवे को डॉक्ट्रेट की उपाधि प्राप्त हुई थी, इसी प्रकार एक विदेशी विद्वान हैलीडे का 'सीकरेट हिस्ट्री ऑव दि मगोल्स' पर किया गया कार्य भी देखा। भारतवर्ष मे भाषा सबधी किए गए कार्य व्याकरणमूलक अधिक हैं, भाषामूलक कम, और इसी प्रकार का अध्ययन कुछ समीपवर्ती-सा प्रतीत होता है। मैं भी अपने अध्ययन मे इसी प्रणाली का अनुकरण करूँगा, यद्यपि स्थान-स्थान पर यह चेष्टा की जायगी कि भाषा-प्रवृत्ति का भी ध्यान रखा जाय।

प्रतापरासो मे प्रयुक्त शब्दो की आकृतियो को देखने से पता लगता है कि भाषा का रूप निश्चित नही है। उस समय की कृतियो को प्राय इसी रूप मे देखा गया है। लिखित साहित्य का अधिक प्रचार न होने से परिनिष्ठित रूप क्या हो सकता है, इस ओर ध्यान देना सभव भी नही था। यह समझा जाता रहा होगा कि भाव-प्रकाशन सुविधा के साथ हो और यदि शब्दाकृतियो मे कुछ फेर-फार भी दिखाई दे, तो उसकी विशेष चिन्ता नही थी। एक स्थान की

कृति को दूसरे स्थान पर लिखा जाना भी इस रूप-बाहुल्य का एक कारण है और समय की दूरी भी इस मे अपना योग प्रदान करती है। यही कारण है कि हमे प्रताप-रासो मे सबधतत्त्व के अनेक रूप देखने को मिलते हैं, जिनका विवरण यथास्थान दिया जायगा। रूप-वैविध्य की यह स्थिति बहुत समय तक रही और आज भी अनेक स्थितियो मे इसके रूप अवशिष्ट है। यह एक विचारणीय विषय है कि विज्ञान और हिन्दी-भाषा-विस्तार के इस युग मे स्थिरीकरण का प्रश्न बहुत कुछ अनिश्चित अवस्था मे पडा हुआ है। ध्वनि और रूप, भाषा के इन दोनो तत्त्वो मे स्थिरीकरण और नियमन की आवश्यकता प्रतीत होती है। अतः इस मे कुछ भी आश्चर्य तथा दोष नही समझना चाहिए कि प्रतापरासो मे हमे यह स्थिति कुछ बढे हुए रूप मे दिखाई देती है। मुझे इस ग्रथ की केवल दो ही प्रतियाँ प्राप्त हो सकी और ऐसा भी प्रतीत हुआ कि ये दोनो भी किसी एक मूल प्रति के आधार पर लिखी गई है। इसका एक परिणाम तो यह हुआ कि रूपो की विभिन्नता अपेक्षाकृत कम हो गई, और दूसरे पाठ-निर्धारण में भी अनिर्णीत स्थितियाँ अधिक नही आईं।

हिंदी-भाषा के व्याकरण मे स्वीकृत शब्दावलि, परिभाषाएँ, पद के प्रकार आदि ही यहाँ ग्रहण किए गए हैं और उन्ही के आधार पर प्रतापरासो का विवरणात्मक व्याकरण देने की चेष्टा की गई है। उसमे भी वे अंश लिए गए हैं, जिनका शब्दो के रूपो पर प्रभाव पडता है तथा जिनके द्वारा प्रतापरासो की भाषा का स्पष्टीकरण होता है। सज्ञा, सर्वनाम, विशेषण, क्रिया और अव्यय (समुच्चयबोधक, संबधवाचक, क्रियाविशेषण और विस्मयादिबोधक) के विभिन्न रूपो पर विचार किया गया है। शुद्ध व्याकरण और विवरणात्मक व्याकरण के अतर का बराबर ध्यान रखा गया है और जहाँ आवश्यकता हुई है, हिंदी के व्याकरण से तुलनात्मक विवरण प्रस्तुत किए गए है। रूप-वैविध्य और रचना-सक्षिप्तता के कारण नियम देना तो सभव नही हो सका, पर स्थान-स्थान पर प्रवृत्तियो का उल्लेख अवश्य किया गया है।

संज्ञा के रूप

(लिंग, वचन और कारक)

लिंग—उस समय से बहुत पहले ही नपुसकलिंग का प्रयोग समाप्त हो चुका था—पुल्लिग और स्त्रीलिंग दो ही लिंग थे। प्रतापरासो मे ये दो ही

लिंग मिलते हैं। अप्राणिवाचक शब्दों के लिंग निर्धारण में, प्रायः, वही पद्धति दिखाई देती है, जो आधुनिक हिंदी मे प्रचलित है। व्यंजनांत संज्ञा-शब्द नही के बराबर हैं। प्रायः सभी शब्द स्वरांत हैं—

अकारान्त संज्ञा शब्द—

चरण[1], गणपतिदेव[2], पातिलराव[3], बन[4], दौलतराम[5], नरेस[6], कछवाह[7], पवार[8], सवराज[9], राजकवर[10]।

आकारान्त संज्ञा शब्द—

आग्या[11] सला[12], होदा[13], राजा[14], काका[15], हाडा[16], हलद्या[17], लाडा[18], हमीरदेव[19], जमूरा[20]।

इकारान्त संज्ञा शब्द—

आमेरि[21], नृपति[22], कानि[23], रिपि[24], रारि[25]।

ईकारान्त संज्ञा शब्द—

विनती[26], षीची[27], षाई[28], जावती[29], मलैली[30], धणी[31] पोहरी[32], मत्री[33], तुरकी[34], छत्री[35], गुसाई[36], लडाई[37]।

उकारान्त संज्ञा शब्द—

गुरु[38], सत्रु[39], वधु[40], तिलगु[41]।

ऊकारान्त संज्ञा शब्द—

नरू[42], वधू[43], तवू[44], घू[45], छाजू[46]।

---

१ छं० स० २। २. छं० स० २। ३ छं० सं० ३। ४ छं० सं० ४। ५ छं० स० २०६। ६ छं० स० ३५६। ७. छं० सं० ३६४। ८ छं० स० ३६३। ९ छं० स० ३६५। १० छं० स० ३६१। ११ छं० स० २। १२ छं० स० २६२। १३ छं० स० ३०८। १४ छं० स० ३०८। १५ छं० स० २७४। १६ छं० स० ३६२। १७ छं० स० ३६३। १८. छं० स० १५६। १९ छं० स० १०३। २०. छं० स० १८९। २१. छं० स० ६४। २२. छं० सं० ६६। २३ छं० स० १६६। २४ छं० स० १५। २५. छं० स० १२१। २६ छं० सं० २। २७. छं० स० १२६। २८. छं० स० ३५३। २९. छं० सं० ६४। ३०. छं० स० १९। ३१. छं० स० ३३। ३२. छं० स० ११०। ३३ छं० स० १२०। ३४ छं० स० १८७। ३५. छं० स० १९८। ३६ छं० स० २६२। ३७ छं० स० २६१। ३८ छं० स० २। ३९. छं० सं० ३। ४०. छं० स० १०१। ४१. छं० सं० २३६। ४२ छं० सं० ३१। ४३ छं० स० ५०। ४४. छं० सं० २६१। ४५ छं० सं० ४६१। ४६ छं० सं० ५५।

एकारान्त सज्ञा शब्द—

डेरे[1], नगारे[2], फते[3], वीकरो[4], वरसाने[5], पारचे[6], फौजे[7], हलकारे[8]।

ऐकारान्त सज्ञा शब्द—

सिवदानस्यघै[9], षोहरै[10], समाजै[11], उसासै[12], वद्रूकै[13], वातै[14], तुपकै[15]।

ओकारान्त सज्ञा शब्द—

कीलो[16], थानो[17], दोलो[18], दगो[19], वालो[20], सीधो[21]।

औकारान्त सज्ञा शब्द—

सीध्यौ[22]।

औकारान्त की अपेक्षा ओकारान्त की ओर अधिक प्रवृत्ति है।

	पुल्लिग	स्त्रीलिंग
अकारान्त	पातिलराव[23]	सेन[24]
आकारान्त	होदा[25]	आग्या[26]
इकारान्त	रिपि[27]	कानि[28]
ईकारान्त	पीची[29]	विनती[30]
उकारान्त	गुरु[31]	—
ऊकारान्त	वधू[32]	—
एकारान्त	नगारे[33]	फौजे[34]
ऐकारान्त	सिवदानस्यघै[35]	वद्रूकै[36]

१. छ० स० २६१। २ छं० सं० १३०। ३ छ० स० ४४०, ८०। ४. छ० स० ४६१ ५ छ० स० २३३। ६ छ० स० ४३१। ७. छं० स० ३७४। ८ छ० स० ३६०। ९. छ० स० ५५। १०. छं० स० ५६। ११. छ० स० १३०। १२ छ० स० १३३। १३ छ० स० १८७। १४. छं० स० ३४३। १५. छ० स० ८५। १६ छं० स० २१०। १७. छ० स० १८३। १८ छ० स० १७८। १९. छ० स० २१०। २०. छ० स० २२। २१ छं० स० ४११। २२. छ० स० ४२१। २३. छं० स० ३। २४. छं० स० २२०। २५. छं० स० २०८। २६. छ० स० २। २७ छ० स० १५। २८ छ० स० १६६। २९ छं० स० १२६। ३०. छं० स० २। ३१ छं० स० २। ३२. छं० स० ५०। ३३. छं० स० १३०। ३४. छ० स० ३७४। ३५. छ० स० ५५। ३६. छ० स० १८७।

ओकारान्त   दोलो[1]

औकारान्त   सीध्यौ[2]

१ सज्ञा गब्दो का अध्ययन करने पर पता चलता है कि अकारान्त गब्दो की वहुलता है ।

२ कुछ गब्दो के लिंग आधुनिक हिन्दी-लिंग-व्यवस्था के विपरीत हैं—

कचन की 'मोर'[3]~कचन का 'मोर' [मोहर] [मोर]

गिरे 'लोथ'[4]~गिरी 'लोथ'

दीनी 'षत' पठवाय[5]~दीने 'षत' पठवाय

कीनी 'रण' भारी[6]~कीनौ 'रण' भारी

'पाई' ऊँचे[7]~'पाई' ऊँची

वहे 'तेग'[8]~वही 'तेग'

३. पुल्लिग तथा स्त्रीलिंग दोनो प्रकार के गब्दो मे सुविधानुसार ह्रस्व और दीर्घ का प्रयोग—

/अ/~/आ/   'सीत'[9]~'सीता'[10]

/इ/~/ई/ :: 'नरपति'[11]~'नरपती'[12]

/उ/~/ऊ/ · 'वधु'[13]~'वधू'[14]

पुल्लिग से स्त्रीलिंग वनाने की कुछ प्रवृत्तियाँ—

१. अकारान्त से ईकारान्त—'पुत्र'[15]~'पुत्री'[16]

२. अकारान्त से इकारान्त—'कवर'[17]~'कवारि'[18]

३. आकारान्त से ईकारान्त—'गोला'[19] 'गोली'[20]

४. 'इन' प्रत्यय लगाकर—'दूलह'[21]~'दुलहिन'[22]

५. 'नी' प्रत्यय लगाकर—'रिप'[23]~'रिपनी'[24] (एक विशेष आकृति) 'गिर'~'गिरनो'[25]

---

१ छं०स० १७८ । २. छं०सं० ४२१ । ३ छं० सं० १५३ । ४. छं० स० १८९ । ५ छं० स० १९० । ६. छं० सं० १९१ । ७. छं० स० २१३ । ८ छं० स० ४०८ । ९ छं० सं० १० । १०. छं० सं० ६ । ११ छं० सं० १४५ । १२. छं० स० २०८ । १३ छं० स० ४७ । १४ छं० सं० ४८ । १५ छं० स० २१ । १६. छं० स० १० । १७. छं० सं० ८७ । १८. छं० सं० १४६ । १९. छं० सं० ८५ । २०. छं० स० १२३ । २१. छं० स० १५७ । २२ छं० सं० १५४ । २३ छं० स० ६ । २४ छं० सं० ११ । २५ छं० सं० १४२ ।

(यद्यपि ऊपर लिखे प्रयोग कुछ विचित्र से है, परन्तु आधुनिक हिंदी मे भी 'नी' प्रत्यय लगाकर स्त्रीलिंग शब्द बनाये जाते है 'बाघ+नी', 'शेर+नी' 'भील+नी'।)

प्राय आधुनिक हिंदी के व्याकरणानुसार ही लिंग-भेद किया गया है। कुछ उदाहरण—

पुल्लिग —'वधु'[१], 'हुकम'[२], 'कुल'[३], 'वचन'[४], 'दल'[५], 'कोट'[६], 'देस'[७], 'जुध'[८], 'मोरछा'[९], 'कामै'[१०], 'क्रोध'[११], 'त्रमाट'[१२], 'दरबार'[१३]।

स्त्रीलिंग—'नोबति'[१४], 'विद्या'[१५], 'अवधि'[१६], 'फोज'[१७], 'राड'[१८], 'भुजा'[१९], 'बात'[२०], 'सीष'[२१], 'सेन'[२२], 'निसा'[२३], 'महैमा'[२४], 'अवाज'[२५]।

लिग की अनिश्चितता भी कई स्थानो मे देखी गई—

(i) १. **बजो** 'त्रमाट' चढे जुध कजै[२६] – स्त्रीलिंग

२. **बजे** नाद 'त्रमाट' ठाठ रजपूत बाज सज[२७]—पुल्लिग

(ii) १. भूप **पूजी** भुजा'[२८]—स्त्रीलिंग

२. **लीने** उपारि सो 'भुजा' बीस[२९]—पुल्लिग

वचन

वचनो की व्यवस्था आधुनिक हिंदी व्याकरण के अनुसार ही है। क्रिया और विशेषण पर भी वचन का उसी प्रकार प्रभाव पडता है जैसा आधुनिक हिंदी मे। आकृति की दृष्टि से रूप परिवर्तन कही होता है कही नही।

(i) तेजल के तिहु सुत भये[३०] ('सुत' एक वचन मे ही है क्रिया बहु-वचन की है)।

(ii) फाडि फौजे धनी[३१] ('फौजे' बहुवचन मे)।

---

१. छं० सं० २। २. छं० सं० ४। ३. छं० सं० १८। ४ छं० सं० १६। ५. छं० सं० १७। ६ छं सं० २७। ७. छं० सं० ३१०। ८ छं० सं० ३७। ९. छं०सं० ३७। १० छं० सं० ३७। ११. छं० सं० ४६। १२ छं० सं० ४९। १३ छं० सं० ५०। १४ छं० सं० ३। १५. छं० सं० १३। १६ छं० सं० १४। १७. छं० सं० ३४६। १८ छं० सं० ३७। १९. छं० सं० ५५। २०. छं० सं० ४७। २१ छं० सं० ७०। २२. छं० सं० [illegible] २३. [illegible] २४. [illegible] छं० सं० २९७। २५. छं० सं० ३५७। २६. छं० सं० १८७। २७ छं० सं० ४९। २८ छं० सं० ८०। २९. छं० सं० ६। ३०. छं० सं० ३०। ३१. छं० सं० ३१२।

(iii) भूप मुकाम वहोत दिन कीने[१] ('वहोत' विशेषण—'दिन' एकवचन)

(iv) तिहुँ वधुन को नृपति नर, पहराये सिरपाव[२] ('तिहुँ' तथा 'वंधून' दोनो वहुवचन मे)।

वहुवचन वनाने मे नीचे लिखी कुछ प्रवृत्तियाँ द्रष्टव्य हैं—

१. /न/के योग से वने हुए वहुवचन शव्द—

'रिपनी'+'न'↳'रिषनीन'[३], 'सत्रु'+'न'↳'सत्रुन'[४]।

'लप'+'न'↳ लषन'[५], 'दल'+'न'↳'दलन'[६]।

'वघु'+'न'↳'वधुन'[७], 'कान'+'न'↳'कानन'[८]।

'वल'+'न'↳'वलन'[९]।

'डेरा'+'न'↳'डेरन'[१०] (आकारान्त का अकारान्त मे परिवर्तन)।

'मीर'+'न'↳'मीरन'[११], 'मुगला'+'न'↳'मुगलान'[१२]।

'गज'+'न'↳'गजन'[१३]।

'सथान'+'न'↳'सथानन'[१४]।

'मुकता'+'न'↳'मुकतान'[१५], 'तोव'+'न'↳'तोवन'[१६]।

'परवान'+'न'↳'परवानन'[१७]।

'भोमिया'+'न'↳'भोमियन'[१८] (आकारान्त का अकारान्त)।

'तुरका'+'न'↳'तुरकान'[१९]।

'टीवा'+'न'↳'टीवन'[२०] (आकारान्त का अकारान्त)।

'व्रजदेस'+'न'↳'व्रजदेसन'[२१], 'गोसाईं'+'न'↳'गोसाईंन'[२२]।

'घाय'+'न'↳'घायन'[२३], 'सव'+'न'↳'सवन'[२४]।

'नर'+'न'↳'नरन'[२५]।

अतिम दीर्घ स्वर को ह्रस्व करने की ओर प्रवृत्ति दिखाई देती है। अकारान्त शव्दो को/न/के योग से वहुवचन वनाने की ओर विशेप ध्यान दिया है। व्रजदेश मे/न/ के योग से वहुवचन वनाने की प्रवृत्ति आजकल भी उसी प्रकार है। यथा—

१. छं० सं० ३६२। २ छं० स० ४०५। ३. छ० सं० ११। ४. छं० स० ३३। ५ छ० सं० १०२। ६ छ० सं० १२३। ७ छ० सं० ४०५। ८. छ० स० १६६। ९ छ० स० २३५। १० छं० सं० १६१। ११. छं० स० २६७। १२. छ० स० ३४०। १३ छं० सं० ४०२। १४. छ० सं० २१६। १५ छ० स० १५१। १६. छं० सं० १३१। १७ छं० सं० १६६। १८. छं० सं० २०७। १९ छं० सं० २१५। २०. छ० सं० २३३। २१ छं० सं० २३३। २२. छं० सं० २६३। २३. छं० सं० ३७४। २४. छं० सं० ३३४। २५. छं० सं० ४६३।

'लड्डुग्रा'∽'लड्डुग्रान्', 'मिठाई'∽'मिठाइन्'।
'छोरा'∽'छोरन्', 'छोरी'∽'छोरीन्'।
'ग्राम'∽'ग्रामन्', 'गाम'∽'गांमन्'।

अतिम ध्वनि स्वरहीन प्रतीत होती है, क्योकि इसके ग्रागे जो योग होता है, वह ग्रतिम /न्/ से मिला हुग्रा जान पडता है। ग्रत. कह सकते है—

ए० व०+/न/∽व० व०

/न/ मे ग्रत होने वाली बहुवचन सज्ञाग्रो की प्रचुरता है, साथ ही ग्रतिम स्वर ह्रस्व होता भी दिखाई पडता है।

२ एकवचन तथा बहुवचन मे एक ही रूप रहना—

	ए० व०	ब० व०
'कोस'[1] पचीस	'कोस'	'कोस'
'जुघ'[2] कीने किते	'जुध'	'जुध'
'भुज'[3] मिलिव	'भुज'	'भुज'
दिये 'बाजि-गजराज'[4]	स० 'बाजि'	'बाजि'
	'गजराज'	'गजराज'
बोले 'मत्री'[5]	'मत्री	'मत्री'
जोरि जुगल 'कर'[6]	'कर'	'कर'
ते 'षत' पातिल बचि[7]	'षत'	'पत'
'तोव' टीवन ठहराई[8]	'तोव'	'तोव'
मत्री सुनत 'वचन' ये[9]	'वचन'	'वचन'
करी 'मास' दोय किला सू लडाई[10]	'मास'	'मास'
होनी 'सलाम' दिस दोय बार[11]	'सलाम	'सलाम'
दीजिये 'फोज' सगै समूच[12]	'फौज'	'फौज'
'गढ' यतने महाराव के[13]	'गढ'	'गढ'
'दिसि' च्यारि[14]	'दिसि'	'दिसि'

१. छं० स० १३४। २ छं० सं० ८०। ३. छं० सं० २६१। ४. छं० स० ३६१। ५. छं० स० ७२। ६. छं० स० ६८। ७. छं० सं० २२०। ८. छं० स० २३३। ९ छं० सं० २५४। १० छं० स० २६१। ११ छं० स० २८३। १२. छं० स० १९६। १३ छं० स० २११। १४. छं० स० २१३।

इस प्रकार के अनेक उदाहरण प्रतापरासो मे मिलते हैं। आधुनिक हिन्दी की भी यही प्रवृत्ति देखी जाती है। वहुवचन वनाते समय किन परिस्थितियो मे विकार होता है और किन मे नही, यह एक पठनीय विपय है

३ आदरसूचक स्थानो पर एकवचन के लिए वहुवचन क्रिया का प्रयोग-

सज्ञा एकवचन	क्रिया वहुवचन
(i) 'पीथल'	'पहोचे' (पहोचे पोथल ता नगर)[१]
(ii) 'राव'	'वोले' (वोलेस राव नृपराज सो)[२]
(iii) 'पातिल'	'पहुँचे' (पातिल पहुँचे जाय गढ)[३]
(iv) 'राजसिंह'	'वोले' (राजसिंह वोले)[४]
(v) 'पातिलराव'	'कोके' (कोके पातिलराव)[५]
(vi) 'नजव'	'वोले' (सुनत वात वोले नजव)[६]
(vii) 'छाजूराम'	'वुलाये' (मत्री छाजूराम वुलाये)[७]
(viii) 'भूप'	'सिधाये' (व्याह भूप दिसि देस सिधाये)[८]

४ प्रताप-रासो मे समुदाय का वोध कराने वाले भी कुछ शव्द प्रयुक्त हुए हैं—

'भीर'[९] 'भोरि'[१०] 'भोरि वोलि लीनी नजव, लछमनगढ़ की घेर'

'सेना'[११]—'सेन'[१२] 'सेना सुभर अनत';

'लगे संग की सेन गोला गरकै'

'फौज[१३] 'सितावी पवर फौज मे जाय दै हो'

'दल'[१४] 'रची राड कुरुपेत्र दल दोय जुटे'

'कटक'[१५] 'कटक धाय सूधे धकि आयव'

इन समुदाय-सूचक सज्ञाओं का कोई विशेप नाम हिन्दी-व्याकरण मे उपलव्ध नही होता। इनको एकवचन ही माना जाता है और इनके वहुवचन भी, इसी कारण देखे जाते है। यथा—

'फाडि फौजे घनी। देस आये घनी ॥'[१६]

'आये कटकै रटकै सज साजै।'[१७]

---

१. छं० सं० १५३। २ छं० स० १६६। ३ छ० सं० १८४। ४. छं० सं० १८६। ५ छ० सं० २१६। ६ छं० स० २६३। ७ छ० सं० १७८। ८ छं०सं० १५८। ६ छं० स० १५१। १० छ० सं० २७२। ११. छं० सं० ७८। १२. छं० स० १३०। १३. छ० सं० ८५। १४ छं० स० ८५। १५. छ० सं० १२८। १६ छ० सं० ३१२। १७. छं० सं० १८७।

५. अकारान्त शब्दों को ऐकारान्त बनाकर भी बहुवचन शब्द देखने मे आते हैं—

'बात' > 'बातै'[1], 'फौज' > 'फौजै'[2], 'तुपक' > 'तुपकै'[3], 'उसास' > 'उसासै'[4], 'कटक' > 'कटकै'[5], 'बदूक' > 'बदूकै'[6], 'कमान' > 'कमानै'[7], 'अवाज' > 'अवाजै'[8], 'तेग' > 'तेगै'[9]।

६. आकारान्त शब्दो का ऐकारान्त बहुवचन रूप—

'अरावा' > 'अरावै'[10], 'जजाला' > 'जजालै'[11]।

७. आकारान्त संज्ञा शब्दो को एकारान्त बनाकर—

'डेरा' > 'डेरे'[12]
'नगारा' > नगारे'[13]
'हलकारा' 'हलकारे'[14]

८. अकारान्त को एकारान्त बनाकर—

'तोव' > 'तोवे'[15]
'फौज' 'फौजे'[16]

९. कुछ अन्य वहुवचन—

'बधु' > 'वधव'[17] ('बाधव' शब्द का द्योतक)
'राकस' > 'राकसा'[18] (राजस्थानी प्रभाव)
'बीबो' > 'बीबियाँ'[19] (खडी बोली के अनुसार)
'फिरगी' > 'फिरगिय'[20] ('इय' प्रत्यय लगाकर)
'मुगल' > 'मुगलानु'[21] ('आनु' प्रत्यय द्वारा)
'अमीर' > 'उमरा /व/'[22] (प्रचलित पद्धति के अनुसार। 'उमरा' स्वय बहुवचन है)

कारक

प्रताप-रासो मे कारक-चिह्न नीचे लिखे अनुसार हैं—

कर्त्ता :

---

१. छ० सं० ५५। २. छं० सं० ८४। ३. छ० सं० ८५। ४ छं० सं० १३३। ५ छ० सं० १८७। ६. छ० सं० १८७। ७ छ० स० १८७। ८. छ० स० १८२। ९ छ० स० २६१। १०. छं० स० ९३। ११. छं० स० १८९। १२. छ० स० २६१। १३ छ० सं० १८७। १४ छ० स० २३६। १५ छ० स० २८३। १६ छ० सं० ३१२। १७ छं० स० ६१। १८. छ० सं० ६। १९. छ० स० २६१। २०. छ० सं० २३६। २१. छ० सं० २६१। २२. छं० स० ७१।

कर्म को[१], कौ[२], कू[३], को[४], कु[५], कूॅ[६], कौ[७]।

करण सो[८], सौ[९], सू[१०], सौं[११], सू[१२], सु[१३], सु[१४], सो[१५]।

सम्प्रदान को[१६], कौं[१७], कू[१८], कु[१९]।

अपादान . सौं[२०], सूँ[२१], ते[२२], सो[२३], सु[२४]।

सम्बन्ध : कै[२५], के[२६], को[२७], को[२८], कौं[२९], को[३०], कौ[३१], कै[३२]।

अधिकरण : मै[३३], मे[३४], मैं[३५], पै[३६], पर[३७], कै[३८], मो[३९]।

(कही-कही सयोगात्मक अवस्था मे भी शब्द मिलते हैं। जैसे—
'लोके'[४०]—"गिरे पेत सूजा गये सुरगलोके"
'उरै'[४१] —"उरै दिसि चालनौं जो हम धारो")

उदाहरण—

कर्त्ता—आधुनिक हिन्दी मे भी कर्त्ता कारक का चिह्न 'ने' कुछ परिस्थितियो मे प्रयुक्त होता है और कुछ मे नही। प्रताप-रासो मे 'ने' चिह्न कही भी नही दिखाई दिया। जहाँ आधुनिक हिंदी मे 'ने' की आवश्यकता होती है, वहाँ भी प्रयोग नही किया गया है। कुछ उदाहरण देखिए—

(१) जुध येक मैं कीन[४२] 'मैं'+='मैं'+'ने'।
(२) पत मंत्री लिषी भूप कौं[४३] 'मत्री'+='मत्री'+'ने'।
(३) नृप आसन दे भुजा पसारिय[४४] 'नृप'+='नृप'+'ने'।

जहाँ आधुनिक हिन्दी मे भी आवश्यकता नही होती—

(१) 'मैं करूँ जुध वन सो स जाय'[४५]।
(२) सहल करन कू राव सिधाये'[४६]।
(३) ताते कहूँ मै सुनो साथ सारो[४७]।

---

१. छं० स० ३७। २ छ० स० ४३४। ३ छ० स० १०५। ४. छं० स० ११७। ५ छं० स० १७३। ६ छ० स० १६१। ७ छं० स० ३६१। ८. छ० स० १६६। ९ छं० स० १२३। १० छ० स० २५८। ११ छं० सं० २६२। १२ छ० स० २६८। १३ छं० स० ३२०। १४ छ० स० ३८३। १५ छं० स० ४५६। १६. छं० स० २९। १७ छ० स० २४२। १८ छं० स० १६१। १९ छं० स० २९८। २०. छं० स० ४७। २१. छ० स० १३४। २२ छं० स० ३०२। २३. छं० स० ३३०। २४ छ० स० ४२४। २५ छं० सं० १। २६ छं० स० २३। २७ छं० सं० १६८। २८ छं० सं० २०४। २९ छं० सं० ६६। ३०. छं० स० १३८। ३१. छ० सं० २४५। ३२ छं० सं० ३२६। ३३ छं० सं० १६। ३४ छं० सं० २६। ३५ छ० सं० ३७१। ३६. छं० सं० ३७४। ३७. छं० सं० १७४। ३८ छ० स० ३१६। ३९ छं० स० २७१। ४० छं० स० ८५। ४१. छ० सं० १६३। ४२. छं० स० ८३। ४३ छ० स० ३१७। ४४ छ० स० १९३। ४५ छं० स० १६६। ४६ छं० स० १६१। ४७. छ० स० १६३।

कर्म कारक 'को'—पनै राव परताप 'को' आप धारी।[1]

'कौं'—पत भूपति 'कौं' दिये पठाये।[2]

'कूं'—भेजि सदासिव भट 'कूं' अनमानत जुध कीजिये।[3]

'को'—बोल सुनाहो यो सबही 'को' करी जुध जो राघन जी 'को'।[4]

'कु'—जवर राव 'कु' जाय है, रहै भग कछु होय।[5]

'कू'—'वहरचो दिसि डेरन 'कू' आये'।[6]

'कौ'—'धरपती भूप 'कौ' किसत दीन।[7]

करण 'सो'—बोले सुराव नृपराज 'सो' करत याद फिर आय है।[8]

कहे वचन यौ स्याम 'सो' दीने आडे हाथ।[9]

'सौ'—मिली तुम 'सौ' जिनहूँ मिल हो।[10]

'सू'—मत्री बोले कवर 'सू' बहोर सेन गढ लीन।[11]

'सौं'—बोलि गुसाईं 'सौ' कही सला होन सुनाय।[12]

'सू'—जा नवाब 'सू' जवाव सला सुधि—बुधि सु कीजे।[13]

'सु'—धरम राव पातल 'सु' हारचौ।[14]

'सु'—बोलि पुस्यालीराम 'सु' कहे भूप वर बैन।[15]

'सो'—मत्री वधुन 'सो' वा वारे।[16]

सम्प्रदान—'कौ'—ढूढाहर देपन 'कौ' चलि हौ।[17]

राजकवर 'कौ' सीष दी, नरपति करी निवाज।[18]

'कू'—आये जुड जाचन 'कू' जोई।[19]

'को'—जगवध 'को' कलियाण।[20]

'कु'—किला यह हम 'कु' दीजत।[21]

अपादान—'सौं'—टरया सु स्याम 'सौ' यहै जोग।[22]

'सू'—आय भूपदल दीघ 'सूं' रह घटि कोस पचीस।[23]

'सो'—यो सुनाय सब, साथ 'सो' निकसे चावडदान।[24]

---

१ छं० स० ३७। २. छ० स० ४३४। ३ छ० सं० १०५। ४. छ० स० ११७। ५ छ० सं० १७३। ६. छं० स० १६१। ७ छ० स० ४१४। ८ छ० सं० १६६। ६. छं० सं० ३८। १० छं० स० २४२। ११. छ० सं० २५८। १२. छ० स० २६२। १३. छ० स० २६८। १४. छं० सं० ३२०। १५. छं० स० ३८३। १६. छ० स० ४५६। १७. छं० स० २४२। १८. छ० सं० ३६१। १६ छं० स० १५४। २० छ० स० २६८। २१. छ० सं० २६। २२. छ० स० ४७। २३ छं० सं० १३४। २४ छ० स० ३३०।

'सु'—लैण होय सो मो 'सु' लीजै ।[1]

'ते'—मत्री सिर 'ते' स्याम तजि, हुये नजब दल लारि ।[2]

सबंध— 'कै'—गवरि पुत्र गणराज 'कै', प्रथमहि लगु पाय ।[3]

मत्री बुलाय महाराज 'कै', यौ पूछी व्रजराज ।[4]

'के'—तास तात 'के' बधु कवर मगल व्रत धारिय ।[5]

सुतस राव वरसिंह 'के', हुयो राव महाराज ।[6]

'की'—भुजा दाहिनी भूप 'की', बैसत पातलराव ।[7]

'को'—हुकम साहि 'को' सोई कीजै । दिसा-दिसा सिर डेरा दीजै ।[8]

'कौ'—ले बधु आदि आमैरि 'को', सुलझावत आमैरपति ।[9]

'को'—इसो राजसी 'को' हुकम भूप होई ।[10]

'कौ'—जुद्धकरन 'कौं' जोग है, करै सु सीताराम ।[11]

'कैं'—सुणि जवाव नवाब 'कैं', बोलि मीर उमराव ।[12]

अधिकरण–'मैं'—गयो बाज वनवास 'मैं', ते लव कर गह लीन ।[13]

'मे'—मारि लिये मावास 'मे', कामा राव कल्याण ।[14]

'पै'—किये जुध जो 'पै' किलै मास दोई ।[15]

सिर 'पै' नाहिन स्याम है ।[16]

'पर'—ता 'पर' हमै मुहीमस होई ।[17]

दगेस पातल राव 'पर', कियेस दुरजन हाथ ।[18]

'कैं'—अठारैसै षटतीस 'कैं', दिये नजब सिर दाव ।[19]

'मो'—दल 'मो' बुस्याल डेरा कराय ।[20]

कुछ स्थानो पर कारक चिह्नो का लोप भी पाया जाता है—

(1) कर्त्ता कारक—पहले ही दिखाया जा चुका है कि इसका चिह्न किसी भी स्थिति मे लक्षित नही होता ।

---

१ छं० सं० ४२४ । २ छं० सं० ३०२ । ३. छं० स० १ । ४. छं० सं० ७१ । ५ छं० सं० ३ । ६. छं० स० २३ । ७. छं० स० ४५ । ८. छं० स० २०४ । ९ छं० सं० ३८० । १०. छं० स० १३८ । ११ छं० स० २४५ । १२. छं० सं० ३२६ । १३. छं० स० १६ । १४. छं० स० २६ । १५. छं० स० ३७ । १६. छं० स० ३५१ । १७. छं० सं० १७४ । १८. छं० सं० १६२ । १९. छं०सं० ३१६ । २० छं० स० २७१ ।

(ii) कर्म—क्यो तुम दिल्ली नजब तजि दीनों।[1] (दिल्ली-नजव+'को')
षत बचि भूप लिषयेस आप।[2] (षत+'को')
(iii) सबध— राज मलेसी सुत भये, बीजल राव वषान।[3] (मलेसी+'के')
समस्त पद के रूप मे तो यह स्थिति है ही।
(v) अधिकरण—ता बन यक तपसी तपत।[4] ('बन'+में)
गढ सैथल मुकाम करि।[5] ('सैथल'+मे)

संबध कारक मे राजस्थानी चिह्न का प्रयोग—

'रै'—नरूधर 'रै' गढ राजस्थान।[6]

'रौ'—वत दिलोधर नजब नर, यत आमेर 'रौ' अधिराज।[7]

'रा' दोहु दलां विच राव 'रा', मत्री चाढै रंग।[8]

पर अपेक्षाकृत इन चिह्नो का कम ही प्रयोग है।

कुछ निष्कर्ष

१ कारको के चिह्न प्राय व्रजभाषा के है। किसी भाषा का निर्णय करने मे कारक-चिह्न बहुत सहायक होते है। प्रताप-रासो में व्रजभाषा के कारक चिह्नो का प्राचुर्य है।

२. यत्र तत्र कारक चिह्नो पर राजस्थानी प्रभाव भी है। कही-कही तो 'रै', 'रौ', 'रा' सबध कारक के चिह्नो का प्रयोग भी हुआ है। 'सू', 'कूं' मेवाती प्रयोगो का मिलना स्वाभाविक है, क्योकि अलवर मे मेवाती प्रभाव रहा है।

३ आवश्यकता होने पर चिह्नों का प्रयोग नहीं भी किया गया है। उदाहरण अलग दिए गए है।

४. सप्तमी विभक्ति के चिह्नो को शब्दो के सयोगात्मक रूप मे भी ग्रहण किया गया है। ऐसे स्थानो पर अकारान्त से ऐकारान्त किया गया है।

'सिर'—'सिरै'—करी कीनहार 'सिरै' दोस मोही[9]

'उर'—'उरै' 'उरै' दिसि चालेनो जो हम धारो।[10]

'मन'—'मनै'—पनधारी पातिल 'मनै'[11]

---

१. छं० सं० ३५०। २. छं० स० ३५२। ३. छ० सं० २०। ४ छं० स० ७। ५ छं० स० ३५८। ६. छं० स० २१५। ७. छ० सं० २८६। ८ छ० सं० २३२। ९. छं० सं० १६३। १० छ० सं० १६३। ११. छ० स० ४४७।

५ कारक चिह्नो के रूपो मे बहुत विभिन्नता है, सभवत: लिपि के कारण—

(i) 'को'[१], 'कौ'[२], 'को'[३], 'कौ'[४]।

(ii) 'सो'[५], 'सौ'[६], 'सौं'[७], 'सो'[८]।

(iii) 'कूँ'[९], 'कु'[१०], 'कू'[११]।

(iv) 'सू'[१२], 'सु'[१३], 'सु'[१४], 'सू'[१५]

(v) 'कूँ'[१६], 'कु'[१७]।

(vi) 'कैं'[१८], 'के'[१९]।

(vii) 'मै'[२०], 'मे'[२१], 'मैं'[२२]।

हिन्दी के चिह्नो की अपेक्षा अधिक विविधता है

६. सबोधन का प्रयोग कम ही हुआ है। एक प्रयोग देखे—

'रे'—यसी जान कै आप सुजास बोले।
है 'रे' कोऊ या बार यौ बैन बोले ॥[२३]

७. मूल रूप और विकृत रूप दोनो मिलते है—

विकृत रूप

'व्याहन' बीकानेर घर[२४]—	'व्याहने'+'को'
'हसतीस' बैठि दिस सह लिये[२५]	'हसती'+'पर'
'यतै' व्रजराजन कीनो हकारो[२६]	'व्रजराज'+'ने'

८ कुछ सर्वनामो के साथ भी कारको के चिह्न देखे—

		मूल	विकृत
कर्त्ता	:	'मै'+'०'[२७]	'तिन'[३०]
कर्म	:	'हम'+'कु'[२८]	'मोहि'[३१]
करण		'तुम'+'सै'[२९]	'ताते'[३२]

१. छ० स० २३। २. छ० स० २८। ३. छं० सं० ११७। ४. छं० सं० ६६। ५ छ० सं० ३८। ६. छं० सं० १२३। ७. छं० स० २६२। ८. छं० स० २३८। ९ छ० स० १७३। १० छं० सं० ४१६। ११. छ० सं० १५४। १२ छं० स० २६८। १३. छं० सं० ३२०। १४ छं० सं० ३८३। १५ छं० सं० २५८। १६. छं० स० १०५। १७. छं० सं० १७३। १८ छ० सं० १। १९. छ० स० २। २०. छं० सं० १६। २१. छ० सं० २६। २२. छ० सं० ३१। २३. छं० सं० ८५। २४. छ० स० १५०। २५. छं० सं० १५१। २६. छं० सं० ८५। २७. छं० स० १६३। २८. छ० सं० २६८। २९. छं० सं० २४२। ३०. छं० सं० ३७५। ३१. छ० सं० १०। ३२. छं० सं० ३७१।

सम्प्रदान . 'हम'+'कु'[1]
अपादान : 'मो'+'सु'[2]
सम्वन्ध : 'तिन'+'के'[3] 'तेरे'[6], 'मो'[7]
अधिकरण · 'ता'+'पर'[4] 'तिन'[8]
'हम'+'पै'[5]

इस सम्बन्ध मे विशेष विवरण सर्वनाम के अन्तर्गत देना उपयुक्त होगा। यहाँ इस बात को दिखाने की चेष्टा की गई है कि कारक-चिह्नो का प्रयोग सज्ञा सर्वनाम दोनो के साथ देखा जाता है। प्राय· शब्द अपने मूल रूप मे ही रहते हैं, परन्तु कभी-कभी उनका रूप विकृत भी हो जाता है। संज्ञा की अपेक्षा सर्वनाम मे विकृत होने की प्रवृत्ति अपेक्षाकृत अधिक है।

सज्ञाओं के कुछ विशेष रूप—

(१) व्यक्तिवाचक सज्ञाओ की सूची प्रस्तावना में अलग दी गई है—इसमे इस पुस्तक मे आए हुए पात्रो तथा स्थानो की नामावलि है। व्यक्तिवाचक सज्ञा-शब्दो की भी एकरूपता नही पाई जाती। जैसे—
'जवाहर'[9], 'जोहार'[10], 'जौहार'[11], 'जोहार'[12]।
'पातिल'[13], 'पातलि'[14], 'पातल'[15]।

(२) विशेष प्रत्ययो से बनी सज्ञाएँ—
'वारे' ↼ 'आमैरिवारे'[16] = 'आमैरि'+'वारे'
'वारो' ↼ 'आमावतिवारो'[17] = 'आमावति'+'वारो'
'क' ↼ 'पायक'[18] = √'पाय'+'क'
'दायक'[19] = √'दाय'+'क'
'वान' ↼ 'आधीनवान'[20] = 'आधीन'+'वान'
'हार' ↼ 'कीनहार'[21] = √'कीन'+'हार'
'कहनहार'[22] = √'कहन'+'हार'
'—ई' ↼ 'करनी'[23] = √'करना'+'ई'

---

१. छं० सं० २९८। २. छं० स० ४२४। ३ छ० स० २०। ४ छं० स० ४५। ५ छं० स० १९१। ६. छं० सं० १०। ७ छ० स० ४६६। ८. छं० स० १०। ९ छ० सं० १३३। १० छं० स० ९७। ११. छं० स० ८९। १२ छ० सं ९२। १३ छं० सं० ६५। १४. छं० सं० ९९। १५. छं० सं० १०२। १६ छं० स० ९७। १७ छं० स० २८९। १८. छं० स० ११२। १९ छं० स० ४६६। २०. छ०स० १६३। २१. छ०स० २४१। २२. छ०स० २७३। २३. छं०स० ३१०।

'न' ~ 'चलन'[1] = √'चल' + 'न'
'आवन'[2] = √'आना' + 'न'

सर्वनाम

प्रताप-रासो मे सर्वनाम के प्राय: वे सभी रूप देखे गए, जो आधुनिक हिन्दी मे प्रयुक्त होते है। आधुनिक हिन्दी व्याकरण के अनुसार सर्वनाम के आठ भेद है—

१. पुरुषवाचक : मैं[3], हम[4], तुम[5], वह[6], ते[7], सो[8]।
२. निजवाचक अप[9], आप[10], आपन[11]।
३ निश्चयवाचक : यह[12], ये[13], वह[14]।
४. सम्बन्धवाचक : जो[15]।
५ नित्यसम्बन्धी : सो[16]।
६ अनिश्चयवाचक : कोय[17]।
७. प्रश्नवाचक . कौन[18]।
८. आदरवाचक : आप[19]।

रूप-विन्यास की दृष्टि से पुरुषवाचक सर्वनाम बहुत महत्त्वपूर्ण होते हैं और उनकी आकृति के आधार पर किसी भाषा या बोली का वर्गीकरण करना सभव होता है। जैसा कारक के प्रसग मे देखा गया, उसी प्रकार सर्वनाम के रूपो पर विचार करने से भी यही सिद्ध होता है कि प्रताप-रासो ग्रन्थ की भाषा निश्चय रूप से व्रजभाषा है। यत्र-तत्र थोडा बहुत अन्तर होना तो अनिवार्य-सा है, क्योकि कोई भी लेखक स्थानीय प्रयोगो मे प्रभावित होता ही है।

पुरुषवाचक सर्वनाम

उत्तम पुरुष 'मैं' के रूप

कारक	एक वचन	बहुवचन
कर्त्ता	मैं[20], मै[21]	हम[22]

१. छ० स० ३४४। २. छं० स० ३८०। ३. छ० स० ३६६। ४. छं० स० १६३। ५. छ० स० १६६। ६. छं० स० १०५। ७. छ० स० ११४। ८ छं० सं० १५। ९. छं० स० २२४। १० छं० सं० १४८। ११ छं० सं० २५५। १२. छ० सं० ४७। १३. छ० स० ३२५। १४ छं० स० १६६। १५. छं० सं० १६३। १६. छं० स० १६६। १७. छं० स० २४३। १८. छं० सं० १६६। १९ छं० सं० ४७। २०. छं० सं० ३६३। २१. छं० सं० १६३। २२. छं० सं० १६३।

कर्म	मोहि[1]	हमै[2], हमैं[3]
करण	(मोसु)	(हमसु)
सम्प्रदान	(मोहि)	हमकु[4]
अपादान	मोसु[5]	(हमसु)
सबध	मोरिय[6], मेरीस[7], मो[8], मेरो[9], मेरे[10], मोही[11],	हमारो[12], हमारी[13], हमरी[14], हमारिय[15]।
अधिकरण	(मो पै)	हम पै[16]।

प्रयोग—'मै'—ताते कहूँ 'मै' सुनो साथ सारौ।[17]

'मैं'—बालिक जिम पाले त्रहु भाई। लघुता ते 'मैं' किये बडाई।[18]

'हम'—रावरीय अनमान सला सलाह करी 'हम'।[19]

'मोहि'—महाराज 'मोहि' यह माफ कीन।[20]

'हमै'—ता पर 'हमै' मुहीमस होई।[21]

'हमकु'—अलवर साहि सुठाम किला यह 'हमकु' दीजत।[22]

'मोसु'—लैंण होय सो 'मोसु' लीजै।[23]

'मेरीस'—अरज येक 'मेरीस' यह जो नरेस सुनि लीजिये।[24]

'मो'—'मो' बलकी यह बात प पातल जीवत देत कब।[25]

'मोरिय'—आ नसक तजि सक है सुनि लीने 'मोरिय'।[26]

'मेरो'—जो है घुस्याल 'मेरो' सुनाम।[27]

'मेरे'—'मेरे' मेरे नाय बिकाने। दोय परा दिस च्यार रौ जानै।[28]

'मोही'—करी कीनहार सिरै दोस 'मोही'।[29]

'हमारो'—हुकमै 'हमारो' यही भाति दीज्यो।[30]

'हमारी'—इसी नग्र नाही न चैंही 'हमारी'।[31]

'हमरी'—रहिये असेष व सेष घुसी। तुमरी'हमरी' घर येक वशी।[32]

---

१ छं० सं० १६३। २ छं० सं० २६३। ३ छं० स० ६७। ४. छ० सं० २६८। ५. छ० सं० ४२४। ६ छ० सं० ६१। ७. छ० स० १०५। ८ छ० स० २६८। ९ छं० स० ३२१। १०. छ० स० ३६६। ११ छ० स० १६३। १२. छ० स० १३८। १३. छ० स० १६३। १४. छं० स० २४२। १५. छ० सं० ४२४। १६ छ० स० ३६८। १७. छ० स० १६३। १८. छं० सं० ३६६। १९. छं० सं० २६३। २० छ० स० १९८। २१. छं० स० १७४। २२. छ० स० २६८। २३. छं० सं० ४२४। २४. छं० सं० १०५। २५ छं० स० २६८। २६ छं० स० ६१। २७. छ० स० ३२१। २८ छं० सं० ३६६। २९. छं० स० १६३। ३०. छ० स० १३८। ३१. छ० सं० १६३। ३२. छ० स० २४२।

'हमारिय'—कहरण होय सो कहो जिसी बल बुधि 'हमारिय' ।[1]
'हम पै'—'हम पै' भारी भीर धीर घरिये न येक छिन ।[2]

मध्यम पुरुष 'तुम' के रूप

प्रताप-रासो मे कर्म कारक 'तू' का प्रयोग नही हुआ है। इसके केवल कुछ ही रूप मिलते हैं। जैसे—'तो ही'[3], 'तेरे'[4] ।

कारक	एक वचन	बहुवचन
कर्त्ता	×	तुम[5], तम[6],
कर्म	तो[7]	तुमै[8], तमै[9]
करण	×	(तुम सौं)~सू, सुं
सप्रदान	×	(तुम कौं) (तुमै)
अपादान	×	(तुम सौं)~सू, सु
सबंध	तेरे[10]	तुमरो[11], तुम्हारो[12], तुम्हरे[13], तुमारी[14], तुमरी[15],
अधिकरण	—	तुम्हरी[16], तुम्हारी[17], तुम्हारिय[18] तिहारी[19] (तुम पै)

प्रयोग—'तुम'—'तुम' कीन वधु जो वधु काम ।[20]
'तम'—रावराज परताप करन होय सो कहो 'तम' ।[21]
'तो'—दुरजन 'तो' ही जानियत, छत्री धरम डिगात ।[22]
'तुमै'—करि है पर और हरोल 'तुमै' ।[23]
'तमै'—'तमै' देखनों ठाम सोही विचारे ।[24]
'तेरे'—को पुत्री को तात कौन 'तेरे' पति कहियत ।[25]
'तुमरो'—सुत 'तुमरो' पकरेगो सोई ।[26]
'तुम्हारो'—मिलिये माधव नृपति सौं, सदा 'तुम्हारो' सीर ।[27]
'तुम्हरे'—आपक 'तुम्हरे' तात सदा पायक वा घर के ।[28]

---

१ छं० सं० ४२२ । २ छं० सं० ३९८ । ३ छं० सं० ३११ । ४. छं० सं० १० । ५ छं० सं० १६६ । ६ छं० सं० ४४५ । ७ छं० सं० ३११ । ८. छं० सं० २४२ । ९. छं० सं० ६७ । १०. छं० सं० १० । ११ छं० सं० १५ । १२. छं० सं० ३२० । १३. छं०सं० ११२ । १४. छं०सं० १६३ । १५. छं०सं० २४२ । १६. छं० सं० २४२ । १७. छं० सं० ३२० । १८ छं० सं० ६८ । १९ छं० सं० ४०६ । २० छं० सं० १६६ । २१. छं० सं० ४०० । २२. छं० सं० ३११ । २३ छं० सं० २४२ । २४. छं० सं० ६७ । २५. छं० सं० १० । २६. छं०सं० १५ । २७ छं० सं० १११ । २८ छं०सं० ११२ ।

'तुमारी'—सरी 'तुमारी' रार आरि मिलियेस वेगियत ।[1]

'तुमरी'—'तुमरी' हमरी घर येक वशो ।[2]

'तुम्हरी'—'तुम्हरी' हद देषन आन हमैं। करि है पर और हरोल तुमैं ।[3]

'तुम्हारी'—कह्यौ 'तुम्हारी' सोई कीजै ।[4]

'तुम्हारिय'—रहिय दोय निसि च्यारि गाँव यह ठाँव 'तुम्हारिय' ।[5]

'तिहारी'—ये आये दिली दल भारी। यह मत्री है वार 'तिहारी' ।[6]

अन्यपुरुष (वह—ता) के रूप

कारक	एक वचन	बहुवचन
कर्त्ता	वह[7], वा[8]	जिनै[9], ते[10], तिन[11], ता[12] ।
कर्म	ते[13], तास[14], ता[15], ताहि[16]	तण[17], तिन[18] ।
करण	तेन[19]	(तिन)[20] ।
सम्प्रदान	ताहि[21]	(तिनै), (तिन) ।
अपादान	तासु[22], तेन[23]	(तिनसुं)
संबध	ताको[24], तास के[25] तास कै[26], ता[27] तास[28],	तिनके[29], तिन[30], तिनकी[31] ।
अधिकरण	तापै[32], तापर[33]	तिन[34] ।

ऊपर लिखे रूपों से स्पष्ट है कि एक ही शब्द कई कारको का काम भी करता है, यथा—'तिन' (कर्त्ता, कर्म, सम्प्रदान, सबध, अधिकरण)

प्रयोग—'वह'—'वह' नोकर तुम नृपति क्रोध कापै यह कीजिय ।[35]

'वा'—मंत्री बम्नुन सो 'वा' वारे ।[36]

'ते'—सुनि सामतन 'ते' तो रुद्र प्रवानी ।[37]

---

१. छं०स० १६३। २. छं०सं० २४२। ३ छं०स० २४२। ४ छं०स० ३२०। ५. छं०स० ६८। ६. छं०स० ४०६। ७. छं०स० १०५। ८. छं०स० ४५६। ९. छं०स० १३८। १०. छं० स० ४६३। ११ छं० स० ३४०। १२ छं० सं० १७८। १३ छं० स० १६। १४. छं० स० ११। १५ छं० सं० १८। १६ छं० सं० २१८। १७ छं० सं० १८०। १८ छं० स० ३३६। १९ छं० सं० ४०१। २०. छं० स० ३०१। २१. छं० सं० १४८। २२. छं० सं० ३२९। २३ छं० सं० ४०१। २४ छं० स० २२०। २५. छं० स० ४११। २६ छं० सं० ४३२। २७ छं० स० २६८। २८. छं० स० ११। २९. छं० स० २०। ३०. छं० स० ३०१। ३१. छं० स० ३४६। ३२. छं० स० १७६। ३३. छं० सं० २३४। ३४. छं० स० १०। ३५. छं० सं० १०५। ३६. छं० स० ४५६। ३७. छं० सं० ५१।

'तिन'—अलिगवर से साहि ताहि 'तिन' यसी सुनाई ।[1]
'ता'—'ता' सुन त्रहू सुनतहि आये ।[2]
'तें'—गयो वाज वनवास मे, 'तें' लव कर गह कीन ।[3]
'तास'—सुनत वचन रिष सीत के, सग लै गये 'तास' ।[4]
'ता'—'ता' तजि बधि गए वन जोई ।[5]
'ताहि'—अलिगवर से साहि 'ताहि' तिन यसी सुनाई ।[6]
'तण ने'—यती ठाव कलियाण 'तण ने' वुल वरीया वरु ।[7]
'तिन'—अैन वैन नर न जव वोलि 'तिन' बोलि सुनायव ।[8]
'तेन'—पवर भई भूपति कटक, 'तेन' तपत अति ताय ।[9]
'ताहि'—पीथल है आमैर पति, दोजै 'ताहि' कवारि ।[10]
'तासके'—दषण दल बल सवल 'तासके' कहिये नायक ।[11]
'ताको'—कोके नजव नवाव काज 'ताको' चल कीजत ।[12]
'तासकैं'—अस मग जहै वास 'तासकैं' घने माल लिय ।[13]
'ता'—नाम पुस्यालीराम तिन नजवपान 'ता' दल मिलन ।[14]
'तास'—हणू 'तास' वति होय जाणि जनरस हलवत ।[15]
'तिनके'—राजदेव 'तिनके' भये सुत कील्हन दे जान ।[16]
'तिन'—'तिन' सिर तषत सु राजगढ, रहनि आप सुख ठांम ।[17]
'तिनकी'—'तिनकी' मार फौज घन मेली ।[18]
'तापै'—को नृप रषै 'तापै' रहै। नाहि चले दिली दिस जहै ।[19]
'तापर'—'तापर' वैठे नजव नर, इंद्रपुरी सम ठाम ।[20]
'तिन'—सुत चार दसरथ के, 'तिन' दीरघ पति जानिये ।[21]

पुरुषवाचक सर्वनाम के वलात्मक प्रयोग भी प्रताप-रासो में हैं। कुछ उदाहरण दिए जा रहे हैं—

प्र० पु०—'मोही'—करी कीनहार सिरै दोस 'मोही' ।[22]

---

१ छं० सं० २१८। २ छं० स० १७८। ३ छं० सं० १६। ४ छं० सं० ११। ५ छं० सं० ८। ६ छं० स० २१८। ७ छं० स० १८०। ८ छं० स० ३३६। ९ छं० सं० ४०१। १० छं० सं० १४८। ११ छं० सं० ४११। १२ छं० सं० २२०। १३ छं० सं० ४३२। १४ छं० सं० २६८। १५. छं० सं० १९। १६ छं० स० २०। १७ छं० सं० २११। १८ छं० सं० ३४६। १९. छं० स० ७२। २०. छं० सं० २३४। २१ छं० सं० १०। २२. छं० सं० १६३।

म० पु०—'तोही'—दुरजन तोही जानयत छत्री धरम डिगात।[1]

अ० पु०—'तेहि'—सुनें बात हमीर 'तेहि' सिधारै।[2]

'ताही'—'ताही' नृप सारीष राव परताप भोमि भर।[3]

पुरुषवाचक सर्वनाम के रूप बहुत महत्त्वपूर्ण होते हैं। प्रतापरासो मे इनके रूप इस तथ्य की ओर निश्चित प्रमाण उपस्थित करते हैं कि ये सभी रूप व्रजभाषा के है। रूप की विभिन्नता अवश्य देखी जाती है। जैसा पहले भी लिखा जा चुका है—इस विभिन्नता का कारण लिखने मे अधिक ध्यान न देना है। दो एक उदाहरण देखें—

प्र०पु०—'मो'[4], मोरिय'[5], 'मेरोस'[6]।

म०पु०—'तुमारो'[7], 'तुमरी'[8], 'तिहारी'[9], 'तुम्हारी'[10], 'तुम्हरी'[11], 'तुम्हारिय'[12]।

अ०पु०—'ताके'[13], 'तासके'[14], 'तासकै'[15], 'ता'[16], 'तास'[17]।

पर कही-कही एक रूप ही अनेक विभक्तियो मे प्रयुक्त हुआ है—

'तिन'—'तिन'[18]—कर्त्ता। 'तिन'[19]—कर्म। 'तिन'[20]—सबंध 'तिन'[21]—अधिकरण।

निजवाचक—'आप' का प्रयोग निजवाचक और आदरसूचक दोनो रूपो में हुआ है। जव कोई अन्य व्यक्ति सबोधन करता है, तो आदरसूचक प्रयोग होता है और जब स्वय के लिए होता है, तो निजवाचक। अनेक स्थानो पर कवि ने आदरस्वरूप 'आप' का प्रयोग किया है। 'तू' का प्रयोग बहुत ही कम मिला। यह प्रवृत्ति कवि की शालीनता की परिचायक कही जा सकती है। निजवाचक मे 'आप' के तीन रूप मिलते है—

'अप' —'अप' पटतर से आप राव परताप सग दिय।[22]

चढे चवर बघ चाय दाय 'अप' नरू नृपति नर।[23]

'आप' —'यो सुन बीकानेर नृप, गजै 'आप' उरधारि।[24]

---

१. छं० सं० ३११। २. छं० स० ५१। ३ छं० स० २०१। ४. छं० स० २६८। ५ छं० सं० ६१। ६. छं० सं० १०५। ७ छं० स० १६३। ८ छं० स० २४२। ९. छं० स० ४०६। १०. छं० सं० ३२०। ११ छं० सं० १४०। १२ छं० सं० ६८। १३ छं० सं० २२०। १४. छं० सं० ४११। १५ छं० सं० ४३२। १६ छं० सं० २६८। १७. छं० सं० १६। १८. छं० स० ३४०। १९. छं० स० ३३६। २०. छं० स० ३०१। २१ छं० स० १०। २२. छं० स० २२४। २३. छं० स० १५६। २४ छं० सं० १४८।

बोलिये 'आप' यह ठाम काम ।[1]

'आपन'—'आपन' पै सिवसिंह बुलाये ।[2]

निजवाचक के साथ कारक चिह्न का भी प्रयोग हुआ है। जैसे ऊपर दिए गए उदाहरण मे—'आपन'+'पै'—(अधिकरण कारक का चिह्न)। इस प्रकार का प्रयोग आधुनिक खड़ी बोली मे नही देखा जाता।

निश्चयवाचक—निश्चयवाचक सर्वनाम के दो रूप देखे जाते हैं—(१) निकटवर्ती—'यह'[3], 'ये'[4]। (२) 'दूरवर्ती'—'सो'[5], 'ते'[6]।
निकटवर्ती निश्चयवाचक सर्वनाम के रूप इस प्रकार मिलते हैं—

एकवचन	वहुवचन
'यो', 'यह', 'या', 'याहि', 'यहै'।	'यन', 'ये',।

प्रयोग—'यो'—बुझी पातल चाह करि, कोन यक 'यो' वात ।[7]

'यह'—कलियाण वंस सो 'यह' न होय ।[8]

'या'—गुंम भारी भली। नवाव 'या' ही सिली ।[9]

'याहि'—बोलेसु मीर सुनिये नजव 'याहि' तोड़ कीजे चलन ।[12]

'यहै'—टरचा सु स्यांम सौं 'यहै' जोग ।[13]

'यन'—हम घर तुम घर दाय आय 'यन' कियो हुंद दल ।[10]

'ये'—'ये' आये दिली दल भारी। यह मंत्री है वार तिहारी ।[11]

यहाँ भी वलात्मक प्रयोग के लिए /ही/ ~ [ही][14], [हि][15], [है][16] का प्रयोग किया गया है। रूप-विभिन्नता यहाँ भी लक्षित होती है। यथा—एक वचन कर्त्ताकारक—

'यह' ~ [यो], [यह], [या], [य]—इनमे [यो] अलवरी-राजस्थानी, [यह] खड़ी बोली, [या] व्रजभाषा तीनो के रूप लक्षित होते हैं। [य] विकृत रूप है।

दूरवर्ती निश्चयवाचक सर्वनाम—

---

१ छं० सं० ४७। २. छं० सं० २५५। ३ छं० सं० ४७। ४. छं० स० ४०६। ५. छं० सं० ३२०। ६. छं० स० ११४। ७. छं० सं० ४३७। ८. छं० सं० ४७। ९. छं० सं० ३१२। १०. छं० सं० ४१८। ११. छं० स० ४०६। १२. छं० सं० २४८। १३ छं० सं० ४७। १४. छं० सं० ३१२। १५. छं० सं० २४८। १६. छं० सं० ४७।

एकवचन	बहुवचन	
(वह), (वा), 'सौ' 'सो'	'ते'	—सामान्य प्रयोग
'सोय', 'जोई', 'सोही', 'जोय'	तेहि	—बलात्मक प्रयोग

प्रतापरासो के उदाहरण—

'सौ'—'सो' सुनी राव पातिल नरेश ।[1]

'सोय'—सुनियेत 'सोय' नजब नवाब ।[2]

'सोही'—तमै देखनो ठाम 'सोही' विचारे ।[3]

सम्बन्धवाचक—सर्वनाम का यह प्रकार नित्यसम्बन्धी से संलग्न कहलाता है, क्योंकि इसका दूसरा प्रयोग, प्रायः नित्यसम्बन्धी 'जो' के साथ होता है। प्रतापरासो मे 'जो' और 'सो' अपना स्वतन्त्र अस्तित्व रखते प्रतीत होते हैं। 'जो' के नीचे लिखे रूप मिलते है—

'जो'—'जो' होय मोही दुरजन बताब। मैं करूँ जुध वत सोस जाय ।[4]

'जोय'—दगोस देत मत्रि ये। कहोस 'जोय' कीजिये ।[5]

'जोई'—'जोई' होय जौहार लैंन सोही चलि तोजै ।[6]

'जे'—गढ मझारि करि राडि के कुल कछवाह 'जे' जिते ।[7]

'जोय' और 'जोई'—'जो' के बलात्मक प्रयोग हैं।

प्रश्नवाचक—सर्वनाम का यह प्रकार नीचे लिखे रूपो मे मिलता है—

'कौण'[8], 'कौन'[9], 'को'[10], 'काके'[11], 'कौन की'[12], 'कोन'[13]।

ऊपर लिखे सभी रूप आधुनिक हिन्दी के 'कौन' से सबधित हैं। प्रतापरासो मे इनका प्रयोग देखिए—

'कौण'—अगम अलेख अपार 'कौण' पावत पार नर ।[14]

'कौन'—सुनै 'कौन' की को वहा जानहारो ।[15]

कही 'कौन' है सो यसी करनहारो ।[16]

---

१. छं० सं० १९८। २. छं० सं० २७१। ३. छं० सं० ९७। ४ छं० सं० १६६। ५. छं० सं० ३०३। ६ छं० सं० ११२। ७ छं० सं० २५९। ८ छं० स० २। ९. छं० स० १६३। १० छं०सं० २५७। ११ छं०स० ३१५। १२ छं० स० ८५। १३. छं० सं० ४३७। १४. छं० सं० २। /ण/ इस प्रान्त की विशेषता है अन्य शब्द 'लछमण' (छं० सं० १७); 'हणवत' (छं० सं० १९); 'जाणि' (छं० सं० १९); 'परवाण' (छं० सं० २५); 'वषाण' (छं० सं० २७) हिन्दी में ये ध्वनियां /न/ हैं। १५. छं० स० ८५। १६. छं० सं० १६१।

'कों'—बुझी सवत विचार लार सेनापति 'कों' है ।[१]

'काके'—'काके' हलद्या कौन नृप, पडे फंद्द कहा जाय ।[२]

'कौन की'—सुनै 'कौन की' को वहा जानहारो ।[३]

'कोन'—बुझी पाताल चाह करि, 'कोन' यक यो वात ।[४]

'का पै'—वह नोकर तुम नृपति क्रोध 'का पै' यह कीजिये ।[५]

कौन को विविध रूप

'कौन'~[कौण], [कौन , [कोन], [का]

'कौन' के साथ कारक चिह्नो का प्रयोग भी ऊपर दिखाया गया है ।

'का'+'के'='काके'

'का'+'पै'='कापै'

'कौन'+'की'='कौन की'

ऊपर के उदाहरणो मे कारक चिह्नो के साथ 'कौन' का रूप 'का' हो जाता है। यथा 'काके', 'कापै' 'काको' भी ।

नित्यसंबंधी—प्रायः देखा जाता है कि हिन्दी के नित्यसंबंधी सर्वनाम 'सो' का व्यवहार आधुनिक साहित्यिक हिन्दी में कम होता है। परन्तु प्रतापरासो लगभग २०० वर्ष पहले की रचना है और उसमें 'सो' का प्रयोग काफी हुआ है। आजकल भी बोलियो मे 'सो' (नित्यसंबधी) का प्रयोग देखा जाता है। प्रतापरासो मे 'सो' के कई रूप मिलते है, यथा—

	एकवचन	बहुवचन
मूल	'सो', 'सौ'	'सो'
विकृत	'तिस'	'तिन'
बलात्मक	'सोही', 'सोई'	'तिनै'
	'सोय'	

कुछ प्रयोग—

'सो'—(जो) लैण होव 'सो' मोमु लीजै ।[६]

'सौ'—(जो) वचन तुम्हारौ 'सौ' मै पारो ।[७]

'सोही'—(जो) राव कहै 'सोही' तुम कीजै ।[८]

---

१ छं० सं० २५७ । २. छं० सं० ३६५ । ३. छ० सं० ८५ । ४ छं० स० ४३७ । ५. छं० सं० १०५ । ६. छं० सं० ४२४ । ७. छं० सं० ३२० । ८. छं० सं० ३८४ ।

'सोय'—(जो) कहिहै षुस्याल मैं 'सोय' कीन ।[1]

'सोई'—कीजो (जो) राव कहै अब 'सोई' ।[2]

'तिन'—जिन दाडिये धर देस । 'तिन' पाट पण अणदेस ।।[3]

इन रूपो के साथ कारकीय रूप कम ही मिलते है। कर्त्ताकारक मे विकृत रूप प्राप्त होते हैं। 'जिन' के साथ 'तिन'[4] आदि।

अनिश्चयवाचक—

एक वचन	बहुवचन
'कोई', 'कोय'	(कोई)
'कोऊ', 'काहू', 'काहु'	
'कछु'	
'कछू'	

प्रतापरासो मे प्रयोग

'कोय'—न को 'कोय' सूझै भयो जुध भारी ।[5]

जीते न 'कोय' न 'कोय' हारि ।[6]

'काहू'—केते सेनापति सग हुकम 'काहू' यक दीजिय ।[7]

'काहु'—'काहु' कही नृपराज सू, अरज जुगल कर जोरि ।[8]

'कोई'—स्याम-द्रोह आगै न 'कोई' ।[9]

नृपति नरू साछात यसो नर करति न 'कोई' ।[10]

'कोऊ'—जान न दूजो और 'कोऊ', पातिल सो रण सथ ।[11]

है रे 'कोऊ' या वार यौ बैन बोले ।[12]

'कछु'—जवर राव कु जाय है, रहे भग 'कछु' होय ।[13]

'कछू'—देस त्याग अब दीजिये, और न 'कछू' विचार ।[14]

यहाँ 'कोई' ⌒ [कोय], [कोई], [कोऊ], 'कुछ'[15] ⌒ [कछु], [कछू]।

आदरवाचक—शिष्ट भाषा मे मध्यम पुरुष 'तू' या 'तुम' के स्थान पर प्रायः 'आप' व्यवहृत होता है। प्रतापरासोकार ने 'आप' का प्रयोग निजवाचक और आदरवाचक दोनो मे किया है। जैसा ऊपर लिखा गया है—'आप' का आदर-

---

१. छ० सं० २७१। २ छ० स० ३८४। ३ छ० स० २९। ४. छ० स० २९। ५ छ० सं० २३१। ६. छ० स० २४६। ७. छं० स० १०५। ८ छ० स० ३९३। ९ छं० स० ४७। १० छ० सं० ४६१। ११. छ० स० ८१। १२ छ० सं० ८५। १३. छ० सं० १७३। १४ छं० सं० ४८। १५ आधुनिक हिंदी।

वाचक सर्वनाम के रूप में प्रयोग, प्राय:, तभी होता है जब किसी अन्य द्वारा सम्बोधित किए जाने का प्रसग उपस्थित होता है । कुछ उदाहरण दिए जा रहे हैं—

१. अरज दास की 'आप' लगि औगुण गुण निवारियै ।[1]
(अपादान कारक)

२. धारीस 'आप' कीजैसि चाव । चाहि 'आप' पै भूप नाय ।[2]
(अधिकरण कारक)

३. कीजेस 'आप' आवै सदाय ।[3]
(कर्त्ता कारक)

४. मत्री वधू वचन सुनाये । ते परवानि 'आप' मनि आये ।[4]
(संवध कारक)

५. 'आप/क/' तुम्हरे तात सदा पायक वा घर के ।[5]
/क/अतिरिक्त ध्वनि का साभिप्राय योग ।

६. सुनिहोस 'आप' नृप जुध होत ।[6]

सवधकारक के सयोग मे 'रावरी' आदि शव्दो का प्रयोग भी हुआ है । 'रावरी'[7], 'रावरे'[8], 'रावरौ'[9] आदि व्रजभाषा मे प्रचलित हैं—

प्रतापरासो मे निम्न प्रयोग हुए है—

'रावरी'[10] य अनमान सला सलाह करौ हम ।[10]

दोहु दलां विचि 'रावरा', मत्री चाढै रग ।[11]

तव प्रत पातिल 'रावरो', वणो तिलक वषतेस ।[12]

सर्वनाम संवंधी कुछ अन्य वातें—

१. कही-कही दोहरे सर्वनामो का प्रयोग हुआ है—
'को'+'कोय'—न 'को' 'कोय' सूझै भयो जुध भारी ।[13]

२ लिपि की अस्थिरता से वहुरूपता मिलती है । यह प्रवृत्ति सवध कारक के रूपो मे अधिक पाई जाती है । उदाहरण यथास्थान दिए गए हैं ।

---

१. छं० सं० ३८५ । २. छं० सं० ३८६ । ३. छं० सं० ३८६ । ४ छ० स० २२२ । ५. छं० सं० ११२ । ६. छ० सं० १२१ । ७. छं० सं० २६३ । ८ 'रावरे दोष न पायन कौ ।' ९ 'वावरो रावरौ नाह भवानी ।' १०. छ० सं० २६३ । ११. छं० सं० २३२ । १२. छं० स० ४६२ । १३. छ० सं० २३१ ।

३. सर्वनामों के प्रयोग मूल, विकृत, विभक्ति सहित, विभक्ति रहित तथा बलात्मक रूपो मे पाये जाते है। उदाहरण स्थान-स्थान पर दिए गए हैं।

४. कुछ ऐसे भी प्रयोग हैं, जो आज नही पाये जाते—
'तिन'[१], 'रावरी'[२], 'जिन'[३], 'मो'[४], 'कोऊ'[५], 'कोय'[६],
'ता'[७], 'कछु'[८], 'या'[९], 'का'[१०], 'काहू'[११] आदि।

५. आधुनिक हिंदी के वियोगात्मक रूपो की अपेक्षा व्रजभाषा के सयोगात्मक रूप काफी हैं—
'जिन'[१२], 'तिन'[१३], 'ता'[१४], 'तमै'[१५],
'हमै'[१६], 'मो'[१७], 'काहु'[१८], 'यहै'[१९]।

६ राजस्थानी प्रभाव—'तम'[२०], 'कौण'[२१] आदि।

विशेषण

आधुनिक हिंदी के विशेषण, लिंग और वचन के द्वारा, कुछ परिस्थितियो मे प्रभावित होते हैं, कुछ मे नही। प्राचीन भारतीय आर्य-भाषाओ मे लिंग, वचन और कारक के अनुसार विशेषण का रूप-परिवर्तन देखा जाता है। विशेषण-प्रयोग की यह पद्धति काफी समय से प्रचलित है। प्रतापरासो मे विशेषण के रूप हिंदी की प्रचलित पद्धति पर पाये जाते हैं। विशेषण शब्दो के वर्गीकरण मे आधुनिक हिंदी-व्याकरण को ही आधार मानकर प्रयुक्त शब्दो के विभिन्न रूपो को प्रस्तुत करने का प्रयास किया गया है। विशेषण रूपो पर भी व्रजभाषा की ओकारात प्रवृत्ति का प्रभाव दिखाई देता है। व्रजप्रदेश मे ओकारात प्रवृत्ति दो रूपो मे देखी जाती है—ओकारान्त और औकारान्त। व्रजदेश मे यदि डीग के आसपास एक सीमा बना लें, तो पश्चिम की ओर ओकारान्त तथा उसके पूर्व की ओर औकारान्त ध्वनियाँ सुनी जावेगी। अतः अलवर-राजगढ क्षेत्र मे ओकारान्त प्रवृत्ति देखी जाती है। जयपुर मे तो 'और' शब्द को भी बहुत बार 'ओर' सुना जाता है।

---

१. छं० स० २११। २. छं० स० २६३। ३ छं० सं० २६। ४ छं० सं० २९८। ५. छं० स० ८५। ६ छं० सं० २३१। ७ छं० स० २६८। ८ छं० स० १७३। ९ छं० स० ३१२। १० छं० स० ३९५। ११ छं० सं० १०५। १२ छं० स० ३४४। १३ छं० सं० ३३६। १४ छं० सं० १७८। १५. छं० स० ९७। १६ छं० स० ९७। १७ छं० सं० २९८। १८ छं० सं० ३९३। १९. छं० सं० ४७। २०. छं० सं० ४००। २१. छं० स० २।

कुछ विशेषणों के ओकारान्त रूप देखिए—

(१) सिव 'चोथो' सिवब्रह्म, ठाम नीदरगढ दषिय ।[1]
(२) जान न 'दूजो' और कोऊ, पातिल सो रण सथ ।[2]
(३) वालो 'त्रियो' सुनाम, ठाम अमरसर दपिय ।[3]
(४) दयो पातलराव सो वैन 'नीको' ।[4]
(५) प्रथम षोहरा ठाम 'वीयो' पलवास नामचर ।[5]
(६) जानै जवाहर जो है 'नरूको' ।[6]
(७) इति अधपति 'अमावति वारो' ।[7]
(८) वति नवाव दिली दल 'भारो' ।[8]

ओकारान्त और औकारान्त मे कही अभेद भी देखा जाता है। जैसे—'मनो'[9], 'मनौं'[10]। प्रतापरासो की प्रमुख प्रवृत्ति ओकारान्त है।

विशेषणो का रूप-निर्माण कई पद्धतियो से हुआ है। यथा—संज्ञामूलक, सर्वनाममूलक, क्रियामूलक।

सज्ञामूलक—(i) 'आमैरी'[11], 'सोवनी'[12], 'हिंदवानी'[13], 'दिषणी'[14], (ईकारान्त प्रयोग के द्वारा)

(ii) अन्य पद के योग से—
'तप+पूरण'[15] (सज्ञा+विशेषण)
'किलो+वंघ'[16] (सज्ञा+क्रिया)
'समर+वाज'[17] (सज्ञा+विदेशी प्रत्यय)
'आमैरि+वारे'[18] (सज्ञा+हिंदी प्रत्यय)
'विद्या+दाता'[19] (सज्ञा+सज्ञा)

(iii) सवध कारक के आधार पर—(सज्ञा+सज्ञा)
'नजीम'—'फौजे'+ ᨆ'नजीमफौजे'[20]
'व्रज'—'देसा'+ ᨆ'व्रजदेसा'[21]
'आदि'—'अजुध्या'+ ᨆ'आदि अजुध्या'[22]

---

१. छ० स० २२। २. छं० स० ८१। ३. छं० स० २२। ४. छ० सं० १४०। ५. छ० सं० १८०। ६. छं० सं० १३०। ७. छं० सं० २८६। ८ छं० सं० २८६। ९ छ० स० १८७। १०. छं० स० १८७। ११ छ० सं० १३८। १२ छ० स० ६। १३. छ० स० १४४। १४. छं० स० ३२२। १५ छं० स० ३२। १६ छं० सं० ३७। १७. छ० स० ८१। १८ छं० स० ६७। १९. छं० सं० १२। २० छं० स० ८४। २१ छं० स० ८७। २२ छ० स० ५।

'हरवल'—'हथै'+ ↝'हरवल हथै'[१]

'मगल'—'दल'+ ↝'मगलदल'[२]

(IV) विशेष अर्थ मे—जैसे 'नर'[३] ↝'वीर' के अर्थ मे

'नर' अषमाल ईद्र सुठाम ।[४]

'नर' नजवषान कीनौ चलन ।[५]

तापर वैठे नजब 'नर'[६], ईद्रपुरी सम ठाम ।

विशेषणमूलक—

(I) प्रत्यय लगाकर—'आधीन'+'वान' ↝'आधीनवान'[७]

(II) सज्ञा के साथ—विशेषण+सज्ञा 'जव+मर्द' ↝'जवमर्द'[८]

(III) /स/नामक विशिष्ट प्रत्यय सहित—

'दाहिनी'+/स/ ↝'दाहिनीस'[९]

'तुरकी'+/स/ ↝'तुरकीस'[१०]

'साची'+/स/ ↝'साचीस'[११]

'च्यारि'+/स/ ↝'च्यारिस'[१२]

सर्वनाममूलक—

इसके अनेक उदाहरण हैं और सार्वनामिक विशेषण नाम से एक अलग प्रकार ही स्वीकृत किया गया है, जिसका वर्णन यथास्थान होगा ।

क्रियामूलक—जैसे 'फुरमाई'+'अवधि'

आई 'फुरमाई' अवधि तब रिष पूछे राम ।[१३]

अव्ययमूलक - जैसे 'जलद'+'चलन'; 'उलटिवाटि'+'चलन'

'जलद' चलन दिली दिस कीजै ।[१४]

'उलटिवाट' कीनो चलन लारे मत्री लेर ।[१५]

इस स्थान पर विश्लेषण की दृष्टि से विशेषण के तीन प्रमुख प्रकार (हिन्दी-व्याकरण के अनुसार हो) स्वीकार किए जा रहे है—

१. सार्वनामिक (पुरुषवाचक आदि प्रकारो सहित)

२. गुणवाचक (कालवाचक, व्यक्तिवाचक, स्थानवाचक, आकारवाचक, रगवाचक, दशावाचक, गुणवाचक आदि)

---

१. छ०स० ६७ । २ छं०स० २७६ । ३ छं०सं० २१८,२७८ । ४. छ०स० २७८ । ५. छ०सं० २१८,६ । ६ छं० स० २३४ । ७ छ० स० ४६६ । ८ छं० स० २४३ । ९. छ० स० १५२ । १० छ०स० ३७८ । ११ छं०स० ४२१ । १२ छ० स० ४३४ । १३ छ० स० १४ । १४ छ० स० ३४३ । १५ छ० सं० २७२ ।

३. सख्यावाचक (पूर्ण, अपूर्ण, अनिश्चित, क्रम, समुदाय, परिमाण आदि विशेषण)

सार्वनामिक विशेषण

(i) पुरुषवाचक—प्रथम—हुकमै 'हमारो' यही भांति दीज्यो ।[1]

मध्यम—'रावरीय' अनमान सला सलाह करी हम ।[2]

अन्य—किये 'तास' वनवास मे, समै जुध सुत तात ।[3]

(ii) निजवाचक—'आप'—राजाराव 'आप' दल आये ।[4]

'अप' 'अपदल' कोक वुलाविये, रावराज परताप ।[5]

तप वल 'अप' वल सग लै, गज हौदा सजि आप ।[6]

'निज'—धरचौ चरन 'निज' ध्यान ।[7]

(iii) निश्चयवाचक—'यह'—परताप राव 'यह' सला धारि ।[8]

'या'—रिपि वोले विधि 'या' विधि वोवो ।[9]

'वा'—'वा' घर या घर एक ही, आनो नजव नवाव ।[10]

पहुँचे सु जाय 'वा' नृपति ठाम ।[11]

'ते'—'ते' जवाव नवाव वचि ।[12]

इनके वलात्मक प्रयोग भी—

'याही'—नवाव 'याही' सला ।[13] 'या'+'ही'

'वाही'—वोर 'वाही' दलै ।[14] 'वा'+'ही'

'ताही'—जो अवाज नर नजव पै, पौंची 'ताही' वार ।[15]

(iv) सवधवाचक—'ज'—'ज' दिन न्याय नोवति वजी, उपजे पातिलराव ।[16]

'जो' ~'ज'

'जो'—'जो' विद्या जितनी पढी, वालमीक गुरु कीन ।[17]

'जो' अवाज पातिल सुन कानन ।[18]

(v) अनिश्चयवाचक—'को'—'को' भूप उतरे आय ।[19]

'को' नृप रखे तापै रहै । नाहि चले दिली दिस जहै ।[20]

---

१. छं० स० १३८ । २ छ० स० २६३ । ३. छ० स० २७ । ४. छं० सं० २६४ । ५. छ० स० २६० । ६. छं० स० ४१५ । ७ छं० सं० ४५८ । ८. छं० स० ३६६, ४६ भी । ९ छं० स० १५ । १० छं० सं० २४३ । ११ छं० स० १५२ । १२. छं० स० ३२८ । १३ छं० स० ३१२ । १४. छं० सं० ३१२ । १५. छं० सं० २५६ । १६ छं० स० ३ । १७ छं० स० १३ । १८. छं० सं० २३७ । १९ छं० सं० ७० । २०. छं० सं० ७२ ।

(vi) नित्य सबधी—

'सो'—पातिलराव सुनो 'सो' बातै ।[1]

होय घरा 'सो' बात ।[2]

'सोइ'—सीसोद हाड़ा 'सोइ' । उमर षीची जोय ।[3]

'सोही'—तमै देखनो ठाम 'सोही' विचारे ।[4]

'वही'—आधुनिक हिंदी का यह रूप [सोइ], [सोय], [सोही]—/हो/ ~[इ], [य], [ही] आदि मे देखा जाता है ।

गुणवाचक विशेषण

कालवाचक—'छिनक'—लई न 'छिनक' अवार ।[5]

'तत'—'तत' काल कूच बजाय ।[6]

'जलद'—'जलद' चलन दिली दिस कीजे ।[7]

सज्ञामूलक (व्यक्तिवाचक तथा जातिवाचक+प्रत्यय)

'आमैरिवारे'—हमे जानियो बधु 'आमैरिवारे' ।[8]

'गर्भवंति'—'गर्भवति' सीता संग होई ।[9]

'दषिनी'—'दषिनी' हरोल आगैस षम ।[10]

'देपणी'—अरु 'देषणी' दल सग ।[11]

'सोवनी'—बकसेस लंक 'सोवनी' कोट ।[12]

'विद्यादाता'—बालमीक गुरु 'विद्यादाता' ।[13]

'समरवाज'—'समरवाज' सूजै कही, देषे हलवर हथ ।[14]

'नरूवारे'—नरपत 'नरूवारे' ठाठ ।[15]

'हिंदवानी'—'हिंदवानी' हद रपना, तुरकानी सिरताज ।[16]

'वारे', 'वति', 'ई', 'बाज़', 'वानी' आदि प्रत्ययो से बने विशेषण पद जातिवाचक अथवा व्यक्तिवाचक सज्ञा पदो पर आधारित हैं। अन्य पद के योग से भी संज्ञा पद विशेषण का कार्य करते है : इन पदो के बीच सबंधकारक महत्त्वपूर्ण कार्य करता प्रतीत होता है ।

---

१. छं० सं० ३५० । २ छं० सं० ४० । ३. छं० सं० १२६ । ४ छं० सं० ६७ ।
५. छं० सं० ५ । ६. छं० सं० ७० । ७ छं० स० ३४३ । ८ छं० स० ६७ ।
९. छं० स० ८ । १०. छं०सं० २४६ । ११ छं०स० ३१८ । १२ छं० स० ६ ।
१३. छं० सं० १२। १४. छं० सं० ८१ । १५. छं० स० २७८ । १६ छं० सं० १४४ ।

'राम'+'दल' ↷	पीछे मिलिये 'राम' दल ।[१]
'कुल'+'मडण'+'कलियान' ↷	'कुल मडण' कलियान ।[२]
'आमेरि'+'धणी'+'माधव' / 'रघुवस'+'पति'+'माधव' ↷	'आमेरधणी' 'रघुवंसपति', भुज पूजत माधव नृपति ।[३]
'किलो'+'वध'+ठामै ↷	वतै देषियो तो 'किलो वध' ठामै ।[४]
'मगल'+'दल' ↷	'मगल' दल आवन कियो ।[५]
'सूजा'+'सूत'+'जौहार' ↷	'सूजासुत' जौहार जग, गाढे जोर जरूर ।[६]
'गग'+'न्हान' ↷	सजि राजसिंह किय 'गग' न्हान ।[७]
'पछिम'+'दिसि' ↷	चढि 'पछिम' दिसि धाय ।[८]
'आदि'+'थान' ↷	'आदि' थांन आमैरगढ विकट ठाम घर वर दिये ।[९]
'नजीम'+'फौजै' ↷	सुनि 'नजीम' फौजै चढ आई ।[१०]

यहाँ सज्ञा पद अपने स्वतत्र रूप मे ही प्रयुक्त हुए हैं—किन्ही प्रत्यय आदि का योग नही है ।

स्थानवाचक —'ऊँचे'—जल पाई 'ऊँचे' किला, तोवै इद्र अवाज ।[११]

'दाहिनी' वंधु जानि आसन दिये, लिये 'दाहिनी' ठांम ।[१२]

भुजा 'दाहिनी' भूप की, वैसत पातल राव ।[१३]

आकारवाचक—'गोल'—वहै 'गोल' गोला तुपकै सु अछी ।[१४]

'चोकोर'—भले भलेस 'चोकोर' चालि ।[१५]

'वके' 'वके' किला विकट सुटांम ।[१६]

रंगवाचक —'कारी'—मनो वास रग की भई भूमि 'कारी' ।[१७]

'पचरग' फहरै निसान 'पचरग' रग ।[१८]

लै फौजे 'पचरग' सगि लडि लेह राव घर ।[१९]

दशावाचक —'ताजो'—'ताजी' वाजी वरत तेज तुरकी ज षदारिय ।[२०]

'तेज' - 'तेज' तुरकी ज षदारिय ।[२०]

---

१ छं० स० १७ । २ छं० स० २५ । ३ छं० स० ३३ । ४. छं० सं० ३७ । ५ छं० सं० ३७६ । ६. छं० स० ८६ । ७ छं० स० ११० । ८ छं० स० १२४ । ९. छं०स० ३६४ । १०. छं०सं० ८४ । ११. छं०सं० ३५३ । १२ छं०सं० १०० । १३ छं०स० ४५ । १४. छं०स० ८५ । १५ छं०सं० २८३ । १६. छं० सं० २१० । १७. छं० सं० ३८२ । १८ छं० स० ६४ । १९ छं० स० ३७५ । २०. छं० स० १५५ ।

गुणवाचक - 'अछी'—वहै गोल गोला तुपकै स 'अछी' ।[1]

'नेक'—बोले दलेल करि काम 'नेक' ।[2]

'नीको'—दयो पातलराव सो वैन 'नीको' ।[3]

'वडी'—पड़ावी 'वडी' बोविया यो विलषै ।[4]

'षास'—तिन लिषिये षत 'षास' कोकि ये नजब तास वर ।[5]

'प्रवल'—इत चलिये पातिल 'प्रवल' ।[6]

'भोले'—कहे वचन मत्री तुम 'भोले' ।[7]

गुणवाचक विशेषणो की संख्या काफी वडी है। यथा—

'अछिय'[8], 'कायर'[9], 'कची'[10], 'गाढे'[11], 'चक्रवै'[12], 'चौडे'[13], 'जवर'[14], 'ज्याढो'[15], 'जड़'[16], 'ठठ'[17], 'दलेल'[18], 'ध्रु',[19] 'परवीन'[20], 'भलेस'[21] 'सोहता'[22], 'पूर'[23], 'लघु'[24], 'भरपूर'[25], 'अगम'[26], 'अपार'[27], 'महा'[28], 'लार'[29], 'सारे'[30], 'वीरट'[31], 'सुघर'[32], 'बहादर'[33], 'बली'[34], 'राजसी'[35], 'वड'[36], 'सलौन'[37], 'सबल'[38], 'सकला'[39], 'समरथ'[40], 'सारीष'[41], 'सुभ'[42], 'परम'[43], 'विमल'[44], 'निपुन'[45],'वर'[46], 'लायक'[47], 'कम'[48], 'जटत'[49], 'सुध'[50], 'छबीले'[51], 'छरे'[52], ...

वहुत-से विशेषण [सु] के योग से वने हैं—

[सु]+………प्रायः सज्ञा पद—'सुभर'[53], 'सुबंध'[54], 'सुठाम'[55], 'सुभाय'[56], 'सुगढ'[57], 'सुरग'[58]।

---

१ छं० सं० ८५। २. छ० सं० १२१। ३ छं० सं० १४०। ४. छ० सं० २६१। ५. छं० सं० ३२५। ६. छ० स० ९९। ७ छ० सं० ३३८। ८. छ० स० १२३। ९. छं० सं० १३१। १०. छ० स० ३०६। ११. छं० स० ८९। १२. छं० सं० ४५७। १३. छ० सं० २३९। १४ छ० स० १६०। १५ छ० सं० १८०। १६. छं० स० २१२। १७. छ० स० ३२१। १८. छ० स० १०३। १९. छं० स० ४६१। २०. छ० स० ४६७। २१ छं० स० २८३। २२. छ० स० ४६५। २३. छ० स० ४६६। २४ छ० सं० ४६६। २५. छ० स० ४६६। २६. छं० सं० २। २७. छ० सं० २। २८. छ० सं० ९। २९ छ० स० ५१। ३०. छ० सं० ५१। ३१. छ० सं० १२८। ३२ छं० स० १४२। ३३ छ० सं० २०३। ३४. छ० सं० ८५। ३५. छ० सं० १३८। ३६ छं० सं० १५५। ३७. छ० सं० १२१। ३८. छ० स० २६। ३९ छं० स० २७। ४० छं० स० १६३। ४१ छ० स० २०१। ४२. छ० स० १। ४३ छ० स० २। ४४ छ० स० २। ४५. छं० सं० ९३। ४६. छ० स० १२८। ४७ छ० स० २५१। ४८ छं० स० ४६६। ४९. छ० सं० ४३१। ५०. छ० स० १५९। ५१. छं० सं० २८४। ५२. छ० स० २८४। ५३ छं० स० १२७। ५४ छ० स० १०३। ५५ छं०सं० ११०। ५६. छं०सं० ११४। ५७. छं० सं० ७८। ५८. छं० सं० ६४।

सख्यावाचक विशेषण

पूर्ण सख्यावाचक—'अक', 'यक', 'येक'—'अक' हुकम साहि को कीजिये ।[१]
बार 'यक' हमै मिलेयत ।[२]
समय 'येक' व्रजराज साज सब सेन सुभर भर ।[३]
'दो'—मुकाम 'दो' मझ कीन ।[४]
'तीन'—कोस 'तीन' दल नजब के कहित ककरा नाम ।[५]
'च्यार'—दोय परा दिस 'च्यार' रौ जानै ।[६]
'पच'—ते तास पुत्रस 'पच' ।[७]
'पचीस'—आय भूप दल दीघ सू, रह घटि कोंस 'पचीस' ।[८]
'वतीस'—अठारैसै 'वतीस' साष सवत परवानन ।[९]
'पैंतीस'—अठारैसै 'पैंतीस' मांहि नजब से दायक ।[१०]
'छत्रीस'—मत्री ते हरसाहि दलो 'छत्रीस' तास वर ।[११]
'सैंतीस'—अठारैसै 'सैंतीस' साष सवत् सो ह्वैयत ।[१२]
'साठ'—संग सहस 'साठ' दल लीन तूल ।[१३]
'असी'—'असी' सहस नर बाज सजि ।[१४]
'सहस'—सजि 'सहस' वीस नर बाजि जोर ।[१५]
'लष'—पारसि सो परवार लार त्रिय 'लष' सेन लिय ।[१६]
'पदम'—दस आठ 'पदम' पति सेन लार ।[१७]

आदि-आदि..........। इस प्रकार के योग भी आते हैं—

१८='दस'+'आठ'—'दस आठ' पदम पति सेन लार ।[१८]

३६='षट'+'तीस'—समे 'षटतीस' तर्णस प्रमाण ।[१९]

सामान्यत. पूर्ण संख्यावाचक विशेषण आधुनिक हिंदी के अनुसार ही मिलते हैं। कही-कही लिखने मे कुछ अतर है—'च्यारि'[२०], 'दोइ'[२१], 'सपत'[२२] आदि।

---

१. छ० स० ३२५ । २ छं० स० २७६ । ३ छं० सं० ८२ । ४ छं० सं० ७० । ५. छ० स० २८८ । ६ छं० सं० ३६६ । ७ छं० स० २६ । ८ छं० स० १३४ । ९ छ० स० २१६ । १० छ० स० २७३ । ११ छ० सं० ३५ । १२ छ० सं० ४ । १३ छ० स० ३४० । १४. छं० सं० १२३ । १५. छ० सं० २८३ । १६. छ० स० ८८ । १७ छ० सं० ६ । १८ छ० सं० ६ । १९. छ० स० ३१५ । २०. छ० स० ३१४ । २१. छ० सं० ४१ । २२. छं० सं० ४५६ ।

कुछ तत्सम शब्दो का प्रयोग भी हुआ है—

'द्वादश'[1], 'पंच'[2], 'षट'।[3]

इसी प्रकार क्रमवाचक मे भी—

'प्रथम'[4], 'त्रतिय'[5], 'पचम'।[6]

अपूर्ण संख्यावाचक—

इस प्रकार के सख्यावाचक शब्द अधिक नही हैं। एक शब्द 'अरध' आता है, जो 'अरधगा' शब्द का अश है—

उर अनद वीकावत राणी। सपत जनम 'अरधंगा' जाणी।[7]

'अरध'+'अगा'

क्रमवाचक—

'प्रथम'—'प्रथम' पुत्र नरसिंह नृप आमैरि वपानिय।[8]

'परथम'—कर मुकाम 'परथम' दिवस, किये राज दरबार।[9]

'पहले'—'पहले' पिलै सो पताराव सथै।[10]

'प्रथमीस'—'प्रथमीस' जाय कीने मुकाम।[11]

'पहल'—'पहल' मुकाम किये लछमनगढ।[12]

'वियौ'—'वियौ' निरवाणस उदैल नाम।[13]

'वीयो'—प्रथम षोहरा ठाम 'वीयो' पलवास नाम चर।[14]

'विये'—प्रथम नगारे वाज सज, 'विये' सस्त्र कसि सूर।[15]

'वियो'—सारीष 'वियो' सरदार चाव।[16]

'वीजोस'—'वीजोस' कौन जारैस हाथ।[17]

'वीजे'—जाने हम 'वीजे' सो षोलै।[18]

'दूजो'—येक न 'दूजो' होयसी, यो माधव सुनी नरेस।[19]

'दूजैस'—'दूजैस' षोहरी कहत नाम।[20]

'दूजा'—वधु कहे ते वधु ही, और न 'दूजा' जानिये।[21]

'दूजै'—'दूजै' रामसेवग कहै, मंत्री मोजीराम।[22]

---

१. छ० स० १४। २. छ० स० २६। ३. छं० स० ३१५। ४. छ० स० ६३। ५. छ० सं० २६। ६ छ० स० ६२। ७. छं० सं० ४५६। ८. छं० स० २२। ६ छं० स० ५०। १०. छं० स० १३०। ११. छ० स० २८३। १२. छ० स० २८४। १३. छं० सं० ३१५। १४. छ०स० १८०। १५. छ० स० ६३। १६. छं० सं० १०३। १७ छं०स० १६८। १८. छ०स० ४१३। १६ छं०स० ४६। २०. छं०सं० ११०। २१. छ० स० २२०। २२. छं० सं० १७६।

'दुजै'—'दुजै' सग लै सिवसाहि ।[1]

'दुजा'—भूप पूजी भुजा । जानियो नै 'दुजा' ।[2]

'दूजेस'—'दूजेस' ईसरीसिंह पाट ।[3]

'त्रियो'—वालो 'त्रियो' सुनाम ठाम अमरसर अषिय ।[4]

'त्रतीयेस'—'त्रतीयेस' ईसरसिंह । पलवास घर पै धीग ।[5]

'तीजंस'—'तीजैस' स्याम के पाट सोय ।[6]

'तीजे'—'तीजे' दल नर नजब के, भनि वावोली ठांम ।[7]

'तीसरै'—वपतेस रावराजा वली तषत 'तीसरै' त्रपत नर ।[8]

'तीजै'—'तीजै' ज्याढो प्रछति पेषवाई सव चथै ।[9]

'चौथे'—चौथे' सुरीपट स्याम । पेषियै पाडै ठाम ।[10]

'चोथो'—सिव 'चोथो' सिवब्रह्म ठाम नीदरगढ दषिय ।[11]

'चथै'—तीजै ज्याढो प्रछति पेषवाई सव 'चथै' ।[12]

'पंचम'—'पचम' कहियै पाटपति, पातल कूच वजाय ।[13]

'पचमै'—'पचमै' येस काका सु आन ।[14]

'पाचमै'—'पाचमै' सोषरस जाण । पाई प्रतछ वषाणि ।[15]

'पचवे'—'पचवे' राज लिये राज पातिलपति सथै ।[16]

समुदायवाचक—

'दुहू'—दल 'दुहू' वोर वजैस सार ।[17]

'दुहु'—'दुहु' भुजा वल देषियत, मत्री वंधु समाज ।[18]

'दुहु'—विसषेत दल 'दुहु' ओर जंग ।[19]

'दोउ'—पडे सीस पै सीस दल 'दोउ' जाके ।[20]

'दोई'—कवर नाम मगलेस इद्रेस 'दोई' ।[21]

'दोइ'—मिले सार दल 'दोइ' अकारे ।[22]

'दोय'—दिसि 'दोय' दीठि होती सलाम ।[23]

'दोऊ'—जोण घर नर 'दोऊ' होये, घरनायक घर आव ।[24]

---

१ छ० स० २५३ । २ छ० सं० ८० । ३ छं० स० १८१ । ४ छं० सं० २२ । ५ छ० सं० २६ । ६ छ० सं० १८१ । ७ छं० स० ३३२ । ८ छं० स० ४६३ । ९. छ०स० १८० । १०. छं०सं० २६ । ११ छ०सं० २२ । १२ छ०सं० १८० । १३ छं०स० ६२ । १४ छं०स० १८१ । १५ छ०सं० २६ । १६. छं० सं० १८० । १७. छ० सं० २४६ । १८ छं०स० २७७ । १९ छं० स० ३४० । २० छ० स० ८५ । २१. छ०सं० १३० । २२ छं०सं० ४१ । २३ छं०सं० ६४ । २४. छ०सं० २१७ ।

'त्रहु'—'त्रहु' दलन दे षवर नजब चढिये सकुत चकि।[1]

'त्रहू'—ता सुन 'त्रहू' सुनत हि आये।[2]

'त्रहु'—तजि दिली चलिये 'त्रहु', दोल षुस्याल रु नंद।[3]

'चत्र'—'चत्र' ठाम के बधु कोकि लीनेस तास वर।[4]

'च्यार रौ'—दोय परा दिस 'च्यार रौ' जानै।[5]

'चहु'—तातकाल सुष सिर तिलक, सुन्यो होत 'चहु' फेर।[6]

'चहु'—चलि आवत भीर 'चहु' दिस की।[7]

'पचो'—लरे लोह 'पचो' कमानो सहथै।[8]

'आठौं'—मैं सिष हौ तुम चरन को, 'आठौं' जाम अधीन।[9]

'दसौं'—कीनो विहंड सो 'दसौं' सीस।[10]

'दसहौं'—भये तास पजवन सुत, 'दसहौं' दिसि भूपति बलन।[11]

अनिश्चित संख्यावाचक—

'लषन'—यहै पाट रघुनाथ को, पाट 'लषन' दल लार।[12]

'लापन'—दिली नवाब 'लाषन' लषत, गये मोरण निज ठाम।[13]

'कीतेक'—कीने 'कीतेक' मजिलै मुकाम।[14]

साथ ही 'कितो[15], 'केते'[16], किती'[17], किते'[18], 'किति'।[19]

परिमाणबोधक विशेषण—

'समुच—दीजिये फौज सगै 'समुच'।[20]

'सारी'—धाप गई फौजे धकि 'सारी'।[21]

'समूच'—कीनो मुकाम फौजै 'समूच'।[22]

'अति'—'अति' महिमा मनहारस कीनी।[23]

'सब'—वाईस भुजा 'सब' सेन साथ।[24]

'छड़ी'—'छडी' सैंन लै सहज सुधाये।[25]

---

१. छंं०सं० ३०५। २ छंं०स० १७८। ३ छंं०सं० ३४९। ४. छ०स० १८०। ५. छंं०स० ३६६। ६ छ० स० १४७। ७. छ० स० २१५। ८ छ० स० १८७। ९. छंं० स० ४६७। १०. छ०सं० ६। ११ छंं०स० १९। १२ छ० स० १०२। १३. छ० स० २९२। १४. छ० स० १५२। १५ छ० स० १०२। १६. छ० स० १०५। १७. छ० स० १२१। १८ छ० स० २५९। १९ छ० स० २७९। २०. छ० सं० १७६। २१ छंं० स० १९१। २२ छ० स० ३२७। २३ छ० स० ७६। २४. छंं० सं० ६४। २५. छ० स० ८४।

'घनी—'घनी' वाय वागात तरु ताल जागा ।[1]

'घरो'—अति सुन्दर मदिर मध्य 'घरो ।[2]

'घरा'—हद नोवति नद वजि, गजि डंका अमाट 'घरा' ।[3]

'वेहद'—भटन लिये 'वेहद' दलन, मोरधर पति की ठाम ।[4]

'भारी'—मास दोय कीनी रए 'भारी' ।[5]

'सारी'—धाप गई धकि फौजैं 'सारी' ।[6]

'वहो'—हके नवाव हिंदू धरा लेन काज भर 'वहो' वलन ।[7]

'भारीय'—बघु भेजिये ता गढ 'भारीय' ।[8]

'घने'—'घने बाज गजराज दिय, सगि मीरन सिरपाव ।[9]

'सालिम'—चत्र ठाम के वघु सव, 'सालिम' उतरे आय ।[10]

'सकला'—थरु थटिये 'सकला' कमठाए ।[11]

'सवै'—रानि 'सवै' उमराव सव, चढि आये करि चाव ।[12]

'सवा'—रावराज के गढ यते सो 'सवा' सिरै राजगढ ।[13]

परिमाणबोधक विशेषणो मे प्राय· 'सम्पूर्ण' अथवा 'अधिक' के पर्यायवाची हैं। 'सम्पूर्ण' ~'समुच', 'सारी', 'समूच','सव', 'सारी','सालिम', 'सवै', 'सवा' ।
'अधिक' ~'अति', 'घनी', 'घणी', 'घरो', 'घरा', 'भारी', 'भारीय',
'घने', 'वहो', 'वेहद', 'वहोत' ।

कुछ टिप्पणियाँ—

(१) विशेष्य के उपरान्त विशेषण का प्रयोग—

(i) हुकमै [हमारो] यही भांति दीज्यो ।[14]

(ii) सीसोद हाड़ा [सोइ] उमर षीची जोय ।[15]

(iii) नरपत [नरूवारे] ठाठ ।[16]

(iv) फहरै निसान [पचरंग] रग ।[17]

(v) तिन लिषिये षत [षास] ।[18]

(vi) कहे वचन मत्री तुम [भोले] ।[19]

१. छं० सं० १४०। २. छं० सं० २१५। ३. छं० स० ३५८। ४. छ० सं० १०८। ५. छ० सं० १९१। ६. छ० स० १९१। ७. छं० सं० २३५। ८ छ० स० २५०। ९ छं० सं० २९७। १० छं०सं० ६२। ११ छं०स० २७। १२ छ० स० १५७। १३. छ० सं० २१२। १४ छं० सं० १३८। १५. छं स० १२६। १६ छ० सं० २७८। १७. छ० स० ६४। १८. छ० सं० ३२५। १९ छ० सं०

(२) विशेषणो की अनेक रूपता। यह प्रवृत्ति सख्यावाचक विशेषणो मे और भी अधिक है—

'एक' ∽ 'अक'[1], 'यक'[2], 'येक'[3], 'एक'[4]

/ए/ ∽ [अ], [य], [ये], [ए]

'दूसरा' ∽ 'वियौ'[5], 'वीयो'[6], 'विये'[7], 'वियो'[8], 'वीजो'[9], 'वीजोस'[10], 'दूजो'[11], 'दूजैस'[12], 'दूजा'[13], 'दूजै'[14], 'दुजै'[15], 'दुजा'[16], 'दुजैस'[17]

'चार' ∽ 'च्यार'[18], 'च्यारिस'[19], 'च्यारि'[20], 'चार'[21], 'चत्र'[22]

'घने' ∽ 'घरण'[23], 'घरणे'[24], 'घरणौ'[25], 'घने'[26], 'घन'[27], 'घरण'[28]

(३) विशेषणो की डिगरियाँ (अवस्थाएँ) नही मिलती। केवल एक उदाहरण मिलता है। 'वुधितम'[29]।

(४) विशेषणो के ओकारान्त रूप मिलते है। उदाहरण यथास्थान दिए गए है। कही-कही औकारान्त भी—

'वियौ'[30]

(५) कुछ विशेषणो के बहुवचन भी है—

'सव' ∽ 'सवा'[31]

'लष' ∽ 'लषन'[32], 'लाषन'[33]

'चोकोर' ∽ 'चोकोरन'[34]

(६) सज्ञा शब्दो का प्रयोग भी विशेषणवत् हुआ है। ये पद कभी दो प्रकार के पदो से बनते है, कभी कुछ प्रत्ययो के द्वारा और कभी सम्बन्ध कारक के आधार पर।

---

१ छं० सं० ३२५। २. छ० स० २७६। ३ छं० सं० १२१। ४ छ० सं० १३१। ५. छ० सं० ३१५। ६. छ० स० १८०। ७. छ० स० ६३। ८. छ० स० १०३। ९ छं० सं० १९८। १० छ०स० ४१३। ११ छ०स० ४६। १२ छं०स० '१०। १३ छ० स० २२०। १४ छं० स० १७९। १५. छ० स० २५३। १६ छ०स० ८०। १७. छं० स० १८१। १८. छं० सं० ३९६। १९ छं० स० ४३४। २० छ० स० ३१४। २१ छ० सं० १८५। २२ छ० स० २१। २३ छ० स० ३५८। २४ छ० स० ३३५। २५. छ० स० २७। २६. छं० सं० २९७। २७. छ० स० ३१४। २८ छ० स० ३५८। २९. छं० स० २। ३०. छ० सं० ३१५। ३१. छ० स० २१२। ३२ छ० स० १०२। ३३ छं० स० २९२। ३४ छं० स० १४२।

(७) कही-कही विशेषण पदो को संज्ञा के रूप मे भी प्रयुक्त किया गया है—

'लघु' 'दीरघ' नही लहे, चले सो कहो निगम गम ।[1]

कर कर 'कायर' रोम सुकपि ।[2]

कै होत एक 'चौड़े' चपेट ।[3]

(८) राजस्थानी प्रभाव भी लक्षित होता है—

'घरण'[4], [घरणे][5], [घरणै][6], 'ज्याढो'[7], 'षदारी'[8], 'च्यार रौ'[9], 'घरणी'[10], 'वियौ'[11], 'वहादर'[12]—ख०बो० 'घने', '×', 'कंदहारी', 'चारो', 'धनी', 'दूसरा', 'बहादुर'।

(९) विशेषण पद संज्ञा पद के लिंग से भी यदाकदा प्रभावित होता है—

'किते' कोट अटके कटक ।[13] पुल्लिग

'किती' सेन दीठी निकट है ।[14] स्त्रीलिंग

(१०) 'हजार' के लिए सर्वत्र 'सहस' शब्द का प्रयोग हुआ है। 'असी सहस'[15], 'चालीस सहस'[16], 'सहसि साठ'[17], 'सहस साठ'[18], 'सहस बीस'[19]

'सहस' ～ [सहस], [सहसि]

(११) गुजराती सान्निध्य—

'दूजो' ～ 'वियो'[20], 'विये'[21]

(१२) /स/ का योग—

'दूजे+/स/'[22], 'त्रतीये+/स/'[23], 'प्रथमी+/स/'[24], 'तीजै+/स/'[25], 'भारी+/स/'[26]

क्रिया

'प्रताप-रासो' के क्रिया-पद अपनी विशेषताएँ रखते हैं। इनमे से कुछ विशेषताएँ इस प्रकार हैं—

१. प्राचीन, मध्यकालीन और अर्वाचीन भारतीय आर्य भाषाओ के देखने पर पता लगता है कि आधुनिक खड़ी वोली हिन्दी के क्रिया-पद वियोगात्मक हैं—

---

१ छं० स० ४६६। २. छं० स० १३१। ३. छं० स० २३९। ४ छं०स० ३५८। ५. छं० स० ३३५। ६ छं० स० २७। ७. छं० स० १८०। ८. छं० सं० १८७। ९. छं०सं० ३९६। १०. छं०स० ३३। ११. छं०सं० ३१५। १२ छं०स० २०३। १३. छं० सं० ७९। १४. छं० सं० ३१४। १५ छं० स० १२३। १६ छं० सं० १७६। १७. छं० सं० ३४०। १८ छं० स० ३४०। १९. छं० सं० २८३। २०. छं० स० ३१५। २१. छं० स० ६३। २२. छं० स० १८१। २३. छं० सं० २९। २४. छं० सं० २८३। २५. छं० स० १८१। २६. छं० सं० १३८।

मूल क्रियाओ के अतिरिक्त सहायक क्रियाएँ अपना स्वतन्त्र अस्तित्व रखती है। 'है', 'था', 'गा' के अनेक रूप प्राप्त होते हैं। यथा—

'है' ⌐ [है] ए० व०, [हैं] ब० व०, [हो] म० पु०, [हूँ] उत्तम पुरुष, [हो] स०

'था' ⌐ [था] ए० व०, [थे] ब० व०, [थी] स्त्री० लि०, [थी] स्त्री० ब० व०

'गा' ⌐ गा] ए० व०, [गे] ब० व०, [गी] स्त्री० लि०

कही-कही 'है' तथा 'गा' का योग भी मिलता है।

'होगा/गी' = 'हो' + 'गा'/'हो' + 'गी'

'होगे/गी' = 'हो' + 'गे'/'हो' + 'गी'

(कभी-कभी अहिन्दी भाषी 'होगा' भी बना लेते हैं)

प्रताप-रासो मे वियुक्तावस्था अपेक्षाकृत कम है और क्रियाओ के सयुक्त रूप अधिक देखने को मिलते हैं।

२ सर्वनाम, कारक और क्रिया-के रूपो से किसी बोली या भाषा-विशेष का निर्णय करने मे बहुत सहायता मिलती है। इस पुस्तक मे प्रयुक्त क्रिया-रूपों को देखने से यह स्पष्ट सिद्ध होता है कि पुस्तक की भाषा 'व्रजभाषा' है। ऐसा प्रतीत होता है कि क्रिया-पदो पर राजस्थानी प्रभाव अधिक नही पडा है। व्रजभाषा का प्रभाव देखिए—

वर्तमान—'करो'[1], 'लहो'[2], 'सोधो'[3], 'छानो'[4]

भूत—'लीनौ'[5], 'कीनौ'[6], 'हन्यो'[7], 'दीनो'[8]

भविष्य—'पकरैगो'[9], 'पायगो'[10], 'जायगो'[11]

राजस्थानी—'होयसी'[12], 'रहसी'[13]

खड़ी बोली—'रषै'[14], 'दीजिये'[15], 'चढ आई'[16]

३. क्रियाओ की वियुक्तावस्था भविष्य काल के रूपो में अधिक दिखाई देती है—

√'पकड़ना' ⌐ भवि० '/पकरै/ + /गो/' ⌐ 'पकरैगो'[17]

√'जाना' ⌐ भवि० '/जै/ + /हौ/ ⌐ 'जैहो'[18]

---

१. छं० स० २। २. छं० सं० २। ३ छं० स० १५। ४ छं० स० ५२। ५. छं० स० ३५। ६ छ० स० ३५। ७ छं० स० ७। ८ छ० स० ७८। ९. छं०स० १५। १० छं०सं० ११२। ११. छं० सं० ११२। १२ छ०स० ४६। १३ छं०स० ४६१। १४ छ०सं० २६१। १५ छं०स० १७६। १६. छ०स० ८४। १७. छं० सं० १५। १८. छ० सं० ११०।

√'पाना' ∽ भवि० '/पाय/+/गो/' ∽ 'पायगो'[१]

√'जाना' ∽ भवि० '/जाय/+/गो/' ∽ 'जायगो'[२]

राजस्थानी भी—जैसा 'होयसी'[३] < 'होना+/सी/', 'रहसी'[४] < 'रहना+/सी/' से विदित होता है।

४. कुछ ऐसे क्रिया-पद भी हैं, जो खड़ी बोली मे नही मिलते, पर जो व्रजभाषी प्रान्त मे आज भी पाये जाते हैं। जैसे—

√'वतराना' ∽ 'वतलाना' = 'वाते करना' < सज्ञा+क्रिया

√'वतराना' ∽ भूतकाल—'वतराये'[५]

√'व्रतलाना' ∽ भूतकाल—'वतलाये'[६]

/र/ और /ल/ का पारस्परिक परिवर्तन व्रजभाषा मे एक विशेषता है ही। इसी प्रकार—

'थक√जाना' ∽ 'थाकियो'[७] भूतकाल

'धारण√करना' ∽ 'धारियो'[८] भूतकाल

५. इस पुस्तक मे क्रियाओ से व्याकरणात्मक रूपो की अधिकता तो नही मिलती, पद्धति भी कुछ सरल मालूम होती है, परन्तु समानार्थी पदो के विविध रूप प्राप्त होते हैं, जिनसे इस वात का पता सहज ही लगता है कि भाषा मे रूपो का स्थिरीकरण नही हो पाया है। उदाहरण—

खड़ी बोली 'दिया' व्र० भा० 'दोन'[९], 'दीनो'[१०], 'दिय'[११], 'दीनो'[१२]

,, 'किया' ,, 'कीन'[१३], 'कीनो'[१४], 'कीनौ'[१५], 'कियो'[१६] 'कीयो'[१७], 'कीनो'[१८], 'क्रिय'[१९]

दूसरा एक कारण छद-निर्माण की आवश्यकता भी हो सकती है।

६ क्रिया-पदो मे लिंग और वचन के अनुसार भेद पाया जाता है।

	एकवचन	वहुवचन
स्त्री०	'चढ़ी'[२०]	'चढी'[२१]

---

१. छं० सं० ११२। २. छ० सं० ११२। ३. छ० स० ४६। ४ छ० सं० ४६१। ५. छं० सं० १०७। ६. छ० सं० १७३। ७ छं० सं० १३१। ८. छं० स० १०५। ९. छं० सं० ३। १०. छं०सं० ७८। ११. छं०सं० २३६। १२. छं० सं० १४९। १३. छ० सं० १६। १४. छं०सं० ४९। १५. छं० सं० ११२। १६. छ० सं० १४१। १७. छ० स० १८३। १८. छं० सं० ७। १९ छं० सं० १४५। २०. छ०सं० १८७। २१ छ० सं० १८७।

प्रु० 'चढ्यो'[1] ∽ 'चढ़िया'[2], 'चढ़े'[3] ∽ 'चाढे'[4], ∽ 'चढियेस'[5] ∽ 'चढिये'[6]

७ खडी बोली का आदरसूचक वर्तमान क्रिया-रूप अनेक स्थानो पर प्राप्त होता है—

'दीजिये'[7]—देश त्याग अब 'दीजिये'।

'कीजिये'[8]—अनमानत जुध 'कीजिये'।

'लीजिये'[9]—जो नरेस सुन 'लीजिये'।

इन रूपो मे/ये/का ही प्रयोग हुआ है। आधुनिक खडी बोली हिंदी का /ए/तथा/ये/का झगडा यहाँ दिखाई नही देता।

साथ ही सामान्य रूप भी मिलते हैं—(वर्तमान, मध्यम पुरुष)

'छोडो'[10]—'छोड़ो' सावकरण सजि सोई।

'करो'[11]—'करो' स्याम के काम।

'कहो'[12]—'कहो' स काज लायक।

'रहो'[13]—'रहो' सु जानि के घरा।

८. पूर्वकालिक क्रिया-पदों मे राजस्थानी प्रयोग—

'आ'रि' ∽ (आधुनिक 'आकर')

'ले'र' ∽ (आधुनिक 'लेकर')

'हो'र' ∽ (आधुनिक 'होकर')

'आरि'—उवरेस जोय मिलियेस 'आरि'।[14]

टरिहैस आप जो मिलै 'आरि'।[15]

'लेर'—उलटिवाट कीनो चलन, लारे मंत्री 'लेर'।[16]

'होर'—जुटियेस जोध अति क्रोध 'होर'।[17]

९ क्रिया-पदो के साथ भी/स/का योग। जैसा पहले कहा जा चुका है, पद-पूर्ति या अन्य किन्ही कारणों से/स/का योग अन्य पदो के साथ भी हुआ है। यहाँ क्रिया-पदो के साथ देखिए—

---

१ छं० सं० १३१। २. छ० सं० १८१। ३ छ० स० १२६। ४ छ० स० १२४। ५ छ० सं० १७१। ६ छ० स० ९८। ७. छ० सं० ४८। ८ छं० स० १०५। ९. छं० स० १०५। १० छ० सं० १५। ११ छ० सं० ५२। १२ छं० स० ७४। १३ छ० स० ७४। १४ छं० स० २०८। १५ छं० स० १७६। १६ छ० सं० २७२। १७ छ० स० २७४।

वर्तमान काल—'तकिहै+/स/'[1], 'सरिहै+/स/'[2], 'सुनिहो+/स/'[3]

भूतकाल—'वकसे+/स/'[4], 'थपे+/स/'[5],
'जुडये+/स/'[6], 'पूछी+/स/'[7]

भविष्य काल—'लैहो+/स/'[8], 'करिहौ+/स/'[9],
'लरिहै+/स/'[10], 'टरिहै+/स/'[11]

क्रिया-पदो के साथ इस योग मे कई बाते मिलती है—

१—वर्तमानकाल सूचक क्रिया-पदो के साथ/स/का योग कम हुआ है।

२—भूतकाल मे ईकारान्त तथा येकारान्त पदो के साथ योग दिखाई देता है।

३—भविष्यकाल मे 'है' अथवा 'हौं' मे अत होने वाली क्रियाओ के साथ /स/ का योग मिलता है।

१०. कुछ अनुकरणात्मक और पुनरुक्त धातुएँ भी उपलब्ध होती है—

अनुकरणात्मक	'सर सर'[12], 'मर मर'[13], 'ढर ढर'[14],
तथा द्विरुक्त	'घर घर'[15], 'फर फर'[16]—आदि

११. स्थानीय क्रिया-पद—

'चिगे'—हटे

'चिगे' रावराजा कटक।[17]

'फुरमाये'—आधुनिक 'फरमाइए', 'फरमाया'

'फुरमाये' पातिल वचन, सुनौं धीर यक बात।[18]

'उसरे'—निकले

वत 'उसरे' दल नजब के, यत पातिल दल भीर।[19]

'वासाये'—वैठाए

'वासाये' साम्ही सुरति, राजकवर की रीति।[20]

१२ कुछ नव-प्रयोग—

'श्रवण लीन'[21]—सुना—नृप माधवेस यो 'श्रवण लीन।'

---

१. छ० स० १२१। २ छ० स० १२१। ३. छं० स० १२१। ४ छं० स० ६। ५. छ० सं० ६। ६. छ० स० ३५। ७. छं० स० १०। ८. छं० स० ११०। ९. छं० सं० १२१। १०. छं० सं० १७६। ११. छ० सं० १७६। १२,१३,१४, १५,१६. छ० स० १३१। १७ छं० स० ३६९। १८. छ०स० ६७। १९ छ०सं० २४७। २० छ० सं० ३६०। २१ छ०-स० १०३।

'कुच वजाये'[1]—कूँच किया—बहुर भूप दल 'कुच बजाये'
'कीने चलन'[2]—चले—धर पछ्छिम 'कीने चलन'।
'कोक लीये'[3]—बुलाया—'लीये कोक' नृप आप।
'कहियो सुनाय'[4]—कहा (जोर से)—'कहियो सुनाय' सब सथ सो।
'कीजै चलण समाज'[5]—चलो—धरणि राजगढ राव पै,
'कीजै चलण समाज'।
'सरी तुम्हारी रारि'[6]—तुम जीते—'सरी तुम्हारी रारि',
आरि मिलियेस वेग अति।

वर्तमानकाल—

प्रताप-रासो मे वर्त्तमान काल के रूपो मे पुरुष, वचन और लिंग के अनुसार भेद होता है। तीनो पुरुष - उत्तम, मध्यम तथा अन्य, दोनो वचन—एकवचन तथा बहुवचन, दोनो लिंग– स्त्रीलिंग और पुल्लिग देखे जाते हैं। कही-कही यह अंतर लक्षित नही होता, इसका कारण क्रिया-पदो का संयुक्त होना है। वर्तमान काल के क्रिया-पद, प्राय, सयोगावस्था मे मिलते हैं।

√'करना' क्रिया के रूप -

पुरुष	एकवचन	बहुवचन
उत्तम पुरुष	'करो'[7], 'करूँ'[8], 'करु'[9], 'करौ'[10]	करै[11], 'कीजेस'[12], 'कीजिये'[13], कीजै[14] (१२, १३, १४ कर्मवाच्य रूप हैं)
मध्यम पुरुष	'कर'[15], 'कीजो'[16], 'कीज्यो'[17]	'करौ'[18], 'करो'[19], 'करिये'[20], 'कीजिय'[21], 'कीजिये'[22], 'कीजै'[23], 'कीजे'[24], 'कीजत'[25], 'करिय'[26], 'करियेस'[27], 'कीजैस'[28], 'कीजेस'[29]
अन्य पुरुष	'करै'[30], 'करत'[31]	'करै'[32]

१ छ० स० ३९२। २. छ० स० ३९८। ३. ३७९। ४. छ० सं० १८५। ५. छं० स० ३६५। ६. छं० स० १९३। ७ छं० स० २। ८ छ० स० ४। ९. छ० स० २९९। १०. छं० स० २१८। ११ छ० सं० ३१२। १२ छ० स० ३६६। १३. छ० सं० २६३। १४ छ० सं० ३२०। १५ छ० सं० ११३। १६ छ० स० ९१। १७ छं० सं० १३८। १८ छं० सं० ११७। १९. छं० सं० ३४०। २० छं०स० ३१०। २१ छ० सं० १०५। २२. छं० सं० ३१२। २३ छं० स० ३४३। २४ छं० स० ३४४। २५. छं० स० २९८। २६. छं० स० ३४३। २७. छ० स० ४२६। २८. छं० स० ३८९। २९. छ० सं० ३८९। ३० छ० सं० ३०३। ३१. छं० सं० ४०४। ३२ छ० सं० २१५।

प्रयोग—

उत्तम १. 'करो'—कर जोर जुगल विनती 'करो', त्यों निवार आज्ञा लहो।[1]

२. 'करूँ'—जुगम जोय वरनन 'करूँ', जो कूरमकुल ठाम है।[2]

३. 'करु'—या दल 'करु' दीवान तुम।[3]

४ करौ'—'करौ' स्याम के काम नांय होय भूप ब्रजनर।[4]

५. 'करैं'—वधु वोले वरैं। कीजिये सो 'करैं'।[5]

६. 'कीजेस' 'कीजिये' 'कीजै—'करैं' (हमारे द्वारा किया जाय)—
दीजे विचार 'कीजेस' सोय।[6] जो तुम करो सो 'कीजिये'।[7]
कह्यौ तुम्हारी सोई 'कीजै'।[8]

मध्यम ७. 'कर'—यहाँ नृप दे दोय प्रगना, कै 'कर' जुध कवार।[9]

८. 'कीज्यो' - जिसी ठाम जो राजसी जान 'कीज्यो'।[10]

९ 'करौ'—'करौ' जुध जो राषन जी को।[11]

१० 'करो'—जुडि 'करो' जाय चौड़ेस जुध।[12]

११ 'करिये'—'करिये' जो जानै षुसी, हसत सत्रु यह सुनत सब।[13]

१२. 'कीजिय'— क्रोध कापै यह 'कीजिय'।[14]

१३. 'कीजिये'—भेज सदासिव भट कूं अनमानत जुध 'कीजिय'।[15]

१४. 'कीजै'—जलद चलन दिली दिस 'कीजै'।[16]

१५. 'कीजे' - पातिल सो 'कीजे' मिलन।[17]

१६. 'कीजत'—लहै नैन मुष वैन बचन सोही तुम 'कीजत'।[18]

१७. 'करिय'—'करिय' कूँच नजब नर ह्यांतै।[19]

१८. 'करीये'—'करीये' सव आप षुसी मरजी।[20]

१९. 'करियेस'—'करियेस' कुच चलियेस सग।[21]

२० 'कीजैस'—धारीस आप 'कीजैस' चाव।[22]

२१. 'कीजेस'—'कीजेस' आप आवै सदाय।[23]

यहाँ ख़ड़ी वोली के अनुसार केवल दो रूपो के इतने अधिक रूप हैं।

---

१ छं० सं० २। २ छं० स० ४। ३ छ० सं० २९९। ४ छ० सं० २१८। ५ छ० म० ३१२। ६ छ० स० ३६६। ७ छं० सं० २६३। ८ छं०सं० ३२०। ९. छं०स० ११३। १०. छ०सं० १३८। ११ छं०स०११७। १२ छं०सं० ३४०। १३ छं० स० ३१०। १४ छ० सं० १०५। १५. छ० स० १०५। १६ छं० स० ३४३। १७ छ० सं० ३४४। १८. छं० स० २९८। १९ छ स० ३४३। २० छं०स० ४०४। २१ छं-सं० ४२६। २२. छं०सं० ३८९। २३ छ०स० ३८९।

'करो' ∽[करौ], [करो]

'कीजिये' ∽[करिये], [कोजिय], [कीजिये], [कीजै],
[कीजे], [कीजत], [करिय], [करोये]

/स/ युक्त रूप ∽[करिये+/स/], [कीजै+/स/],
[कीजे+/स/]

अन्य—

२२. 'करै'—स्याम नाम के काम पर दगल दल मगल 'करै'।[1]

२३. 'करत'—कर जोडि 'करत' यसी अरजी।[2]

२४. 'करै'—यहो ऊगत प्रात कितेक नरै।
सिर नाय सवाय सलाम 'करै'।[3]
घरण पछिम कोट कलोल 'करै'।[4]

वर्तमानकाल सूचक क्रिया-पदो की कुछ विशेषताएँ—

१. आधुनिक खडी-बोली गद्य के 'हूँ' सहायक क्रिया के समान अत मे सानुनासिकता—

'उं'—'लगु'[5]

'ऊँ'—'करू'[6], 'कहूँ'[7]

'ओ'—'लहो'[8], 'करों'[9], 'ल्यो'[10]

'औं'—'हौं'[11], 'कहौं'[12], 'बरनहौं'[13]

२. 'अत' प्रत्यय सहित—

'कहियत'[14]—को पुत्री को तात कौन तेरे पति 'कहियत'।

वतैयत'[15]—वचन बोल मुष जोय होय सो मोहि 'बतैयत'।

'सुलभावत'[16]—लै बधु आदि आमैरि कौ 'सुलभावत' आमैरपति।

'त्यागत'[17]—नर नर नैक न 'त्यागत' टेक।

'कीजत'[18]—लहै नैन मुष वैन वचन सोही तुम 'कीजत'।

३. 'अत' प्रत्यात भी—

'उबरंत'[19]—'उबरत' जोय दल मिलै आरि।

---

१. छं०सं० २७३। २ छं० सं० ४०४। ३ छं० सं० २१५। ४ छं० सं० २१५। ५. छं० स० ११। ६ छं० स० ४। ७ छं० सं० १६३। ८. छं० सं० २। ९. छं० स० २। १०. छं० सं० २। ११ छं० स० २। १२ छं० सं० २। १३ छं० सं० १६। १४ छं०सं० १०। १५ छं०स० १०। १६. छं०स० ३८०। १७ छं० स० १३१। १८ छं० स० २९८। १९ छं० स० ४१४।

'भोगत'[1] 'भोगत' माल छत्री मरद।
'माणन'[2]—'माणत' छाक छत्रीस जोड़।
'मुरडत'[3]—'मुरडत' जोर लीजे समारि।

४ 'ओकारान्त' पद—
'कोप्यो'[4]—'कोप्यो' है माधव नृपति, अन जल जहाँ लै जात।
'कहो'[5]—'कहो' कवि ग्रथ उचारिय।
रहो'[6]—'रहो' सु जानि कै धरा।
'करो'[7]—भिन-भिन वरनन 'करो'।
'भेजो'[8]—'भेजो' और सतोल।

इसी प्रकार 'वोधो'[9], 'सोधो'[10], 'छोड़ो'[11], 'वरनो'[12], 'वजावो'[13], 'मिलावो'[14] आदि।

साथ ही 'औकारान्त' भी—
'जानौ'[15]—करण षोहरै प्रगट गढ दुलैसिंह 'जानौ'।
'सुणौ'[16]—आप यक 'सुणौ' हमारिय।
''ल्यौ'[17]—'ल्यौ' पटैल जीवत पकड़।

५. आदरसूचक आज्ञार्थ के खड़ी वोली रूप
'दीजिये'[18]—देस त्याग अव 'दीजिये', और न कछू विचार।
'लीजिये'[19]—अरज येक मेरीस यह जो नरेस सुन 'लीजिये'।
'कीजिये'[20]—भेज सदासिव भट कूं अनमानत जुघ 'कीजिये'।

साथ ही अन्य रूप—'लीजै'[21], 'दीजै'[22], 'कीजै'[23]
और 'लीजे'[24], 'दीजे'[25], 'कीजे'[26] भी।

६. 'हो' मे अन्त होने वाले पद—
'दै हो'[27]—सितावी षवर फौज मे जाय 'दैहो'।
'लै हो'[28]—वली राव परताप है वेग 'लैहो'।

---

१ छं० सं० ४६५। २ छं० सं० ४६५। ३ छं० सं० ४१४। ४ छं०सं० ६७। ५. छं० स० ४। ६ छं० स० ७४। ७ छं० स० ५२। ८ छं०स० २२१। ९. छं०सं० १५। १० छं०सं० १५। ११. छं०सं० १५। १२ छं०स० ४४। १३. छं० सं० २०४। १४. छं० सं० २०४। १५. छं० सं० ५३। १६ छं०स० ४२८। १७ छं० सं० ४१९। १८ छं० स० ४८। १९ छं० स० १०५। २० छं०सं० १०५। २१ छं० स० ११२। २२ छं० स० १४८। २३. छं० सं० ११२। २४. छं०स० ४६६। २५ छं० स० १३५। २६ छं० सं० १३७। २७ छं० स० ८५। २८ छं०सं० ८५।

७. जैसा ऊपर दिखया गया है, मध्यम पुरुप बहुवचन के रूपो का आधिक्य है।

८. स्त्रीलिंग के रूप अलग प्राप्त नही होते।

भूतकाल—

	एकवचन	बहुवचन
उत्तम पुरुष—	'कीन'[१], 'कियं'[२] 'कीनी'[४]	'कीये'[३]
मध्यम पुरुप—		'कीन'[५], 'कीनौ'[६], 'कीयौ'[७]
अन्य पुरुष—	'कीनो'[८], 'कीन'[९], 'कीनो'[१०], 'कीनौ'[११], 'कियो'[१२], 'कीनौ'[१३], 'किय'[१४], 'कीनीय'[१५], 'कीनब'[१६], 'कियौ'[१७], 'कीनिय'[१८], 'कीन'[१९], 'कीनी'[२०], 'कीनोस'[२१], 'कीनिय'[२२], 'करी'[२३], 'करिय'[२४], 'कीनीस'[२५]।	'किये'[२६], 'कीने'[२७], 'कीन'[२८], 'कराये'[२९], 'कीये'[३०], 'किय'[३१], 'कियेस'[३२], 'कीनै'[३३], 'कीन्हे'[३४], 'करे'[३५]

प्रताप-रासो में प्रयोग—

'कीन'[३६]—सूरजमल ब्रजराज सो, जुध येक मै 'कीन'।

'किये'[३७]—लघुता ते मैं 'किये' वडाई।

'कीये'[३८]—काज को 'कीये' याद हम।

'कीनी'[३९]—(मैं) 'कीनी' ते करतार कराई।

'कीन'[४०]—तुम कीन वधु जो वधु काम।

---

१ छं० स० ८३, ११०। २ छ० स० ३६६। ३ छ० सं० ४००। ४. छं०सं० ४०६। ० स० १६६। ६ छ० स० ३५०। ७ छ० स० ३८०। ८ छ० स० ६। ९ छं० स० १३। १०. छ० सं० ४७। ११. छ० स० ३५। १२ छं० स० ४६। १३ छ० स० ४९। १४ छ०स० ४११। १५ छ०स० ४०७। १६ छ० स० ३८०। १७ छ० स० ३३१। १८. छ० सं० १६९। १९ छ० स० २४६। २० छ० स० ८। २१. छं० स० ३२७। २२ छ० स० १०५। २३ छ० स० २६१। २४ छ० स० ३७४। २५ छं० सं० ४१४। २६ छ० स० १७। २७ छ० स० ४९। २८ छं०स० ७०। २९ छ०सं० १२०। ३० छ०स० १२७। ३१. छ० स० १४५। ३२ छं०स० १६२। ३३ छं०सं० ३३५। ३४ छ०स० ३२१। ३५ छ०स० ३९४। ३६ छं०स० ८३। ३७. छ०स० ३९६। ३८ छं०सं० ४००। ३९ छ० स० ४०६। ४०. छं० स० १६६।

'कीनौं'[१]—क्यो तुम दिली नजत्र तजि दीनौं।
या दिसि आन काज को 'कीनौं'।
'कीयौ'[२]—घर धणी आप आवन 'कीयौ' अलङ्यों है अन मौन अति।
'कीनो'[३]—'कीनो' विहड सो दसौं सीस।
'कीन'[४]—जो विद्या जितनी पढी, वालमीक गुरु 'कीन'।
'कीनो'[५]—'कीनो' करूर माधव नरेस।
'कीनौं'[६]—कूच वर भोरहि 'कीनौं'।
'कियो'[७]—'कियो' क्राध पातल प्रबल, को नाथावत रतनेस।
'कोनौ'[८]—'कोनौ' तै परवान कूच की तव ही ठानी।
'किय'[९]—'किय' पातिल सिधे मिलन।
'कीनीय'[१०]—सुणि मत्री नृप वचन जोडि कर अर्ज सु 'कीनीय'।
'कीनव'[११]—भूप आदर अति 'कीनव'।
'कियौ'[१२]—चावड दान 'कियौ' यत आनै।
'कीनिय'[१३]—जात राव परताप आप यह अरज सु 'कीनिय'।
'कीन'[१४]—चढिय जोर भर जुध 'कीन'।
'कीनी'[१५]—राम राज आज्ञा यो 'कीनी'।
'कोनोस'[१६]—'कीनोस' मास रुपि राड़ि येक।
'करी'[१७]—'करी' मास दोय किला सूँ लड़ाई।
'करिय'[१८]—रुपि 'करिय' राड़ि जिन मास दोय।
'कीनीस'[१९]—'कोनीस' वात सिधे प्रवाण।
'किये'[२०]—'किये' तास बनवास मै, समै जुध सुत तात।
'कीने'[२१]—हनवंत थान गिरवर निकट 'कीने' मुकाम परथम दिवस।
'कीन'[२२]—मुकाम दो मझ 'कीन'।
'कराये'[२३]—भूपति भर दरवार 'कराये'।
'कीये'[२४]—'कीये' डेरा नदो निकट, माधव दल महमत।

---

१ छ० सं० ३५०। २ छं० सं० ३८०। ३ छ० स० ६। ४ छं० स० १३।
५. छं० स० ४७। ६ छ० स० ३५। ७ छ० स० ४६। ८ छ० स० ४९।
९. छ० स० ४११। १०. छं०स० ४०७। ११ छं०सं० ३८०। १२ छं०स० ३३१।
१३ छ० स० १६९। १४ छं० स० २४६। १५ छं०सं० ८। १६ छं०स० ३२७।
१७ छ० सं० २६१। १८ छं०स० ३७४। १९. छ० स० ४१४। २० छं०स० १७।
२१. छ० स० ४९। २२ छं० सं० ७०। २३ छं०स० १२०। - २४ छ० स० १२७।

'किय'[1]—सम चौवीसै साल काल माधव महीप 'किय'।

'कियेस'[2]—दगेस पानिलराव पर 'कियेस' दुरजन हाथ।

'कीनैं'[3]—वत वावोली नजव नर, 'कीनैं' घणे मुकाम।

'कीन्हे'[4]—'कीन्हे' पुस्याल मत्री जुवाव।

'करे'[5]—'करे' वार दरवार कोकि मत्री सु बुलायव।

भूतकाल क्रिया पदो के सम्बन्ध मे—

१. अन्य पुरुष मे रूप-विविधता—

एकवचन पु० ख० बो० 'किया'।

[कीनो][6], [कीन][7], [कीनो][8], [कीनौं][9], [किय][10], [कियो][11], [कोनी][12], [कीनोस][13], [कीनव][14], [कीनिय][15], [कीन][16]।

स्त्री० ख० बो० की'।

[कीनी][17], [कीनिय][18], [करी][19], [करिय][20], [कीनीस][21]।

बहुवचन ख० बो० 'किये'।

[कीये][22], [किये][23], [कीने][24], [कीन][25], [कीयेस][26], [कीनैं][27], [कीन्हे][28], [करे][29] आदि।

(अ) एकवचन पुल्लिग मे ओकारान्त तथा औकारान्त की तथा स्त्रीलिग मे इकारान्त और ईकारान्त की प्रवृत्ति दिखाई देती है।

(आ) बहुवचन मे एकारान्त की प्रवृत्ति है।

(इ) अन्त मे /य/ ध्वनि भी, खडी बोली के अनुरूप ही, आती है।

२. पुराघटित अतीत भूतकाल मे एक प्रयोग और मिलता है, जिसके अन्त मे प्रायः /त/ वर्ण आता है—

---

१ छं० स० १४५। २. छ० स० १६२। ३ छं० सं० ३३५। ४. छं० स० ३२१। ५. छं० स० ३६४। ६ छ० सं० ६। ७ छ० सं० १३। ८. छ० स० ४७। ९ छं० सं० ३५। १० छं० स० ४११। ११ छ० स० ४६। १२ छं० सं० ४६। १३. छं०स० ३२७। १४ छ०स० ३८०। १५. छं०स० १६६। १६ छ०स० २४६। १७ छ० स० ८। १८ छ० स० १०५। १९ छ०स० २६१। २०. छ० स० ३७४। २१ छ० स० ४१४। २२ छं० सं० १२७। २३ छं०सं० १७। २४. छं०सं० ४६। २५. छं०स० ७०। २६ छं०सं० १६२। २७. छ० सं० ३३५। २८ छ०स० ३२१। २९ छ० स० ३६४।

'तपत'[१], 'पूजत'[२], 'रहत'[३]।

(१) ता वन यक तपसी 'तपत', वाल्मीक रिष नाग।

(२) 'पूजत' भुज जयसाहि नृप, सगि मदन्न दल पाग।

(३) सीता 'रहत' भवन नग सोई। उपजे पुत्र जुगल जग जोई॥

३ खड़ी बोली का 'था' सहायक क्रिया के रूप में दिखाई नहीं देता। प्रताप-रासो के भूतकालीन क्रिया-पद कई रूपो मे दिखाई देते हैं—

(अ) अकारान्त—'कीन'[४], 'दीन'[५], 'लीन'[६], 'किय'[७], 'हूय'[८]।

(आ) ईकारान्त—'लगी'[९], 'वजी'[१०], 'कीनी'[११],'दीनी'[१२], 'दई'[१३]।

(इ) एकारान्त—'कीके'[१४], 'वतराये'[१५], 'भेजिये'[१६], 'उपजे'[१७]।

(ई) ऐकारान्त—'गिरै'[१८], 'आविय'[१९], 'कीनै'[२०]।

(उ) ओकारान्त—'कियो'[२१],'थाकियो'[२२],'हन्यो'[२३],'धारियो'[२४]।

(ऊ) ओंकारान्त—'कीनों'[२५]।

(ए) औकारान्त—'कीनौ'[२६], 'कह्यौ'[२७], 'उचार्यौ'[२८]।

(ऐ) औंकारान्त—'कीनौं'[२९], 'लीनौं'[३०]।

४. एक विचित्र प्रयोग—'व' वर्ण से अन्त।

'बुलाया/बुलाये'~प्र० 'बुलायव'[३१]।

'आये' ~प्र० 'आयव'[३२]।

'किया/किये' ~प्र० 'कीनव'[३३]।

'ग्रहण किया' ~प्र० 'गहिव'[३४]।

'चले' 'हिले' ~प्र० 'चलिव'[३५], 'हिलव'[३६]।

५ एकारान्त के स्थान मे येकारान्त ही मिलते हैं—

'आये'[३७], 'किये'[३८], 'गये'[३९], 'नाये'[४०], 'बुलाये'[४१], 'वतलाये'[४२],

---

१ छं० स० ९। २ छं० स० २६। ३. छं० स० १२। ४ छं० स० ३।
५. छं० स० २। ६. छं० सं० ४३। ७ छं० स० १४५। ८ छं० सं० ४७।
९ छं० स० ६। १० छं० स० ३। ११. छं० स० ४४। १२ छं० स० ८।
१३. छं० स० ११७ १४ छं० स० ३४। १५ छं० स० १०७। १६. छं० स० १०६।
१७ छं० सं० ३२। १८ छं० स० ८५। १९ छं० स० १८। २० छं० स० ३३५।
२१ छं०सं० ३४९। २२ छं० स० १३१। २३. छं० स० ५। २४ छं० स० ११५।
२५. छं०स० ३२७। २६ छं०स० ३५०। २७ छं०सं० २१३। २८ छं०स० ३७१।
२९ छं० स० ३५०। ३० छं०स० ३५। ३१ छं०स० १४५। ३२. छं०स० २९८।
३३ छं० स० ३८०। ३४ छं० सं० ६। ३५ छं० स० ४३२। ३६. छं०स० ४३२।
३७ छं० स० ४१। ३८ छं० स० ११४। ३९ छं० स० ११। ४०. छं० स० ८८।
४१. छं० स० १२०। ४२ छं० स० १७३।

लिषये'[१], 'पिलिये'[२], 'सजिये'[३], 'हुये'[४], 'लिये'[५], 'जिये'[६], 'धारिये'[७], 'छाये'[८], 'फुरमाये'[९], 'भेजिये'[१०]।

६ /य/ योगान्त जो व्रजभाषा की विशेषता है—
'डिग्यौ'[११], 'कह्यौ'[१२], 'बढ्यो'[१३], 'हन्यो'[१४], 'उपज्यो'[१५]।

७. /स/ का योग, जैसा अन्य पदो मे भी लक्षित होता है—
'बकसे+/स/'[१६], 'थपे+/स/'[१७], 'पूछौ+/स/'[१८], 'सुनिई+/स/'[१९], 'कहिई+/स/'[२०], 'बुझौ+/स/'[२१], 'लीनी+/स/'[२२], 'मरये+/स/'[२३], 'लगे+/स/'[२४]।

८. विशेष प्रयोग—
'कीन आन'[२५] ∽ 'आये'
'श्रवण लीन'[२६] ∽ 'सुना'
'कीने चलन'[२७] ∽ 'चले'
'आवन कियो'[२८] ∽ 'आये'

भविष्य—

	एकवचन	बहुवचन
उत्तम	'करिहौंस'[२९], 'करिहौ'[३०], 'कीन'[३१], 'करिहो'[३२]।	'करिहै'[३३], 'करिहैं'[३४]।
मध्यम	—	—
अन्य	'करिहैस'[३५]	—

प्रयोग—
'करिहौंस'[३६]—'करिहौस' जुध सरिहैस लौन।
'करिहौ'[३७]—'करिहौ' दिवान याही सु देस।

---

१ छ० स० ६६। २. छ० स० १७। ३ छ० स० ६१। ४. छ० स० २५। ५ छ० स० २६। ६. छ० स० २७। ७. छ०स० ३५। ८. छ० स० ४१। ९. छ० सं० ६७। १० छ० स० १०६। ११ छ० स० ४६१। १२. छ०स० २१३। १३ छ० स० १९९। १४ छ० स० ५। १५ छ० स० ८७। १६. छं० स० ६। १७ छ० स० ६। १८ छ० स० १०। १९ छ० स० ४७। २० छ० स० ४७। २१. छ०स० १६६। २२. छ० स० ३५६। २३ छ०स० ३९४। २४. छ०स० ३५२। २५ छ०स० ११०। २६ छ० स० १०३। २७. छ०स० ३९८। २८. छ०सं० ३७९। २९ छ०सं० १२१। ३०. छ०स० ३५२। ३१. छ०स० २७१। ३२. छ०सं० १२१। ३३ छ०स० २४३। ३४. छ०स० ३२७। ३५. छं०सं० २२५। ३६. छ०स० १२१। ३७. छ०स० ३५२।

'करिहो'[१]—'करिहो' सु होय जो स्याम काम।

'कीन'[२]—कहि है पुस्याल में सोय 'कीन'।

'करिहै'[३]—'करिहै' पर और हरोल तुमै।

'करिहैस'[४]—'करिहैस' काम सरिहैस जोय।

'करिहैं'[५]—लरि याहि तोरि करिहैं' च कूच।

भविष्य काल के सबध मे कुछ टिप्पणियाँ—

१. खड़ी बोली [गा] के स्थान मे व्रजभाषा के ओकारान्त रूप [गो] के रूप कही-कही दिखाई देते है

'पकरेगो'[६]—सुत तुमरो 'पकरेगो' सोई।

'पायगो'[७]—बीच पाडि व्रजराज कौ, वाजी भिडत न 'पायगो'।

'जायगो'[८]—जोडत माधव नृपति दल मोल जवाहर 'जायगो'।

खड़ी बोली [गा] ~ प्रतापरासो [गो], [गी] और [गे] रूप नही मिलते।

२. अधिक रूपो मे /ह/ ध्वनि मिलती है—

/ह्/+/ओ/—'जैहो'[९], 'करिहो'[१०], 'लैहो'[११]

/ह्/+/औ/—'देपिहौ'[१२], 'मिलिहौ'[१३], 'लैहौ'[१४]

/ह्/+/औं/—'जैहौं'[१५], 'कहहौं'[१६], 'करिहौं'[१७]

/ह्/+/ऐ/—'पायहै'[१८], 'आयहै'[१९], 'लरिहै'[२०], 'टरिहै'[२१], 'करिहै'[२२], 'रहै'[२३], 'जहै'[२४], 'डारिहै'[२५]।

३. एक अन्य प्रयोग—

'रषै'[२६] ~ ख० बो० 'रखेगा', 'जहै'[२७] ~ 'जायेगे'।

'रहै'[२८] ~ ख० बो० 'रहेगे'।

को नृप 'रषै' तापै 'रहै'। नाहि चले दिली दिस 'जहै'।

४. राजस्थानी—

'रहसी/रि/'[२९]—'रहेगी'।

---

१. छ० स० १२१। २ छ० स० २७१। ३ छ० स० २४२। ४ छ० सं० २२५। ५. छं० सं० ३२७। ६ छं० स० १५। ७ छ० स० ११२। ८. छ० सं० ११२। ९ छ०स० ११०। १० छ०स० १२१। ११ छ०स० ११०। १२ छ०सं० ६२। १३. छं०सं० ६६। १४ छ०स० २३५। १५ छ०सं० ६८। १६ छं०सं० ६८। १७ छ०सं० १२१। १८ छ०स० १६६। १९ छ०सं० १६६। २० छं०स० १७६। २१. छ०स० १७६। २२ छ०स० २२५। २३ छं०स० ७२। २४. छ०सं० ७२। २५ छ० सं० २३५। २६. छ० स० ७२। २७ छं० सं० ७२। २८ छ० स० ७२। २९. छं०सं० ४६१।

५. /स/ ध्वन्यांत—
'लैहौ+/स/'[1], 'करिहो+/स/'[2],'लरिहै+/स/'[3], 'टरिहैं+/स/'[4],
'करिहै+/स/'[5], 'करिहौ+/स/'[6]।

६. /च/ ध्वन्यात—
लरि याहि तोरि 'करिहैंच' कूंच।[7]

पूर्वकालिक क्रिया के रूप—

१. खडी बोली का 'कर' कम मिलता है। राजस्थानी प्रभावित 'कर' को 'रि', 'र' के रूप मे यदा कदा देखा जाता है।
'आकर' >'आरि'—उवरेस जोय मिलियेस 'आरि'[8]।
टरिहैस आप जो मिलै 'आरि'[9]।
'लेकर' >'लेर' —उलटिवाट कीनो चलन, लारे मत्री 'लेर'[10]।

२. पूर्वकालिक क्रिया के अनेक रूप—
(क) 'अकारान्त'—'जान'[11], 'आन'[12], 'होय'[13], 'सज'[14], 'कह'[15], 'वजाय'[16], 'आय'[17]।
(ख) 'आकारान्त'—'आ'[18]—
दीपदान 'आ' देषियो हम तुम पहुकर मिलन।
(ग) 'इकारान्त'—'मारि'[19], 'तजि'[20], 'लषि'[21], 'करि'[22], 'सुनि'[23], 'धारि'[24], 'चलि'[25]।
(घ) 'ऐकारान्त'—'दै'[26], 'लै'[27]।

३. कही-कही 'कर' के स्थान मे 'कै' मिल जाता है—
'जानिकै'[28], 'करकै'[29]।

४. 'कर' का प्रयोग—
'कर सर' ~ 'कर सर' उनक्षारो किलो, माधव नृपत सुनाम।[30]

---

१ छ० स० ११०। २. छं० स० १२१। ३. छं० स० १७६। ४ छ० सं० १७६। ५ छ० स० २२५। ६ छ० स० १२१। ७ छ० स० ३२७। ८ छं० स० २०८। ९ छ० स० १७६। १० छ० स० २७२। ११ छं० स० १०। १२ छ० स० १०। १३ छं० सं० ४९। १४ छ० स० ५२। १५ छ० स० १४१। १६. छं० सं० ७०। १७ छ० स० ७०। १८ छ० स० ६१। १९ छ स० ४२९। २० ८ छ० स०। २१ छ० स० १०। २२ छ०स० ८२। २३ छ० सं० १४८। २४ छं० सं० १४८। २५ छ० सं० ११२। २६ छ स०१२०। २७ छ०स० २५३। २८. छ०सं० ७८। २९. छ० स० १०३। ३० छ० स० ३९।

'कर कर' ~ 'कर कर' मुकाम पहोचे स ठाम ।[1]

'कर' ~ 'कर' मुकाम परथम दिवम, किये राज दरवार ।[2]

'कर' पयाण परभात नृपति माधव पै जैहौ ।[3]

५. खड़ी वोली हिंदी गद्य मे अभी तक 'कर', 'करके', 'φ'[†] प्रयोग चालू है—

'वुलाकर' ~ √+ कर

'वुला करके' ~ √+ करके

'वुला' ~ √+ φ

यही प्रवृत्ति प्रतापरासो मे भी देखी जाती है, यद्यपि 'कर' का प्रयोग कम ही हुआ है—

ख० वो० 'कर' ~ [कर], [कै], [करकै], [φ]

'कर सर'[4] ~ √+कर

'जानि कै'[5] ~ √+कै

'करकै टेक'[6] ~ √+करकै

'जान'[7] ~ √+ φ

प्रेरणार्थक क्रिया—

'कराये'– दल अलवर दिसि कुच 'कराये'[8]

भारी भर दरवार 'कराये'[9]

भूपति भर दरवार 'कराये'[10]

वत जोहार दरवार 'कराये'[11]

'कराई'—कीनी ते करतार 'कराई'[12]

कुछ विशेष प्रयोग—

१. 'के लिये' —

'करन'[13] > 'करने के लिए'—

'करन' स्याम के काम गांव डहरा सुठाव तजि ।

'व्याहन'[14] > व्याहने के लिए'—

'व्याहन' वीकानेर घर, आमावति के राज ।

---

१ छं० सं० २२५ । २ छं० सं० ५० । ३ छं० सं० ६८ । ४ छं० सं० ३९ । ५ छं० सं० ७८ । ६. छं० सं० १०३ । ७ छं० सं० १० । ८. छं० सं० ३३१ । ९ छं० सं० २३७ । १०. छं०सं० १२० । ११. छं०सं० ११७ । १२. छं०सं० ४०६ । १३ छं० सं० ९९ । १४. छं० सं० १५० ।

---

† शून्य ।

'षडन'[1] >'पंड करने के लिए'—करण स्याम के काम, सीस सत्रुन के 'षडन'।

'लरन'[2] >'लडने के लिए'—उनयारै गढ 'लरन' कूच वर भोरहि कीनौ।
√—।='के लिए', म० पु० आज्ञार्थ+/न/='के लिए'।

२. 'ही' युक्त—

'सुनत'[3] >'सुनते ही'—'सुनत' वचन रिप सीत के सग लै गये तास।

'वचत'[4] >'वाचते ही'—षत 'वचत' ब्रजराज के, ब्रजराज जौहार।

'जोडत'[5] >'जोडते ही'—'जोडत' माधव नृपति दल मोल जवाहर जायगो।

√—ना+/त/=√+ही।

ए० व० म० पु० आज्ञार्थ+/त/=√+ही।

३. सज्ञावत्—

'रहन'[6]—'रहन' राव परताप को, सु रहै राज ब्रजराज जित।

'विछ्रन'[7]—नृप 'विछ्रन' 'अरदल रहन होय घरा सो बात।

'आवन'[8]—घर घणी आप 'आवन' कियौ अलख्यौ है अनमौन अति।

'मिलन'[9]—विजराज' 'मिलन' पहोकर सनान।

'आन'[10]—जो कोन 'आन' मै यही काज।

'जान'[11]—सेन राषि जोहार सगि कियो देस दिसि 'जान'।

४ खडी वोली के 'वाला' प्रत्ययात सहश—

'पायक'[12] >'पानेवाला'—आपक तुम्हरे तात सदा 'पायक' वा घर के।

'भाज्या'[13] >'भागनेवाला'—'भाज्या' ऊपर जाय जो, छत्री धरम न होय।

'करनहारो'[14] >'करनेवाला'—कही कौन है सो यसी 'करनहारो'।

'कीनहार'[15] >'करनेवाला'—करी 'कीनहार' सिरै दोस मोही।

'कहनहार'[16] > कहनेवाला'—'कहनहार' पुजै कहनि।

---

१. छ० स० ३३। २ छं० सं० ३५। ३ छ० स० ११। ४ छ० स० ६२।
५. छं० स० ११२। ६ छं० स० ७८। ७ छ० स० ४०। ८ छ० सं० ३८०।
९ छ०स० ११०। १० छं०सं० ११०। ११. छ० सं० ११६। १२ छ०स० ११२।
१३ छ०स० १३६। १४ छ०स० १६३। १५ छ०सं० १६३। १६. छ०स० २४१।

५. सयुक्त क्रिया-पद—

'गए'> √करना + √जाना> 'कियो जान'—

कियो देस दिसि जान ।[1]

'चले'> √करना + √चलना> 'कीने चलन'—

घर पछ्मि 'कीने चलन' ।[2]

कोके'> √कोकना + √लेना> 'कोक लीये'—

'लीये कोक' नृप आप ।[3]

'आया'> √करना + √आना> 'कीन आन'—

'कीन आन' मैं यही काज ।[4]

क्रियापदो की विविध रूपता के कुछ उदाहरण—

√आना

'आन'[५], 'आन'[६] (आकर), 'आई'[७], 'आवियै'[८], 'आवत'[९], 'आय'[१०], 'आत'[११], 'आ'[१२], 'आव'[१३], 'आवते'[१४], 'आयो'[१५], 'आनि'[१६], 'आये'[१७], 'आय है'[१८], 'आरि'[१९], 'आंनि'[२०], 'आब'[२१], 'आवै'[२२], 'आवन'[२३], 'आइय'[२४], 'आरिए'[२५] आदि ।

√करना

'कीनो'[२६], 'कीनौं'[२७], 'कीजिये'[२८], 'करै'[२९], 'कीनिय'[३०], 'करी'[३१], 'करिहौ'[३२], 'कीयो'[३३], 'करो'[३४], 'कीजै'[३५], 'कीन'[३६], 'कीनो'[३७], 'करन'[३८], 'किय'[३९], 'कर'[४०], 'कीने'[४१], 'किये'[४२], 'कीनी'[४३], 'कीजत'[४४], 'करु'[४५], 'करिये'[४६], 'करनी'[४७], 'कीन्हे'[४८], 'करि'[४९], 'कराये'[५०], 'कीनो'[५१],

---

१. छ०सं० ११६ । २ छ०सं० ३९८ । ३. छं०सं० ३७९ । ४. छ० सं० ११० ।
५ छं० स० १२९ । ६ छं० स० ११० । ७ छ० स० ८४ । ८. छं० स० १८ ।
९. छ०सं० २७ । १० छ० सं० १०३ । ११. छं० स० ६६ । १२ छं० सं० ९१ ।
१३ छ०स० ९६ । १४ छ०सं० ९७ । १५ छं०स० १०३ । १६. छ०स० ११४ ।
१७ छ०स० १५४ । १८ छं०सं० १६९ । १९ छ सं० १७६ । २० छ०सं० १८४ ।
२१ छ०स० २१८ । २२ छ०सं० २६१ । २३ छ०स० २९३ । २४ छ०सं० १९३ ।
२५ छ० स० १०३ । २६ छं० स० ६ । २७ छ० स० ३५ । २८. छ० स० ६८ ।
२९ छं० स० ८३ । ३० छ० स० १०५ । ३१. छ०सं० ११७ । ३२ छं०सं० १२१ ।
३३ छं०सं० १५६ । ३४ छ०स० १६३ । ३५ छ०स० १७४ । ३६. छ०स० २७१ ।
३७ छं०स० २७२ । ३८ छ०सं० २७६ । ३९ छ०सं० २७६ । ४०. छं०स० २७७ ।
४१ छं०सं० २८३ । ४२ छ०स० २८४ । ४३ छ०स० ३८९ । ४४ छ०स० २९८ ।
४५ छं०स० २९७ । ४६ छ०स० ३१० । ४७ छ०सं० ३१० । ४८ छ०स० ३२१ ।
४९ छ०स० ३१२ । ५० छ०स० ३२३ । ५१ छ०स० ३४४ ।

'कीनैं'[१], 'करिय'[२], 'कीजे'[३], 'करी'[४], 'करियेस'[५], 'कीनीस'[६], 'कीनौ'[७], 'कियेस'[८], 'करौ'[९], 'करत'[१०], 'करिहैस'[११], 'कीनिय'[१२], 'करिहौ'[१३], 'करान'[१४], 'करिकरि'[१५], 'कीजैसि'[१६], 'कीजेस'[१७], 'कीये'[१८] आदि आदि।

√होना

'होय'[१९], 'होत'[२०], 'हौ'[२१], 'हुई'[२२], 'होती'[२३], 'होयसी'[२४], 'होयस'[२५], 'होई'[२६], 'हुयो'[२७], 'हुये'[२८], 'भई'[२९], 'होये'[३०], 'भये'[३१], 'है'[३२], 'हैं'[३३], 'हौं'[३४], 'ह्वैयत'[३५], 'हो'[३६], 'हुय'[३७], 'होनी'[३८], 'हीं'[३९], 'ह्वै है'[४०], 'ह्वै'[४१], 'होर'[४२], 'होत'[४३], 'हुइ'[४४], 'हो'[४५] आदि।

एक रूप 'होय' के विभिन्न अर्थ—

पू० 'होकर'—निपुण 'होय' गुण गण जिते जथा जोग परवीन।[४६]

व० 'हो'—वचन बोल मुख जोय 'होय' सो हमैं बतैयत।[४७]

सा० व० 'होती है'—हरे नजब दल हो घटे 'होय' चाहि अन चाहि।[४८]

भू० 'हुआ'—अैसेस 'होय' रघुनाथ पाट।[४९]

व० 'हो सकता है'—कलियाण वस सो यह न 'होय'।[५०]

भू० 'था'—उदैकरन नृप 'होय' तास तन हम तुम भाइय।[५१]

व० आ० 'हो'—'होय' मोहि यक हुकम देष हो जाय व्रजधर।[५२]

आ० 'हो जाओ' - बघू 'होय' सलार।[५३] (होय+/स/)

भवि० 'होगा'—एक न दूजो 'होय' सो, यो माधव सुनी नरेस।[५४]

क्रिया पदो की विविध रूपता अधिक मात्रा मे पाई जाती है।

---

१ छं० स० ३३५। २ छं० स० ३४३। ३. छं० स० ३४४। ४. छं० स० ३८२। ५ छं० सं० ४२६। ६ छं० सं० ४२६। ७ छं० स० ४३२। ८ छं० स० ४५४। ९. छं० स० २१८। १० छं०सं० ४०४। ११ छं० स० ४१४। १२ छं०स० ४ ९। १३ छं० स० ३१२। १४ छं०स० ३५६। १५ छं० स० ३७४। १६ छं०स० ३८९। १७ छं०स० ३८९। १८ छं०स० ४००। १९ छं०स० २१८। २० छं०स० ४२७। २१. छं०सं० ४६७। २२ छं० स० १५९। २३. छं० स० ६४। २४ छं० स० ४६। २५ छं० स० ५०। २६ छं० स० ८। २७ छं० सं० २३। २८ छं० स० २५। २९ छं० स० १८७। ३० छं०स० १३०। ३१ छं० स० २०। ३२ छं० स० ६७। ३३ छं० स० ७१। ३४ छं० सं० २। ३५ छं० स० ४। ३६ छं० सं० ७७। ३७ छं० स० ८८। ३८ छं० स० १२१। ३९ छं०स० १५९। ४० छं०स० १६३। ४१ छं०स० २३१। ४२ छं०स० ३७४। ४३. छं०स० ४६५। ४४ छं०स० १९४। ४५ छं० स० २। ४६ छं० स० ६। ४७ छं० स० १०। ४८ छं० स० ३४२। ४९ छं० स० ६। ५०. छं० स० ४७। ५१ छं० स० १९३। ५२ छं० स० २१८। ५३ छं०स० ५०। ५४ छं० स० ४६।

अव्यय

अव्यय पदो को, प्रायः, कई समुदायो मे विभक्त किया जाता है। यथा—

१. क्रिया विशेषण,

२. सम्बन्धवाचक,

३ समुच्चयवोधक तथा

४. विस्मयादिवोधक।

प्रतापरासो मे कई प्रकार के अव्यय पद है, जिनमे प्रमुख ये हैं—

१. व्रजभापा के—'वहुरचौं'[1], 'जवई'[2], 'नाय'[3], 'ह्या'[4]।

२. राजस्थानी के—'यत'[5], 'वत'[6], 'लार'[7], 'वति'[8]।

३. खडी वोली के—'जव'[9], 'कव'[10], 'न'[11], 'जितनो'[12]।

४. विदेशी—'दर'[13], 'सालिम'[14]।

किन्तु न० २ और ४ से सम्वन्धित पदो की संख्या कम है। अधिक संख्या व्रजभापा मे प्रयुक्त अव्यय पदो की है।

प्राय· कहा जाता हैं कि अव्यय का रूप परिवर्तित नही होता, उस पर लिंग, वचन, क्रिया, कारक आदि का प्रभाव नही पडता, परन्तु वोलने और लिखने के प्रकार हो सकते हैं। जैसे नीचे लिखे उदाहरणो मे—

ख० वो० 'वहाँ' ~ [वत][15] [वति][16] [वतै][17]]उत][18] [उतै][19] [वहा][20]।

ख० वो० 'यहाँ' ~ [यत][21] [इति][22] [यतै][23] [इत][24] [इतै][25] [ह्यां][26] [यहा][27]।

ख० वो० 'नही' ~ [नै][28] [न][29] [नाय][30] [नही][31] [नाहिं][32]

ख० वो० 'और' ~ [अरु][33] [अर][34] [रु][35] [और][36]।

---

१ छं० सं० ११०। २ छ० सं० २२७। ३. छं० सं० ३६६। ४ छ० सं० ३४३।
५. छ० स० ४१। ६. छ० स० ४१। ७ छ० सं० ८२। ८ छं० स० २३०।
९. छ० स० ४५४। १० छं० स० २६८। ११ छ० सं० ८१। १२. छ० सं० १३।
१३ छं० स० ३६६। १४ छ० सं० ६२। १५ छ० स० ३६। १६ छं० स० २३०।
१७ छ० स० २६१। १८ छं०स० ३०५। १९ छं०स० ३१५। २० छ० सं० ८५।
२१. छं० सं० ३६। २२ छ० स० २८९। २३. छ० स० २६१। २४ छं० स० ४१।
२५ छ०स० ८५। २६ छ० म० ३४३। २७. छ०स० १६६। २८ छ०सं० ८०।
२९ छ० सं० ८१। ३० छ० सं० ३९८। ३१ छ० स० १६३। ३२. छ० स० ८५।
३३ छ० सं० १६। ३४ छ० सं० २२३। ३५ छं० म० ४५७। ३६. छ० स० ८१।

ख० बो० 'सामने' ~ [साम्है][1] [साम्हो][2] [समाही][3]
[साम्हीस][4]

क्रिया-विशेषरण अव्यय—

पदो को नीचे लिखे प्रकारो के अतर्गत प्रस्तुत किया जा रहा है—(केवल कुछ ही पद दिए जा रहे हैं)

१ कालवाचक—

'वेग'—बली राव प्रताप है 'वेग' लै हो।[5]

'जवई'—सूरजमल सुत बोले 'जवई'।[6]

'जवै'—वर भूप कियो दरबार 'जवै'।[7]

'जव'—पहौचस आनि अलवर किले त्रिकालद्र जाणीस 'जब'।[8]

'वहोरचो'—जो कीन दीघ 'वहोरचो' स आन।[9]

'ततकाल'—तज थान चले 'ततकाल' ही, स्याम धरम को होय बस।[10]

'छिनक'—लंकापति रावण हन्यो, लई न 'छिनक' अवार।[11]

'सदा'—सीस सहायक है 'सदा', लिये रषि रघुनाथ।[12]

'कव'—मो बलकी यह वात प पातल जीवत देत 'कब'।[13]

'बहुरौ'—षत मत्री लिषी भूप को 'बहुरौ' दिये पठाय।[14]

२. स्थानवाचक—

'पछैस'—'पछैस' राज रणवास लीनं।[15]

'आगे'—'आगे' जलेब कुतल स कीन।[16]

'अगैस'—पचरग रग 'अगैस' पास।[17]

'लार'—लिये 'लार' दल सबल वार सूजा सत्तापति।[18]

'लारै'—भुज बधु 'लारै' भवानी उमगै।[19]

'साम्है'—उमराव लीन 'साम्है' पठाय।[20]

'साम्ही'—बासाये 'साम्ही' सुरति, राजकवर को रीति।[21]

'समाही'—यते हुल हाथी 'समाही' धकाये।[22]

---

१. छं० स० ३८६। २. छ० स० ३६०। ३. छ० स० ४०८। ४. छं० सं० ४३२। ५ छं० सं० ८५। ६ छ० स० २२७। ७ छ० सं० ४०४। ८ छं० स० ४५४। ९ छं० स० ११०। १० छ० स० ४६। ११. छ० स० ५। १२ छ० स० १६२। १३ छ० सं० २६८। १४. छं०स० ३५१। १५ छ० स० ६४। १६ छ० सं० ६४। १७ छ० स० ३८६। १८. छ० स० ८२। १९ छ० स० ५५। २०. छ० स० ३८६। २१. छं० स० ३६०। २२. छ० स० ४०८।

'ह्या'—करिय कुच नजब नर 'ह्यां' ते ।[1]
'यत'—परे षेत 'यत' वत घन भारे ।[2]
'यतै'—'यतै' सूर साथै सिरै हाथ वाहै ।[3]
'इत'—'इत' सुनतैस भूपदल छाये ।[4]
'इतै'—'इतै' राज व्रजराज नजीम छुटे ।[5]
'तित'—तुम सामिल हम होय चलै जित 'तित' यक डोरीय ।[6]
'वति—'वति' चढ आये नजब दल, यत चढ़िये व्रजराज ।[7]
'वतै'—'वतै' मारि लौ मारिल्यौ वीर वोलै ।[8]
'उतै'—यतै दल येक 'उतै' दल तीन ।[9]
'उत'—यत यक भनि 'उत' तीन गिनि मन फदन दल जोइये ।[10]
'जित'—तुम सामिल हम होय चलै 'जित' तित यक डोरिय ।[11]
'जहा'—कोप्यो है मावव नृपति अनजल 'जहा' ले जाय । [12]
'वहा'—सुनै कौन की को 'वहा' जान हारो ।[13]
'यहा'—कहै नृपति वरै वैन कहत तुम सो 'यहा' को है ।[14]
'कहा'—देस पति तजि देस कौ सजी सेन 'कहा' जात ।[15]
'इति'—'इति' अधिपति अमावतिवारो ।[16]

३. प्रकारवाचक—

'इसो'—'इसो' जाणी व्रजराजई, मुरधर हुई मोड ।[17]
'यसो'—अमर नाव कीयो 'यसो' करै होड़ को और ।[18]
'यसो'—'यसी' जान कै राव परताप वोले ।[19]
'असी'—घन मिलि धरतो वूझत 'असी' ।[20]
'असेस'—'असेस' होय रघुनाथ पाट ।[21]
'कैसी'—दुरि दिषण अव कीजै 'कैसी' ।[22]
'कैसे'—अन्न देषे 'कैसे' वने तुरक तकत यह देस ।[23]
'किसी'—'किसी' होय सीता हित सोधो ।[24]

१ छं० स० ४१ । २ छं० स० ४१ । ३. छं० सं० २६१ । ४. छं० सं० ४१ ।
५ छं० स० ८५ । ६ छं० स० ६१ । ७ छं० स० २३० । ८ छं० स० २६१ ।
९. छं०स० ३१५ । १०. छं० स० ३०५ । ११ छं० स० ६१ । १२ छं० स० ६७ ।
१३. छं० सं० ८५ । १४ छं० स० १६६ । १५ छं० स० ६६ । १६ छं० सं० २८९ ।
१७ छं० स० ९० । १८ छं०स० १५६ । १९ छं०स० १६३ । २० छं०स० १३३ ।
२१ छं०सं० ६ । २२ छं०स० ४४१ । २३ छं० स० २२८ । २४ छं० सं० १५ ।

'यो'—परतापराव 'यो' अरज कीन।[1]

'यौं'—पातलराव वचन 'यौं' बोले।[2]

'यसी'—अलिगवर से साहि ताहि तिन 'यसी' सुनाई।[3]

'इम'—काम कल्याण कोपे 'इम' राज।[4]

'जिसी'—करिहैस देषि जो 'जिसी' होय।[5]

'वरवर'—'वरवर' ढोरत सीस।[6]

'भिनभिन'—'भिनभिन' बरनन करो, ठाम नाम गुन गाय।[7]

'सजोर'– रहत नेम नरपत नगर राजा राव 'सजोर'।[8]

४. परिमाणवाचक—

'तमाम'—किलके नकीब कीनी 'तमाम'।[9]

'अति'—नगर सु डहरा नाम ठाम कहियत 'अति' भारिय।[10]

बचत क्रोध कियो 'अति' भारी।[11]

'घोर'—डका त्रमाट गहरत 'घोर'।[12]

'जितनी'—जो विद्या 'जितनी' पढ़ी, बालमीक गुरु कीन।[13]

'वड'—वदि मोला वानत्त कछी-कछी 'वड' भारिय।[14]

'नैंक'—नर नर 'नैंक' न त्यागत टेक।[15]

५ स्वीकार तथा निषेधवाचक—

'नैं'—हम वलकी अब बात 'नैं'।[16]

'नै'—भूप पूजी भुजा। ज़ानियो 'नै' दुजो।[17]

'न'—जान 'न' दूजो और कोऊ, पातिल सो रण सथ।[18]

'नाय'—मेरे मेरे 'नाय' विकाने।[19]

'नही'—'नही' राज आमेरि समरथ भूप।[20]

'नाहि'—'नाहि' चले दिली दिस जहै।[21]

'नाहिन'—सिर पै 'नाहिन' स्याम है, यातै या घर आय।[22]

'नहि'—छितो छिलोहडि ठाम, नाम मोहन 'नहि' छानो।[23]

---

१ छं० स० १०३। २. छं० स० ३६०। ३ छं० स० २१८। ४ छं० स० २७।
५ छं० सं० २३६। ६. छं० सं० १३४। ७ छं० सं० ५२। ८ छं० स० ३४।
९ छं० स० ६४। १० छं० स० ७७। ११ छं० सं० ६५। १२ छं० स० २८३।
१३ छं० सं० १३। १४ छं० स० १५५। १५. छं० स० १३१। १६ छं०सं० ३६१।
१७ छं० सं० ८०। १८ छं० स० ८१। १९ छं० स० ३६६। २० छं०स० १६३।
२१ छं० स० ७२। २२ छं० सं० ३५१। २३ छं० स० ५३।

'नाही'—'नाही' करू देस ह्याई दिपायो ।[1]

सम्बन्धवाचक अव्यय—

'लग'[2]—लरे मास चौबीस 'लग' लियो जीति गढ नजम नर ।

'दर'[3]—कहर कुच 'दर' कुच कर, कियो निकट धर आन ।

'प्रति'[4]—पातिल पाटल मिध 'प्रति' कहीये करो हम काज ।

'ता'[5]—'ता' पीछे अव वरन हौ, कूरमकुल के ठाम ।

'सग'[6]—दई राषि रिषनीन 'सग' वन घन ग्रहै निवास ।

'सहित'[7]—सुषधाम ठाम विलसे सबै, राज लोक सेना 'सहित' ।

'सारिय'[8]—गढ वावन धर षात जात येकै दिन 'सारिय' ।

'साथ'[9]—तीजै चढिये 'साथ' सव, मगि पातिल पति नूर ।

'समेत'[10]—सवै राम सगी भये, ते परवार 'समेत' ।

'तै'[11]—करिय कुच नजव नर ह्या 'तै' ।

समुच्चयबोधक अव्यय—

१. सयोजक—

'अरु'[12]—मिलि सेना सो नजव दल, 'अरु' तोवै घन पठ ।

अर'[13]—पुरुषसिंह सतोष से, 'अर' सग काका मान ।

'रु'[14]—कहा कैरु जरजोध कहा पाडौ 'रु' पचधर ।

२ विभाजक—

'कै'[15]—'कै' अलवर मो ले रहे 'कै' अलवर मैं लेहु ।

३. विरोधसूचन—

'न . ... न'[16]—जीते 'न' कोय 'न' कोय हार।

४. परिणामसूचक—

'ताते'[17]—'ताते' सल्हा एक यह कीजे । चलन ठांम राजगढ कीजे ।।

'याते'[18]—सिर पर नाहिन स्याम है 'यातै' या घर आय ।

५ सकेतसूचक—

'ज्यो'[19]—भाज्या ऊपर जाय 'ज्यो', छत्री धरम न होय ।

---

१ छं० सं० ९७ । २ छं० सं० २३३ । ३ छं० सं० ३९९ । ४ छं० सं० ४१२ ।
५. छं० सं० १८ । ६ छं० सं० ११ । ७ छं० सं० ७८ । ८ छं० सं० ३१० ।
९ छं० सं० ६३ । १० छं० सं० ५६ । ११ छं० सं० ३४३ । १२ छं० सं० ३०७ ।
१३ छं०सं० २२३ । १४ छं०सं० ४५७ । १५. छं०सं० ३३९ । १६ छं०सं० २४६ ।
१७ छं० सं० ३७१ । १८ छं० सं० ३५१ । १९ छं० सं० १३६ ।

६. प्रतिरूपसूचक—

'मनु'[१]—'मनु' इन्द्र गजै अवजैस भुमै।

'मनो'[२]—'मनो' वासरा की भई रैन कारो।

'मनौं'[३]—पछे कटक चढे 'मनौं' इन्द्र घटै।

'मनो'[४]—षदारी षरंते 'मनो' वाज वाजी।

'मनु'[५]—'मनु' धर ऊपर दावस दीन।

'मनू'[६]—'मनू' वासरग की भई रैन कारी।

'मानो'— [मनु] [मनो] [मनौं] [मनो] [मनु] [मनू]।

विस्मयादिबोधक अव्यय—

इस प्रकार के अव्यय पद पुस्तक मे कम ही मिलते है—

'रे'[७]—है 'रे'! कोऊ या वार यौ वैन वोले।

'मर मर'[८]—'मर मर'! माचि रही दल दोय।

'रर रर'[९]—'रर रर'! रण-दलो पडि अवाज।

'धिक'[१०]—'धिक' तुमको कहियत।

'जय जय'[११]—'जय जय' गणपति देव, देव सेवत सुभकारिय।

अव्यय-पदो की कुछ विशेष वातें—

१. अव्यय-पदो के रूप स्थिर नही हैं, खड़ी वोली मे जो पद आजकल एक रूप मे ही लिखे जाते है, प्रतापरासो मे उसके अनेक रूप मिलते हैं। उदाहरण अन्यत्र दिए गए हैं।

२ अव्यय-पदो मे व्रजभाषा के रूपो का आधिक्य है, स्थान-स्थान पर राजस्थानी, विदेशी पद भी मिलते हैं। आधुनिक खडी बोली के अव्यय-पद भी काफी हैं।

३. अव्यय-पदो के आधार पर भाषा के सम्बन्ध मे कोई विशेष निष्कर्ष नही निकाले जा सकते।

४. इस स्थान पर सभी अव्यय-पदो को देना कोई विशेष अर्थ नही रखता था, अतः नमूने के तौर पर कुछ ही पद दिए गए हैं। चेष्टा इस बात

---

१ छं० सं० ३७। २. छं० सं० १८७। ३ छं० सं० १८७। ४ छं० सं० १८७। ५ छं० सं० २०३। ६. छं० सं० २३१। ७ छं० सं० ८५। ८. छं० सं० १३१। ९. छं० सं० १३१। १०. छं० सं० ७८। ११ छं० सं० २।

की अवश्य की गई है कि आकृति की दृष्टि से पदो का रूप स्पष्ट हो जाय।

५ प्रतापरासो के क्रियाविशेषण अव्यय अनेक श्रेणियो मे रखे जा सकते हैं। यहाँ केवल प्रचलित प्रकार ही दिए गए है और उदाहरण देने मे भी सयम से काम लिया गया है।

उपसर्ग

'प्र' ↝ [प्र] [पर]

[प्र]—'प्रवल'[1] 'प्रवाण'[2] 'प्रमाण'[3] 'प्रताप'[4] 'प्रछालिय'

[पर]—'परनाम'[5] 'परवेस'[6] 'परताप'[7] 'परवीन'[8] 'परभाव'[9]

'अप'—'अपमता'[10] 'अपभाय'[11] 'अपदल'[12]

'सम्'—'सतोप'[13] 'सजोग'

'अनु' ↝ [अनु] [अन] [उन]

[अनु]—'अनुसार'[14]

[अन]—'अनसार'[15]

[उन]—'उनमान'[16]

'अव' ↝ [अव] [औ]

[अव]—[अवदाय][17]

[औ]—'औगुण'[18]

'निर्' ↝ [निर्] [निर]

[निर]—'निरभै'[19]

'नि' — 'निगम'[20] 'निवास'[21]

'दुर्' — [दुर्] [दुर]

[दुर्]—'दुर्जन'[22]

[दुर]—'दुरजन'[23]

'वि' — 'विमल'[24], 'वियोग'[25], 'विजोग'[26], 'विरूप'[27]

---

१. छं० स० ६६। २. छं० सं० १२६। ३ छं० सं० २०३। ४. छं० सं० ३३।
५. छं० स० ४६७। ६ छं० सं० ५७। ७ छं० सं० ४७। ८. छं० स० ४६६।
९. छं० स० २१६। १०. छं०स० ६६। ११. छं० सं० २२४। १२. छं० सं० २९०।
१३ छं० स० २२३। १४ छं०सं० ४६६। १५ छं० स० २। १६ छं० सं० ५३।
१७ छं० सं० २५१। १८ छं० स० ३८५। १९. छं० स० ९३। २०. छं० सं० २।
२१. छं० सं० ११। २२ छं० सं० ६१। २३. छं० स० १६६। २४ छं० सं० २।
२५. छं० सं० ४४। २६ छं० सं० ३२२। २७. छं० सं० १६३।

'अधि' ~ [अधि] [अध]

[अधि]

[अध]—'अधराज'[1], 'अधपति'[2]

'सु'—'सुठाम'[3], 'सुमर'[4], 'सुनाम'[5], 'सुनीत'[6], 'सुगम'[7]

'भ'—'भभीछन'[8], 'उप'—'उपजे'[9]

'अति'—'अतिमति'[10], 'अतिव्याकुल'[11]

'अ'—'अगम'[12], 'अलेख'[13], 'अमानी'[14], 'अगज'[15], 'अक्षर'[16]

'स'—'सकाज'[17], 'सलौन'[18], 'सजोग'[19], 'सतोलि'[20], 'साकुल'[21], 'सजोर'[22]

'अन'—'अनमानत'[23], 'अनमिल'[24]

अन्य—

'वे'—'वेहद'[25]—विदेशी

'धा'—'धाभाई'[26]—राजस्थान—अलवर, जयपुर—मे प्रचलित शब्द (धातृ+बन्धु)

ये उपसर्ग कई प्रकार का कार्य करते प्रतीत होते हैं—

१. विलोम अर्थवाची—

'औ'—'औ'+'गुण'> 'औगुण'[27]

'अन'—'अन'+'मानत'> 'अनमानत'[28]

'अ'—'अ'+'सेष'> 'असेष'[29]

'वि'—'वि'+'जोग'> 'विजोग'[30]

२ उत्कर्षसूचक—

'सु'—'सु'+'नाम'> सुनाम'[31]

'अति'—'अति+'मति'> 'अतिमति'[32]

'अधि' ~ [अव] ~ [अध]+'राज > 'अधराज'[33]

---

१ छ० स० २८६। २ छ० स० २८६। ३. छ० सं० ११०। ४ छ० स० १२७। ५ छ० सं० १००। ६ छ० स० १२१। ७ छ० स० २। ८. छ० स० ६। ९. छ०स० ३२। १० छ०स० २। ११ छ०स० ६। १२ छ०स० २। १३. छ० स० २। १४ छ०स० ५१। १५ छ०स० ८८। १६ छ०सं० १। १७ छ०स० १०। १८ छं० स० १२१। १९ छं०स० ४४। २०. छं०सं० २२१। २१ छ०स० १०। २२. छं०स० ३४। २३ छं०स० १०५। २४ छं०स० २०४। २५ छ०स० १०८। २६ छ०सं० ४३७। २७ छ०स० ३८५। २८ छं०स० १०५। २९ छ०स० २४२। ३० छ० स० ३२२। ३१. छ० स० १००। ३२. छ० स० २। ३३. छं० स० २८६।

३. आत्पवाचक—

'अप' 'अप'+'भाय' > 'अपभाय'[१]

४ विशेषताद्योतक—

'प्र' 'प्र'+'ताप' > 'प्रताप'[२]

'वे' 'वे'+'हद' > 'वेहद'[३]

५. स्थापनाबोधक—

'स' 'स'+'गाजि' > 'सगाजि'[४]

६. अपकर्षसूचक—

'दुर्' 'दुर्'+'जन' > 'दुर्जन'[५]

'दुर' 'दुर'+'जन' > 'दुरजन'[६]

प्रतापरासो में प्रयुक्त कुछ प्रत्यय

रूप-तत्त्व मे प्रत्ययो का महत्त्वपूर्ण स्थान है। इनके द्वारा शब्दो का रूप निर्माण होता है और किसी भाषा-विशेष का निश्चय करने मे महत्त्वपूर्ण सहायता मिलती है। प्रतापरासो मे अनेक प्रत्यय प्रयुक्त हुए हैं, उनमे से कुछ प्रमुख प्रत्ययो की सोदाहरण सूची नीचे दी जा रही है—

'अत'—'कहियत'[७] 'बतैयत'[८], 'मिलेयत'[९], 'चहियत'[१०], 'सुनैयत'[११]

'अन'—'चलन'[१२], 'भिरतन'[१३], 'लरन'[१४], राषन'[१५]

'अनि'—'दुलहनि'[१६]

'आई'—'लराई'[१७], 'पाई'[१८]

'आत'—'बागात'[१९], 'महलाति'[२०] 'आत' ⌐ [आत], [आति]

'आन'—'हीदवान'[२१], 'तुरकान'[२२]

'आन'—'मुगलान'[२३]

'आनी'—'हिंदवानी'[२४], 'तुरकानी'[२५]

'आनी ⌐ [आनी], [आणी]

'आणी'—हिदवाणी'[२६]

---

१. छ० सं० २२४। २. छ० स० ४७। ३. छं० सं० १०८। ४. छं० सं० १०३। ५. छं० स० ६१। ६. छ० स० १६६। ७. छ० सं० २१०। ८. छं० स० १०। ९. छ० स० २१६। १० छ०स० २१६। ११. छ०स० ३१०। १२. छ० सं० ९१। १३. छ०स० ३३८। १४. छ० सं० ३५। १५ छं० स० १८३। १६. छं०सं० १५३। १७ छ०स० १८९। १८ छं०सं० ३३८। १९. छं०स० १४०। २०. छ० सं० १४०। २१. छ० सं० २१५। २२. छ०स० २१५। २३. छ० स० ३४०। २४ छं०स० १४४। २५. छ०स० १४४। २६ छ० सं० १४४।

'आरि'—'मझारि'[1], 'मझार'[2] 'आरि' ∽ [आरि], [आर]

'आण' ∽ [आण], [आणा]

'कमठाणा'[3], 'कमठाण'

'इय'—'हमारिय'[4], 'तुम्हारिय'[5], 'उचारिय'[6], 'धारिय'[7]

सर्व०+'इय', √+'इय'

'इया'—'लालिया'[8], 'चीनिया'[9]

'ई'—'दिषणी'[10], 'धनो'[11] ~ 'धणी', 'फिरई'[12], 'अरबी'[13], तुरकी[14], 'षदारी'[15]

'एस'—'पदमेस'[16], 'वषतेस'[17], 'इद्रेस'[18], 'मगलेस'[19]

'ऐ'—'ठामै'[20], 'मुकामै'[21], 'निकासै'[22]

'ओत'—'बलवधोत्त'[23], 'मानसिहोत'[24], 'सूरसिहोत'[25], 'षगारोत'[26], 'चत्रभुजोत'[27]

'अत'—'कोकत'[28], 'धरत'[29], 'गहरत'[30], 'टरत'[31], 'पणवंत'[32], 'उबरत'[33], 'महुमत'[34], 'उरडत'[35]

'क'—'पूजक'[36], 'धायक'[37], 'पायक'[38], 'दायक'[39]

'का'—'राजधरका'[40]

'की'—'बलकी'[41]

'ग' ~ [ग], [इग]

'जाचग'[42], 'जाचिग'[43]

'च'—'करिहैच'[44]

'जादा'—[जादा][45], [जाद][46]

'जुलषानजादा'[47], 'षानजाद'[48]

---

१ छं० सं० २१३। २ छं० सं० २५६। ३. छं० स० १४४। ४. छं० स० ६८।
५ छं० स० ६८। ६ छं० स० ६३। ७ छं० सं० ४। ८. छं०स० १८७।
९ छं०सं० १८७। १०. छं०सं० ४०। ११ छं०स० १२४। १२. छं०सं० २०८।
१३ छं०सं० ३८२। १४. छं०स० ३८२। १५ छं०स० ३८२। १६. छं०स० १८१।
१७. छं०सं० ४६३। १८. छं०सं० १३०। १९ छं०स० १३०। २०. छं०स० ३७।
२१. छं०सं० ३६७। २२ छं०स० १९। २३ छं०सं० ३६२। २४. छं०स० १०३।
२५ छं०स० १०३। २६ छं०सं० ३६२। २७. छं०सं० १०३। २८. छं०स० २२५।
२९. छं०सं० १३१। ३०. छं०स० २८३। ३१. छं०सं० १३१। ३२. छं०स० २५२।
३३. छं०स० ४१४। ३४ छं०सं० २५२। ३५. छं०सं० ४१४। ३६. छं०स० २५२।
३७ छं०स० ४१४। ३८ छं०स० ११८। ३९. छं०स० २५१। ४० छं०स० ११२।
४१. छं०सं० २७३। ४२. छं०स० १८१। ४३. छं०स० २९८। ४४. छं०सं० ३२७।
४५ छं०सं० १५५। ४६. छं०सं० ४२०। ४७. छं०स० ११८। ४८. छं०स० ४२०।

'त'—'अनमानत'[1], 'जोत'[2], 'आवत'[3], 'ढोरत'[4]

'देका'—हमीरदेका'[5]

'धर'— मरुधर'[6] ~ [मुरधर][7], [मोरधर][8]

'धारी'—'धरमधारी'[9]

'न'—व्याइन'[10], 'परचन'[11], 'मिरचन'[12]—क्रिया+/न/

'दलन'[13], 'देलन'[14], 'कानन'[15], 'परवानन'[16]—संज्ञा+/न/

(एक वचन संज्ञा+न=बहुवचन संज्ञा)

'नु'—'मुगलानु'[17]

'व'— आयव'[18], 'बुलायव'[19], 'ध्यायव'[20], 'गहिव'[21], 'कीनव'[22]

'यत'—'बिछायत'[23]

'ये'—'वतराये'[24], 'बतलाये'[25]

'यो'—'चढ्यो'[26], 'बहुरचो'[27], 'बढ्यो'[28], 'कह्यो'[29]

'रा'—'अधारी'[30]

'रु'—राजरु'[31]

'वत'—'वाकावत'[32], 'बीकावत'[33], 'कीतावत'[34], 'नाथावत'[35], 'कुभावत'[36], 'धीरावत'[37], 'राजावत'[38]

'वाई'—'पेषवाई'[39]

'वाज'—'समरवाज'[40]

'वाट'—'उलटिवाट'[41], 'रजवाट'[42]

'वार'—'रपवार'[43]

'वारो'—'अमावतिवारो'[44]

१. छ०स० १०५। २. छं० सं० ११२। ३. छं०सं० १२१। ४ छं०सं० १३४। ५. छं० स० १२१। ६ छं० स० ६०। ७ छं० सं० १०७। ८ छं० स० १०८। ९ छं० सं० १६३। १० छं०सं० १५०। ११. छं०स० ७७। १२ छं०सं० ३२५। १३ छं०सं० ३४३। १४ छं०स० १०३। १५ छं०सं० १३५। १६ छं०सं० १९६। १७ छं०स० १९६। १८ छं०स० २६१। १९. छं०सं० २६८। २० छं०सं० १४५। २१ छं०सं० ३२५। २२ छं०सं० ६। २३. छं०सं० ३८०। २४. छं०सं० २१५। २५ छं०स० १०७। २६. छं०स० १७३। २७. छं०स० १३१। २८. छं०सं० ११०। २९ छं०सं० १९९। ३०. छं०स० ११९। ३१ छं०स० ३८२। ३२ छं०सं० ११४। ३३ छं०स० ३६२। ३४. छं०सं० ४५६। ३५ छं०स० २८१। ३६. छं०स० १२६। ३७ छं०सं० १०३। ३८ छं०सं० १०३। ३९ छं०स० १०३। ४०. छं०स० १८०। ४१ छं०स० ८१। ४२. छं०स० २७२। ४३ छं०सं० १७६। ४४. छं०सं० २८९।

'वारे'— 'आमेरवारे'[1]

'वोत'—'पचियाणवोत'[2], 'कलियानवोत'[3], 'सुरतानवोत'[4]

'वंति'—'गर्भवति'[5]

'स'— अनेक उदाहरण (पद-पूर्ति प्रत्यय कहा जा सकता है)

सञ्ज्ञा+/स/ 'गोलास'[6], 'मत्रीस'[7], 'नामस'[8]

सर्वनाम+/स/ 'मेरीस'[9]

विशेषण+/स/ 'त्रतीयेस'[10], 'भारीस'[11]

क्रिया+/स/ 'पूछीस'[12], 'थपेस'[13], 'भनियेस'[14]

अव्यय+/स/ 'पाछैस'[15], 'अगैस'[16], 'अैसेस'[17]

'हार'— कीनहार'[18]

'हारो'—'करनहारो'[19]

विदेशी—

१. 'आत'—बहुवचन द्योतक 'वागात'[20], 'महलात (ति)'[21]

२. 'वाज'—रुचि लेने वाला 'समरबाज'[22]

३. 'आन'—बहुवचन द्योतक 'मुगलान'[23]

४. 'जादा'—अपत्यवाचक 'जुलषानजादा'[24]

संबंधित के अर्थ में—

१. 'आन'~'वान' 'हीदवान'[25] 'तुरकान'[26]—(पुल्लिंग)

२. 'आनी' 'हिंदवानी'[27], 'तुरकानी'[28]—(स्त्रीलिंग)

३. 'ई' 'दिषणी'[29], अरबी'[30], 'षदारी'[31]

४. 'ओत' अपत्यवाचक 'षगारोत'[32], 'बलबधोत'[33], 'चत्रभुजोत'[34]

५. 'वत' ,, 'बाकावत'[35], 'कीतावत'[36], 'नाथावत'[37]

---

१. छं० सं० ६७। २. छं० स० १८१। ३ छं० स० १०३। ४. छं० स० १५२। ५ छं० स० ८। ६ छं० स० २३३। ७ छं० स० ४७। ८ छं०स० ४१६। ९. छं०स० १०५। १० छं०स० २६। ११. छं०स० १३८। १२ छं०सं० १०। १३ छं०स० ७। १४. छं०सं० २१५। १५ छं०सं० २४६। १६ छं०स० ३५५। १७ छं०स० ५६। १८ छं०स० १६३। १९ छं०स० १६३। २०. छं०स० १४०। २१. छं०सं० १४०। २२. छं०सं० ८१। २३ छं०स० ३४०। २४ छं०स० ११८। २५ छं०स० २१५। २६ छं०सं० २१५। २७ छं०सं० १४४। २८ छं०सं० १४४। २९. छं०सं० ४०। ३०. छं०सं० ३८२। ३१. छं०स० ३८२। ३२ छं०स० ३६२। ३३ छं०सं० ३६२। ३४ छं०सं० १०३। ३५. छं०स० ३६२। ३६ छं०स० २८१। ३७. छं०स० १२६।

६. 'वोत' अपत्यवाचक 'कलियाणवोत'[1], 'पचियाणवोत'[2], 'सुरताणवोत'[3]

७. 'वारे' ,, 'आमेरवारे'[4]—बहुवचन

८ 'वारो' ,, 'अमावतिवारो'[5]—एक वचन

९. 'का' ,, 'राजधरका'[6], 'हमीरदेका'[7]

आधुनिक 'सिंह' के स्थान मे—

१ 'एस'—'पदमेस'[8], 'वषतेस'[9], 'इंद्रेस'[10], 'मगलेस'[11]

कर्ता—

१ 'क'—'पूजक'[12], 'घायक'[13], 'पायक'[14], 'दायक'[15]

२. 'वार'—'रपवार'[16]

३ 'हार'—'कीनहार'[17]

४. 'हारो'—करनहारो'[18]

---

१. छं०स० १०३। २ छं० सं० १८१। ३ छं० सं० १५२। ४. छं० सं० ९७। ५ छं० स० २८९। ६ छं० सं० १८१। ७ छं० सं० १२१। ८ छं० सं० १८१। ९ छं०सं० ४६३। १०. छं०सं० १३०। ११. छं०सं० १३०। १२. छं०स० १२८। १३. छं० सं० २५१। १४. छं० सं० ११२। १५. छं० स० २७३। १६. छं० सं० १७६। १७ छं०सं० १६३। १८. छं०सं० १६३।

॥ श्री ॥

जाचीक जीवरण कृत

प्रताप-रासो

॥ श्री गरणेशाय नमः ॥ अथ प्रताप रासो[1] लिष्यते[2] ॥

दोहा : गवरि[3]पुत्र गरणराज कैं, प्रथमहि लगुं पाय।
देवी दीनदयाल गुरु, सुभ अक्षर समझाय ॥[१]

छप्प† : जय जय गरणपतिदेव देव सेवत सुभकारिय।
नमो शकति नारायरण परम गुरु-चररण प्रछालिय ॥
अगम अलेख अपार कौरण पावंत पार नर।
अति मति मो अनसार वुधितम कररण विमल वर ॥
कर जोर जुगल विनती करो[4]‡ ल्यो निवार आग्या लहो।
निगम सुगम हौं[5] नृपति के कथि प्रतापरासो[6] कहौं ॥[२]

दोहा[7] : ज[8] दिन न्याय नोवति वजी, उभजे पातिलराव*।
कीन मित्र सुषकंद है, दीन सत्रु सिर दाव ॥[३]

छप्प तास तात के वंधु कवर मंगल व्रत धारिय।
जिन दीनो बल हुकम कहो कवि ग्रंथ उचारिय[9] ॥

१ (ख) रागो। १ (ख) लीखते। ३ (क) गौरि। ४ (क) करौ। ५ (ख) हो। ६ (ख) रासौ। ७ (ख) दोहो—कही 'दोहा', कही 'दोहो' दोनो रूप इस प्रति मे मिलते हैं। ८ (ख) जा। ९ (ख) उचारिये।

†'छप्पय' के लिए 'छप्प', 'छप' आदि रूप ही दोनों प्रतियों मे मिलते हैं।

‡राजस्थान मे 'ओकारान्त' और 'औकारान्त' दोनो रूप मिलते हैं। यथा कौन, कोन, और, ओर– इनका यह रूप मौखिक मात्र है, लिखित मे आजकल एक ही रूप चलता है। जिस समय यह प्रति लिखी गई, उस समय समवतः इनमे भेद नहीं किया जाता था।

*प्रतापसिंह – इस रासो के नायक। इनके सबध मे विस्तृत विवरण अन्यत्र देखें।

अठारैसैं सैंतीस साष[†] संवत सो ह्वैयत।
पोष मास वदि तीज वार विसपत गुरु कहियत॥
चौपई[१] छंद दोहा छपै कथि जाचिग जीवन नाम है।
जुगम जोय वरनन करूं[२] जो कूरमकुल[‡] ठाम[*] है॥[४]

दोहा. आदि अजुध्या धाम[३] है, रामचंद्र अवतार।
लंकापति रावण हन्यो[४], लई न छिनक अवार[५††]॥[५]

छंद पधरि. लगी न छिनक येको अवार।
दस आठ पदम पतिसेन लार[‡‡]॥
उमराव चरण अंगद धीर।
सुग्रीव जाम्र हणवत वीर॥
कीनो[६] विहंड सों दसौं सीस।
लीने उपारि सो भुजा वीस॥
कर जोर भभीछन[**] गहिव वोट।
वकसेस लंक सो वनी कोट॥
अैसेस होय रघुनाथ पाट।
थपेस लंक वहुरचौं स ठाठ॥
राकसां[+] देव वरने विरुघ।
जीतये[७] राम[८] रघुवंस युघ॥[६]

---

१ (ख) चौपैई। २ (ख) करु। ३ (क) (ख) घाम—लिपिकार की असावधानी। ४ (ख) हत्यो। ५ (क) (ख) अवतार। ६ (क) कीन्हौं। ७ (ख) जीतये। ८ (क)(ख) राम।

---

†रियासतो में रियासती संवत् की तिथियाँ अलग हुआ करती थीं। उदाहरणार्थ, जयपुर मे भादवा सुदी २ से सवत् शुरू होता था।

‡कछवाहे राजपूत।

*स्थान, आदिस्थान।

††'अवार' पाठ (मेरे द्वारा)—जिसकी पुष्टि अगली पक्ति द्वारा होती है।

‡‡'पदम अठारह यूथप बंदर'—तुलसी : रामचरितमानस। लार—पीछे (राजस्थान में अति प्रचलित)।

**विभीषण।

+राजस्थानी प्रयोग। पुस्तक की भाषा प्रमुख रूप से ब्रज प्रभावित है। परम्परा कुछ ऐसी थी कि काव्य के क्षेत्र मे ब्रजभाषा और राजस्थानी को ही लिया जाता था, किन्तु क्षेत्र विशेष के प्रभाव से बचना कवि के लिए संभव नहीं होता। भाषा के इसी रूप को कुछ लोग 'पिंगल' कहना पसंद करते हैं।

दोहा : जीते राजा राम रण, आये नगर निवास।
ता पीछे[1] दसरथ-सुत, दिये सीत बनवास[2] ॥[७]

चौपाई[3] : राम राज आग्या यों कीनी। ता पहुचावन[4] लछमन दीनी ॥
गर्भवंति सीता संग होई। ता तजि बंधि गए वन जोई ॥[८]

दोहा . अति व्याकुल सीता सती, परी महा बन ठाम।
ता बन यक तपसी तपत, बालमीक रिष नाम ॥[९]

छप्प : साकुल हिरनन[5] सैल कीन रिष बालमीक वनि।
लषि कमला द्रग जान आन पूछीस वात[6] जनि ॥
को पुत्री को तात कौंन तेरे पति कहियत।
वचन बोल मुष जोय होय सो मोहि वतैयत[7] ॥
वोलीस सीत सुनि हो पिता, जनक तात पहचानिये।
सुत चार राज दसरथ के, तिन दीरघ† पति जानिये ॥[१०]

दोहा . सुनत वचन रिष सीत के, संग लै गये तास।
दई राषि रिषनीन‡ संग, वन घन ग्रहै निवास ॥[११]

चौपाई सीता रहत सवन संग सोई। उपजे पुत्र जुगल जग जोई ॥
लव कुस[8] नाम रहै वन भ्राता। बालमीक गुरु विद्यादाता ॥[१२]

दोहा जो विद्या[9] जितनी[10] पढी, बालमीक गुरु कीन।
निपुन होय गुण गण जिते, जथा जोग परवीन ॥[१३]

दोहा बीते वन द्वादश वरष, सीता रहत सुठान।
आई फुरमाई* अवधि, जब रिष वूझे राम ॥[१४]

---

१ (ख) पीछै। २ (क) (ख) 'वनवास'। ३ (क) (ख) चौपई। ४ (ख) पहचावन। ५ (ख) साकूल हिरन मै। ६ (ख) बीन। ७ (ख) वतयत। ८ (क) कुश। ९ (ख) बिद्या। १० (ख) जीतनी।

---

†उनमे बड़े—राम। जाचीक जीवण ने भी भारतीय नारी से पति का नामोच्चारण नहीं कराया है।

‡ऋषिपत्नियो के अर्थ मे प्रयुक्त। रिषि पु०, रिषनी स्त्री०, रिषनीन स्त्री०, बहुवचन।

*फुरमाई—अलवर मे अब तक इसी रूप मे प्रयुक्त—फुरमाओ, फुरमाइए आदि रूप चलते हैं —फरमाओ, फरमाइए आदि कम सुने जाते हैं। फुरमाई का एक अर्थ राजस्थान मे, 'विधि आदेश' भी होता है। यहाँ 'फुरमाई' का यह अर्थ उपयुक्त है—जब 'विधि-निर्दिष्ट' समय आया।

चौपाई किसी होय सीता हित सोधो। रिषि[†] वोले[१] विधि या विधि वोधो॥
छोड़ो सावकरण[‡] सजि सोई। सुत तुमरो पकरैंगो सोई ॥[१५]

दोहा सुनत राम रिष के[२] वचन, सावकरण सज कीन।
गयो बाज वनवास मैं, ते लव कर गह कीन ॥[१६]

दोहा पीछै पिलिये रामदल, अरु संग लछमण[३] भ्रात।
किये तास वनवास मैं, समैं जुध सुत तात ॥[१७]

दोहा सुत सीता लै आवियै, राज अजोध्या[४] राम।
ता पीछे[५] अब वरन हौं, कूरम कुल के ठांम ॥[१८]

छप्य कुस वसाय कसमीर राज रोतस रोतासैं[*]।
सिवर अप ग्वालेर नल-स नरवल निकासैं॥
द्यौसा ईसैंसिघ राज काकिल आंवावति[६]††।
हणू तास वति होय[७] जाणि जनरस हणवत[८]‡‡॥
भये तास[९] पजवन सुत दसहौं दिसि भूपति बलन।
धरा ढुंढाहड़[+] तास के भये मलैसी अरि-दलन ॥[१९]

दोहा : राज मलेसी सुत भये, बीजलराव वषान[१०]।
राजदेव तिनके भये, सुत कील्हनदे जान[११] ॥[२०]

दोहा : राजअस[१२] कूतिल भये, सुत जोनसी नरेस।
उदैकरण तिनके भये, पुत्र चत्र[++] परवेस ॥[२१]

१(ख वोले। २ (क) × । ३ (क) लछिम। ४ (क) अयोध्या। ५ (ख) पीछै। ६ (ख) अवावति। ७ (ख) होय। ८ (ख) हणवत्त। ९ (ख) तेस। १० (ख, वषान। ११ (ख) जान। १२ (ख) राजाअस।

---

†यह 'रिषि' वसिष्ठ आदि हो सकते हैं।

‡श्यामकर्ण घोडा।

*रोहतासगढ से अभिप्राय हो सकता है। 'राज रोतस' का अर्थ 'राजा रोहिताश्व' से लगाया जा सकता है।

††कहा जाता है—आमेर की स्थापना सवत् १०३७ मे हुई और अम्बिकेश्वर महादेव के कारण आंवावति—आमेर आदि नाम पडा।

‡‡काकिल का पुत्र हणू हुआ, और हणू का पुत्र 'जनरस' (जान्हड़) को जानना चाहिए।

+जयपुर प्रान्त — यहीं की भाषा ढूंढाड़ी कही जाती है।

++उदयकरणजी के चारों ही पुत्र प्रसिद्ध हुए और इसीलिए इन चारों के नाम यहाँ दिए गए हैं।

छप्प : प्रथम पुत्र नरसिंह नृप[1] ग्रामैरि वषानिय।
वीयो[†] पुत्र वरसिंह थान मोजाद सु जानिय॥
वालो त्रियो सुनाम ठाम ग्रमरसर ग्रषिय।
सिव चोथो सिवब्रह्म ठाम नीदरगढ़ दषिय॥
सुत चतर भये नृपराज के, ठाम नाम गुन वरनिये।
पति ग्रामैरि नरसिंह नृप, मोजादि[‡] राव वरसिंह किय॥[२२]

दोहा : सुतस राव वरसिंह के, हुयो[२] राव महराज।
नर नषत्र तिनके भये, कुल को करन समाज॥[२३]

दोहा : नरु राव सुत राव भये, ठाम जाज (जास) पर लाल।
उदोराव(लुहारं)सुत लाडषां, भाक भनत फतमाल*॥[२४]

दोहा : रिधूराव रावा-तिलक, तरण तेज परवाण।
हुये[३] राव फतमाल[††] सुत, कुल-मंडण कलियाण॥[२५]
पूजत भुज जयसाहि नृप, संगि सबल दल पाण।
मारि लिये मावास मे, कामां राव कल्याण॥[२६]

छंद त्रोटक : काम कल्याण[४] कोपे इम राज।
लिये दल बादल संग समाज॥
किये फिरि रासत[५] को पैमाल।
जिये मिलियेस गये विचि काल॥
फबै गज बाज किलै गढ़ कोट।
घणै उवरंतस ग्रावत वोट॥
थरु थटिये सकला कमठाण।
नरु जस जुग प्रवाण वषाण[६]॥[२७]

---

१ (ख) न्रप। २ (ख) हुवो। ३ (ख) हुवे। ४ (क) कलियाण। ५ (ख) एसत। ६ (ख) वषांन।

---

† दूसरा।
‡ इतिहास से प्रमाणित होता है कि वरसिंह को मोजमाबाद ग्रादि ८४ गांव प्रदान किए गए। यह स्थान फागी के पास है।
* 'लुहारं' शब्द छन्द मे नहीं लगता। 'लाडषां' मुगलों का दिया हुग्रा नाम था, वैसे इनका नाम लाडसिंह था। चौथे चरण का ग्रर्थ स्पष्ट नहीं है।
†† फतमाल का ग्रभिप्राय 'फतहसिंह' से है। 'मल' 'माल' का प्रयोग 'सिंह' के स्थान पर काफी मिलता है—'सूरजसिंह', 'सूरजमल', 'ग्रषैसिंह', 'ग्रषमाल' ग्रादि।

दोहा . वषाण राव कलियाण के, स्याम धरम-सुध भाव।
ले कामा दे नृपति कौं, राज राजगढ़ राव[1] ॥[२८]

छंद राजै राजगढ पति राव। गज बाजि चवरा[2] चाव[2] ॥
हनूफाल : लड़ी लंगस फोजा पाण। जगबंध को कलियाण ॥
ते तास पुत्रस पच। वोर अरावो पर अंचां[†] ॥
अणदेस भुज अमरेस। षत्री षोहरै परवेस ॥
त्रतीयेस ईसरसिंह। पलवास धर पै धींग ॥
चौथे सुरीपट स्याम। पेषिये पाडै ठाम ॥
पाचमै सोधरस जाण। पाई प्रतछ वषाणि ॥
जिन दाडिये धर देस। तिन पाट पण अणदेस ॥
सुत हुये तेजल-राव। दनि षाग दाषणि दाव ॥[२९]

दोहा : तेजल के तिहु सुत भये, राजकरण रिष सीव।
राव स जोरावर भये, बंधू जालिम भींव[3] ॥[३०]
दोहा : जालम भीव सुजुग हुये[4], नरू-ज मोटे‡ नाव।
जोधामालिस जगत मैं, वीजवाडि गढ ठाम ॥[३१]
दोहा : धजवंधी ध्रम धारिये, जोरावर जग जाप।
उपजे मोवतसिंह सुत, तप-पूरण परताप ॥[३२]

छप्पय : तप-पूरण परताप भोमवर रच्यो विसंभर।
अरनि कंस रविवंस पाटपति नरू नृपति नर ॥
वलनि भीम वलवान कहर किरवान स डडन।
करण स्याम[5]* के काम सोस सत्रुन के षंडन ॥

---

१ 'राज गढपति राव'। २ चव्रा चाव्। ३ (क) भीम। ४ (क) हुअ।
५ (ख) स्याम।

---

†अर्थ स्पष्ट नहीं है।
‡'मोटे' का अर्थ राजस्थानी मे वड़ा अथवा महत्त्वपूर्ण होता है। इस पुस्तक में कुछ शब्द तथा ध्वनियां राजस्थानी हैं, अलवर की प्रचलित वोलचाल की भाषा मे भी यही वात देखी जाती है।
*'स्याम' शब्द स्वामी का द्योतक है। यहां 'स्याम' का अभिप्राय आमेर-नरेश से है।

प्रतापराव रावा-तिलक, जानि नृपति[1] चाहत चित।
आमेर-धणी रघुवंस-पति, पूजत भुज माधव[†] नृपत ॥[३३]

दोहा : रहत नेन नरपत नगर, राजा राव सजोर।
समैयसी चाढ़े[2] नृपति, गढ उनियारै ठोर ॥[३४]

छप्पय : दलबल सबल समाज भूप भारै संगि लीनौ।
उनियारै गढ लरन कूंच[3] वर भोरहि कीनौ॥
माधव नृपति नरेश पेसि परताप राव नर।
मंत्री ते हरसाहि दलो छत्रीस तास वर॥
कुल कछवाहो तै सवै तारो और ठारस संगो।
किये कूंच दर कूंच दल उनियारै जुडयेस जगो ॥[३५]

दोहा : यत[‡] दल माधव नृपति के, करत जुध कर चाव।
नरू नाव सिरदार वत, गढपति गाढै राव ॥[३६]

छंद भुजगी : दुहू वोर वोडै अरावेस घुमै।
मनु इंद्र गजै अवजैस[4] भुमै[*] ॥
कटे सूर सथै वहै हथ वीरं।
लगी वान वंदूक तेगस तीरं॥
रची चौर यतै वतै राड भारी।
पनै राव परताप को आप धारी॥
वतै[5] देषियो तो किलो वंध ठामै।
इतै चाहिये सो कियो स्याम कामै॥
दिये[6] मोरछा जोड़ जो आप आगै।
लिये सथ संगे सोई अभंगै॥
किये जुध जो पै किलै मास दोई।
मिले भूप सौ राव सिरदार सोई ॥[३७]

---

१ (ख) नृप। २ (ख) चाढ़ै। ३ (ख) कुच। ४ (क) आवजस। ५ (ख) चनै। ६ (ख) दये।

[†] आमेर-नरेश माधोसिंहजी प्रथम—राज्यकाल सं० १८०७-१८२४।
[‡] यत—इधर; वत—उधर। इन्हीं से वतै, यतै (इतै); वती, यती।
[*] भुमै-भुम्मै, अवजै-अवज्जै।

दोहा : मिले राव सरदार नृप, अमावति नरनाथ।
कहैं वचन यौं स्याम सो, दीने आडे हाथ ॥[३८]

दोहा : कर सर उनयारो किलो, माधव नृपत सुनाम[1]।
आये अपदल राषि कै, रणतभवर[2†] गढ ठाम ॥[३९]

दोहा : नृप विछुरन अरदल रहन, होय धरा सो वात।
मिलि हाडा दिषणी सुदल, घरी भूप दल घात ॥[४०]

चौपाई : वत हाड़ा दिषणी चल आये। इत सुनतैं-स भूपदल छाये[3] ॥
मिले सार दल दोइ अकारे। परे षेत यत वत घन भारे ॥[४१]

दोहा : लरे राव परताप रन, देषत सब दल साथ[4]।
षड़ी षेत किरमाल कर, तव[5] चोसर[6] हद हाथ[7] ॥[४२]

दोहा : स्याम[8] लाज के काम सौं, किये राव परताप।
हद भटवारैं हथ भये, जोसु[9] सुनी नृप आप ॥[४३]

दोहा : वडो[10] भूप माधव नृपति, राजा राव‡ संजोग।
कीनी ते करतार रचि, वरनो वहोरि वियोग* ॥[४४]

दोहा : भुजा दाहिनो भूप की, वैसत पातिलराव।
ता पर नाथावत रतन, धरेस दूजे दाव ॥[४५]

दोहा : कियो क्रोध पातल प्रबल, को नाथावत रतनेस††।
येक न दूजो होयसी, यो माधव सुनी नरेस ॥[४६]

छ्ंद पधरि . सुनिईं-स बात माधव सुजान।
कहिईं-स वचन वरि या सुजान ॥

---

१ (क) (ख) नृपसुनाव। २ रणतभँवर। ३ (क) ध्याये (धाये पाठ ठीक रहता)। ४ (क) सथ। ५ (क) तद। ६ (क) वोसर। ७ (क) हथ। ८ (क) श्याम। ९ (क) जो। १० (ख) वडे।

---

†रणतभवर, रणस्तभवर, रणथभोर आदि नामों से विदित।

‡राजा—माधवनृपति, राव—परताप राव।

*दोनो का अलग होना।

††नाथावत रत्नसिहजी—उदयकरणजी की पाँचवीं पीढी मे पृथ्वीराज हुए, जिनके १९ पुत्रों मे से १२ के वश चले—जो 'बारह कोठड़ियों' के नाम से प्रसिद्ध हुए। नाथावत इन्हीं मे से थे। रत्नसिहजी राणी तँवरजी के पुत्र थे, जो अपने अन्य तीन भाइयो—पूर्णमल, भीमसिह और आसकरण सहित अलग-अलग स्थानों के राजा बने। सामोद, चौमूं, अलीराजपुरा आदि इनके ठिकाने थे।

सुनिईस राव चरचा सुनाम।
बोलिये आप यह ठाम काम॥
कीनो करूर[†] माधव नरेस।
तजि दीन ठाम पातल प्रवेस॥
डेरास राजगढ़[१] ठाम दीन।
मंत्रीस बंधु सब बोलि लीन॥
बोले सु राव सब सुनत साथ[२]।
रिसये सु राव आमैरिनाथ॥
बोले सु बंधु मंत्री उचार।
परताप राव यह सला धारि॥
लरिया सुनृपति सो कथै लोग।
टरया सु स्यांम सौं यहै जोग॥
स्याम-द्रोह आगै न कोई।
कलियारण वंस सौ यह न होय॥[४७]

इति परताप-रासो जाचिग जीवरण कृत वंस-वर्णन तथा नृप-विजोग नाम प्रथमो प्रभाव ॥१॥

द्वितीय प्रभाव

दोहा : मिलि मत्री बंधू[३] सवै, कीनो वचन उचार।
देस त्याग अब दीजिये, और न कछू[४] विचार॥[४८]

छप्प : सुनी राव परताप आप तेही मनमानो।
कीनौ तै परवान कूच की तब ही ठानी॥
बजे नाद त्रमाट ठाठ रजपूत वाज सज।
रथ डोला रणवास लिये तव[५] सबै संग सज॥
तज थान चले ततकाल ही, स्याम धरम को होय बस।
हनवंत[‡] थान गिरवर[६] निकट कीने मुकाम परथम[७] दिवस॥[४९]

दोहा : कर मुकाम परथम दिवस, किये राज दरबार।
बोले पातल पाट पत, बंधू होयस लार॥[५०]

---

१ (ख) राजगड़। २ (ख) सथ। ३ (क) बंधु। ४ (क) कछु। ५ (क) सब। ६ (क) गिर। ७ (क) प्रथम।

[†] क्रूर।
[‡] संभवतः यह स्थान आधुनिक खेड़े के हनुमानजी के पास रहा हो।

छंद भुजंगी :
सुनी ठाठ अमरेस कै पाट[१] पत्ति[२]† ।
नरु नाव विसनेस है वड रती ॥
सुनै ईस[३] रावत चैनम प्रवेसं‡ ।
सुनी सुत्त वेसो अषा* ईंद्ररेस ॥
सुनि सामतन ते तो रुद्र प्रवानी ।
कहूं भाव वुधिस्यंह अरजै[४] अमानी ॥
सुनै लार दरबार तन जोधवारे ।
कहू नाव दुर्जन[५] स भारथ भारे ॥
सुनै सुत्त जालिम के जुग जोई ।
वैरीसाल मान विजैगढ़ सोई ॥
सुनै वात हमीर[६] तेहि सिधारै ।
काका कहिये राव परताप वारे ॥
सुनै[७] सूर सावंत महमत्त भारे ।
सुनै गोड राठोड[८] रजवंस सारे ॥
करै जुवाव वंघू यसोराव अंगी ।
कला वंस सोई सवै आप संगी ॥[५१]

दोहा .
सज यतनी संगी भये, सकल वंस चित चाय ।
भिन भिन वरनन करो, ठाम नाम गुन गाय ॥[५२]

छप्प :
ठाम षोहरा नाम, ठाठ अमरेस पाट भनि ।
भये तास सुत तीन, करण, दुल्है, मोहन गिनि ॥
करगु षौहरै प्रगट, गढ दुलैसिह जानौ ।
छतो[९] छिलोहडि ठाम, नाम मोहन नहि छानो ॥
करणा सुत जसवत भये, वंधू जालिम[१०] जानिये ।
जुगम जोय वरनन करू, मत उनमान वषांनिये ॥[५३]

---

१ (ख) पाठ । २ (क) पति । ३ (ख) इस । ४ (ख) अरजन अमानी ।
५ (क) दुरजन । ६ (क) समीर । ७ (ख) सूनै । ८ (ख) राठोरी ठोड़ ।
९ (ख) छत्तो । १० (क) जामिल ।

---

†'ट्ट', 'त्त' पाठ अधिक उपयुक्त है ।
‡ईकारान्त पाठ अधिक उपयुक्त है ।
*अखा, अषा दोनों प्रचलित हैं, जिसका अर्थ अक्षय या पूर्ण है ।

दोहा : दूजै दुलैसिंह सुत, छाजूसिंह सुभाल।
मोहन सुत संतोष वड, सालिम बंधु पुसाल[1] ॥[५४]

छंद भुजंगी : सजे ठाठ अमरेस के पाटपत्ती।
जसावंत जानौ विसन वडरत्ती ॥
भुज बंधु[2] लारै भवानो उमंगै।
चढै वाघ भगवंत सिवदानस्यंघै ॥
सजे साथ संतोष वातै प्रवानी।
सजे संग छाजू† सहाथै अमानी ॥
चले जानि कै वास के लोग कंपे।
तिनै राषनै हेत जालिम थपे ॥[५५]

दोहा : जालिम थपे षोहरै, ठाम राखने हेत।
सवै राव संगी भये, ते परवार समेत ॥[५६]
पलवा ईसरसिंह वत, चैनसिंह परवेस।
सुत जुग ले संगी भये, अषैसिंह इदरेस ॥[५७]
जुग जालिम के[3] राजई, वैरीसाल समान[4]।
वर विजोग संगी भये, तज्यो वीजगढ थान ॥[५८]
कहियत[5] पाडै ठाव पर, राजै सुरियद स्याम।
नाथूसिह तिनके भये; बंधव माधव नाम ॥[५९]
सजसु[6] नाथूसिह तव, भावसिह संग जानि।
माधव सुत[7] बुधसिह भणि, अरजन बंधु वषाणि ॥[६०]
पाई ठाव सु जोध भणि, ता सुत सुषधर धीग।
ता सुत वंधव सजिये, दुर्जन भारथसिंह ॥[६१]
चत्र ठाम[8] के बंधु सब, सालिम उतरे आय।
पंचम कहिये पाटपति, पातल कूच बजाय ॥[६२]
प्रथम नगारै बाज सज, विये सस्त्र कसि सूर।
तीजै चढ़िये साथ सब, मझि पातिलपति नूर ॥[६३]

१ (क) षसाल। २ (ख) बध। ३ (क) कै। ४ (ख) सुमान। ५ (ख) कहित। ६ (ख) दो सजसु (दो-दोहा)। ७ (ख) सु। ८ (क) ठाव।

†छाजूराम हल्दिया का संकेत है।

छंद पधरि :

किलके नकीव† कीनी तमाम।
दिसि दोय[1] दीठि होती सलाम॥
भुज दाहिनीस बंधू वषानि।
बाईस भुजा सब सेनि साथ॥
पछैस राज रणवास लीन।
आगे जलेब‡ कुतिल स कौन॥
गहरै त्रमाट तासन अनंग।
फहरै निसान पचरंग रंग॥
सजै सुरंग सब सथ* हद*।
रुद हय[2] षुरासु निलगी गरद॥
पहौंचे सु जाय जावली ठाम।
डेरा[3] सु ढाल कीने मुकाम॥[६४]

दोहा :

ढलि डेरा गढ़ जावली, पातिल उतरे जाय।
तहां राजत गर्जसिंह बत, मिले धीर बंधु धाय॥[६५]
मिलि धीरज बुझै बचन, पातिल सौ यक आत।
देसपति तजि देस कौ, सजी सेन कहां जात†† ॥[६६]
फुरमाये पातिल वचन, सुनौं धीर यक बात।
कोप्यो है माधव नृपति, अनजल जहां ले जात॥[६७]

छप्प :

सुनिये राव प्रताप आप यक[4] अरज हमारिय।
रहिय दोय निसि च्यारि गांव यह ठांव[5] तुम्हारिय॥
कर पयाण परभात नृपति माधव पै जैहौं[6]।
जोरि जुगल कर जोइ होय सो भूपहि कहहौं[6]॥

---

१ (ख) दोय। २ (क) यह। ३ (क) डिरा। ४ (क) इक। ५ (ख) गाम।
६ (ख) हौ।

---

†प्रत्येक राज मे 'नकीव' होते थे, जो राजा के आगमन आदि को घोषित करते थे।
‡जलेव का अर्थ घेरे से होता है। घेरा बना लिया जाता था। भवनों से घिरा होने कारण ही जयपुर मे 'जलेब चौक' आज भी इसी नाम से प्रसिद्ध है।
*सथ्थ, हद्द—उच्चारण करने से उचित पाठ; इसी प्रकार सज्जै आदि।
††टॉड का कथन है कि प्रतापसिंह के चले जाने पर उसके स्थान पर खुशहाली राम (षुशाली हल्दिया) नामक एक व्यक्ति को माचेरी का सामन्त बनाया और नन्दराम को जयपुर दरबार मे इनके स्थान पर नियुक्त किया। खुशहालीराम आगरे का प्रधानमंत्री भी रहा। प्रतापसिंह (जयपुर) की अनेक प्रकार की सहायता करने पर इन्हें 'राजा' की उपाधि प्राप्त हुई।

जो नृप रषै सब रहै नहि संगि सब ली लीजिये।
धीर वचन यम उचरि जो कछु चितै सो कीजिये ॥[६८]

दोहा : फुरमाये[1] पातिल बचन, धीर रहों यह ठाम।
काम परै ग्रामैरियै, मिलि हौ पातिल नाम ॥[६९]

छंद हनूफाल : धीरज सीष सु ठांम। दीनी सु पातिल नाव ॥
ततकाल[2] कूच बजाय। चलिये सु सेन सुभाय ॥
मुकाम दो मझ[3] कीन। ब्रज निकट डेरा दीन ॥
घर षवर पहौंची जाय। को भूप उतरे ग्राय ॥
तहां इंद्रपुर सो ठांम। तन नगर[4] दीघ सुनाम ॥
ब्रजराज सूजा[†] राज। सब सेन सुभट[5] समाज ॥[७०]

दोहा : मंत्री बुलाय महाराज कै, यौ पूछी ब्रजराज।
उमराव राव ग्रामैरि कै, भेजे है किह काज ॥[७१]

चौपाई : बोले मंत्री वचव सुनाये। कर वियोग भूपति सूँ[6] ग्राये।
को नृप रषै तापै रहै। नाहि चले दिली दिस जहै ॥[७२]

दोहा : मंत्री छाजूराम सो, बूझत बोले बैन।
सुनि ग्रवाज ब्रजराज[7] ही, ग्राये पातिल लैन ॥[७३]

छंद नाराच[8] : ग्रवाज ब्रजराज ही। सुनंत ले समाज ही ॥
चढ़े सु पातिल दिसी। मिले सु ग्रान हो सुषी ॥
बचन बोलि वायकं। कहो सकाज लायकं ॥
रहो सु जानि[9] के धरा। यहां वहां न ग्रंतरा ॥[७४]

दोहा : रषि पातिल ब्रजराज ही, सूजा गये सु ठांम।
ता पीछे पातिल मिले, नगर दीघ निज नाम ॥[७५]

---

१ (ख) फुरमाय। २ (क) तन। ३ (ख) दोयम। ४ (ख) तनग। ५ (क) सुमर। ६ (ख) सू। ७ (ख) वृजराज। ८ (क) (ख) नाराज (घोपत्व के ग्रनुसार च-ज में ग्रौर क-ग मे बदलने की प्रवृत्ति देखी गई है। यथा जाचिग— (जाचीक)। ९ (ख) सजान—उस ग्रवस्था मे पद पाठ इस प्रकार हो सकता है— 'रहोस जान'।

---

†सूरजमल—भरतपुर नरेश। सूजा, सुजानसिंह, सूरजमल ग्रादि नामो से विख्यात थे। शासन-काल सवत् १८१३ १८२० वि०।

चौपाई : अति महिमा मनहारस† कीनी। आदर सौं उठ आयस दीनी ॥
निजर वाजि व्रजराज कराये। वंधु-वंधु सिरपाव सजाये ॥[७६]

दोहा : भांति-भांति व्रजराज ही, साधे सब विधि कांम।
परचन को धन दरव दिये, राज लोग यक ठांम ॥[७७]

छप्प : नगर सु डहरा‡ नाम, ठाम कहियत अति भारिय।
महल बाग बाजार[1], ताल तर सुगढ सुढारिय ॥
वरण[2] च्यारि मभार, वैश्य छत्री ब्रह्म सूद्र।
ते दीनो व्रजराज, जानि कै नरू नृपति नर ॥
सुषधाम ठाम विलसे सबै, राज लोक सेना सहित।
रहन राव परताप की, सु रहै राज व्रजराज जित ॥[७८]

दोहा : किते कोट अटके कटक, किते किये रण जंग।
सूरजमल व्रजराज के[3], जित-जित पातिल संग ॥[७९]

छंद वेषरी : जुध कीने किते। मारि दीने फते ॥
राव पातिल नरू। जानियो जो सरू ॥
राज सूजै कही। आप हयै सही ॥
कान कह है नही। तेग दीनी दई ॥
भूप दूजी भुजा। जानियो नै दुजा ॥[८०]

दोहा जान न दूजो[4] और कोऊ, पातिल सो रण सथ।
समरवाज* सूजै कही, देषे हलवर हय ॥[८१]

छप्प समै येक व्रजराज साजि सब सेन सुभर भर।
कर पयान परभात कूच वजे†† दिली†† पर ॥

---

१ से २ तक का पाठ (क) प्रति मे नही मिलता—प्रतिलिपि करने मे छूट गया होगा। ३ (क) ते। ४ (क) दूजी।

---

†राजस्थान में 'मनुहार' करने का रिवाज आज भी है।

‡भरतपुर जिले मे डहरा नाम से अब तो एक छोटा-सा गाव मात्र है—किसी समय यह स्थान सैनिक महत्त्व रखता था।

*समर अर्थात् युद्ध मे बाज के समान।

††वज्जे, दिल्ली पाठ करना उपयुक्त होगा।

लिये लार दल सबल वार सूजा सत्तापति ।
गगन सूर छति छये दिसौहै वासर कीरत ॥
मजलहि मजलहि मुकाम करि डेरा सु दीन जमुना सु तट ।
रुहला नजीम दिली समझि पहोंची अवाज ते ता निकट[1] ॥[८२]

दोहा : कही नजीम सुत ही षवर, जो कछु करै सु दीन ।
सूरजमल व्रजराज सौ, जुध येक मैं[2] कीन ॥[८३]

चौपाई : वार येक व्रजराज सुभाये । छड़ी सेन† लै सहज सुधाये ॥
सुनि नजीम[3] फौजै चढ़ आई । कुरुछेतर मधि राड[4] मचाई‡ ॥[८४]

छंद भुजंगी
रची राड कुरुषेत्र दल दोय जुटे* ।
इतै राज व्रजराज नजीम छुटे ॥
बहै गोल गोला तुपकै सु अछी ।
बहै तीर तलवार बानै वरछी ॥
कटै सूर सावंत महमंत भारी ।
घरी नाहि पछै टरै नाहि· टारी[5] ॥
यसी जानि कै आप सूजा स बोले ।
है रे कोऊ†† या वार यौ बैन बोले ॥
सितावी षवर फौज मैं जाय दै हो ।
बली राव परताप है बेग लै हो ॥
सुनै कौन की को वहा जान हारो ।
यतै व्रजराजन कीनो हकारो ॥
पडै सीस पै सीस दल दोउ जाके ।
गिरै षेत सूजा गये सुरग लोके ॥[८५]

---

१ (ख) निकर। २ (ख) येकम। ३ (ख) तजी। ४ (ख राव। ५ ख) टारे।

---

†थोड़ीसी सेना।

‡सम्वत् १८२० मे सूर्यमल ने दिल्ली पर चढ़ाई की। जिस समय वे थोडे से लोगों के साथ शिकार खेल रहे थे, इन पर आक्रमण किया गया—बहादुरी तो बहुत दिखाई, किन्तु संख्या मे कम होने के कारण वीरगति को प्राप्त हुए।

*अनेक शब्दों को द्विवर्ण के रूप मे पढ़ना होगा—जुट्टे, नज्जीम, छुट्टे, तुपक्कै, अच्छी आदि। युद्ध-वर्णन में यह आवृत्ति बहुतायत से होती है।

††आधुनिक प्रयोग—अरे कोई है ?

दोहा : सुजा गये सुरलोक मभि, चढे सार रणधार।
बैठे ते व्रजराज के, तिलक तेज जौंहार[1] ॥[८६]
तुरका लोधी तिमरलग, अब हिंदवाणी वार।
व्रज देसा में उपज्यो, जगमग जोति जौंहार ॥[८७]

छप्य : जगत जोत जोहार वार अर पार अमल किय।
पारसि सो परवार लार[1] त्रिय लपि सेन लिय ॥
कूटि भदावर[2] देस लूट लीनी सब लछ्धण।
गजि अगज गढपती हांक सु किते सत्रु हनि ॥
तात वयर ततकालहि नाये तिही नजीम नर।
जग उद्योत जौंहार हुय सूरजमल सुत व्रजधर ॥[८८]

दोहा : सूजा सूत जौहार जग, गाढँ जोर गरूर।
दीघ ठाम निज व्रजधर, सेन सुभर भरपूर ॥[८९]

इसो जाणी व्रजराजई, मुरधर[3]‡ हुडँ मोड।
विजैसिंह षत[4]* भेजिये, जोहार जोग राठोड़ ॥[९०]

छप्य : षत भेजे राठोड़ मोड मुरधर सजोग लिखि।
दिसा तीन वस कीन धरा आमैरि चत्र दषि ॥
आ नसंक तजि संक है सुनि लीने मोरिय।
तुम सामिल हम होय चलै जित तित यक डोरीय ॥
विजराज* लिषी व्रजराज कौं षत वंचत कीजो चलन।
दीपदान आ देषियों हम तुम पहुकर†† मिलन ॥[९१]

दोहा : षत वचत व्रजराज के, व्रजराज जोहार।
धर आमैर मै देषिहौ, कहे बचन इक वार ॥[९२]

---

१ (ख) × । २ (क) भधावर। ३ (क) सुरधर। ४ (क) (ख) दोनो प्रतियो मे 'ष' मात्र है। समाधान अगली पक्ति से हो जाता है।

---

†जवारसिंह—जो सूरजमल के पश्चात् भरतपुर के राजा हुए। इनका शासनकाल सं० १८२० से १८२५ है।

‡मरुधर—मारवाड़ का संकेत। भरतपुर और मारवाड़ मे सम्बन्ध अच्छे थे।

*विजैसिंह (विजयसिंह) जोधपुर नरेश। राज्यकाल सं० १८०९ से १८४४ वि०।

††पुष्कर।

छप्प : कर जोंहार दरबार बोलि यो बचन उचारिय।
कर पयान परभात धरा पछिम ससि धारिय॥
साजि सूर गज वाजि सबल[1] दल सेनि सुभर भर।
चढ़े दाय रण चाय सार समय निरभै नर॥
अरावै अवाज लै इंद्र गज प्रथम नगर मुकाम किय।
प्रताप जोगि जौंहार लषि हलकारा हथ षत दिये॥[९३]

दोहा : कोके पातिल राव पै, षत जौहार संजोग।
घर आमैरि मै देषि हौं, आगै हरवल होय॥[९४]

चौपाई . जोग जवाहर षत लिषि दीनी। ते पातिल कर कागद[2] लीनी॥
वंचत क्रोध कियो अति भारी। लियो लोन ता ऊपर डारी॥[९५]

दोहा : पता छता मनि अपमता, अमावति भुज आव।
वल वंधू ता नृपति के, लिषये आप जुवाव॥[९६]

छद भुजंगी : लिषे[3] जोग जोहार कौं ज्वाव दीनी।
चले देस तापै भली बात कीनी॥
दिना[4] च्यार या व्रज को लौंन[5] खायो[6]।
नाहीं करू देस ह्याई[7] दिषायो॥
तजो धार[†] सोही तजोगे न जोई।
हमै देस आमैरि की सीष होई॥
हमै जानियो बंधु आमैरि वारे।
तमै[‡] देखनों ठाम सोही विचारे॥
कहीजो[‡] अगै आह मारैस सथै।
वहां आवते देषि हरवल हथै॥[९७]

---

१ (क) सब। २ (क) कागल। ३ (क) लिषि। ४ (क) ×। ५ (ख) लौंने। ६ (ख) पायो। ७ (क) खाई।

[†]मत्स्य देश मे 'धार' का अर्थ सशस्त्र शत्रु-पक्ति भी होता है। सन् १९४७ की मेवात वाली 'धार' को बहुत-से लोग अब तक न भूले होगे।
[‡]तमै, कहीजो आदि राजस्थानी प्रयोग।

दोहा : हरवल मो हथ देषियो, देषत दिस आमैरि।
पातल लिष जुवाव षत, चढिये तव तिह वेर ॥[६८]

छप्प : चढ़े राव परताप आप सव सेनि सुभर सजि।
करन स्याम के काम गाव डहरा[1] सुठाव तजि ॥
वजि त्रमाट वीराट[2] ठाठ गजराज वाजि हद।
चले धाय रणचाय आप[3] आमैर वैर[4] वदि ॥
इत चलिये पातिल प्रवल जव चलिये जोहार वति।
पहोकर जोहार वीजराज[†] मिलि मिलि पातलि आमैरपति ॥[६६]

इति परताप-रासो जाचिग जीवण कृत द्वितीयो प्रभाव ॥२॥

तृतीय प्रभाव

दोहा : मिलि पातलि आमैरपति, माधव नृपति सुनाम।
वंधु जानि आसन दिये, लिये दाहिनी ठांम ॥[१००]

चौपाई : नरेस पेसिले यो फुरमाये। वंधु वेर तुम वंधु जनाये ॥
आत जवाहर सुध वा घर की। लायक पता लाज वा घर की ॥[१०१]

दोहा : पातल कही नृपराज सो, कितो जट जोहार।
यहै[5] पाट रघुनाथ को, पाट लषन दल लार ॥[१०२]

छंद पधरि[6]: परताप राव यो अरज कीन।
नृप माधवेस यो श्रवण लीन ॥
नृप आप राज मंत्री बुलाय।
हरसाहि पेस गुरुसाहि आय ॥
राजरु हमीरदे का स सोय।
दला सुभूप मोसलि होय ॥
दरवार पूजि सदासिव भट।
जोड़ीस आणि रघुवंस थट ॥

१ (क) (ख) वडहरा। २ (क) विराट। ३ (ख) ×। ४ (ख) वेर।
५ (क) यह। ६ (ख) छप्परी।

[†] विर्जसिंह, व्रजराज, विजराज, वीजराज—राठोड़-नरेश का नाम कई प्रकार से लिखा गया है।

मरदान भानसिंह[1] होत ठाम।
कीरतसिंह[2] विक्रन सु नाम॥
नर नरू पाटपति पताराव।
सारीष वियो सरदार चाव॥
सेषा समंथ नवलेस वीर।
स्योब्रह्महरा[3] सिरदार धीर॥
षगारोत करणेस न्याय।
नर नाथवंत[4] रतनेस आय॥
पंचान ठाम कहिये षुस्याल।
कुमारण[5] चादसी सत्रुसाल॥
रजधार राज[6]वत है दलेल।
कालियानवोत अरि दलन पेल॥
सुरतान चत्रभुजोत चाय।
वर वलवधोत[7] जोरिय सु आय॥
कीतावत कहिये सु ठाम[8]।
कुंभावत सूरसिंहोत नाम॥
रजधार राजधरका स जोय।
धर धीरावत कहिये[9] सु सोय॥
जोगी कछवाहा भाखवोत।
कहिये हमीरदेका स जोत॥
नृप माधवेस दरबार दीप।
जोड़ेस जंग यतने[10] समीप॥
रघुवंस राजई जिते ठाठ।
नित तिलक भूप माधव स पाट॥
जिन हुकम येक दीनो सगाजि।
मंत्री सुवंधु सब सुनि समाज॥
आयो जवाहर करकै टेक।
बोलिये जुध कीजिये सु येक॥[१०३]

१-२ (ख) 'होत ठाम। कीरतसिंह'—इतना पाठ नही है। ३ (क) व्रह्मरा। ४ (ख) वत। ५ (ख) कुमाहरण। ६ (क) सज। ७ (क) धोत। ८-९ (ख) प्रति में 'सु ठाम। कुभावत सूरसिंहोत नाम॥ रजधार राजधरका स जोय। धर धीरावत कहिये'—पाठ नही है। १० (क) पतने।

दोहा : सुनै राव उमराव सब, मंत्री सुनै सु अँन।
हुकम कियो माधव नृपति, मत्री[1] अरज सु दैन॥[१०४]

छप्प यो मत्री हरसाय आप यक अरज सु कीनिय।
धीरज के नृप जुध आदि आसा लग लीनिय॥
वह नोकर तुम नृपति[2] क्रोध कापै यह कीजिय।
केते[3] सेनपति संगि हुकम काहू यक दीजिय[4]॥
अरज येक मेरीस यह जो नरेस सुनि लीजिये।
भेजि सदासिव भट कूं अनमानत जुध कीजिये॥[१०५]

दोहा . नृपति वचन हरसाय[5] के, किये पेस परवान।
भट सदासिव भेजिये, जो जोहार पै जान॥[१०६]

चौपाई : नृपति हुकम डेरा भट बाहर। सो अवाज सुनि श्रवण जवाहर॥
मिलि मुरधरपति भटसो बतराये। सामहि समरथ लैंन पठाये॥[१०७]

दोहा : भटन लिये वेहद दलन, मोरधर[†] पति की ठाम।
जहां आनि जवाहर मिले, किये पूजन परनाम॥[१०८]
यत जोहार विराज वत, दल दरवार सु ठट।
मिल माझी पूछे वचन, बीच सदासिव भट॥[१०९]

छन्द पधरि : कहिये जोहार किम किये आंन।
विजराज मिलन पहोकर सनान[‡]॥
उचारे बैंन जौंहार जोय।
तुम जानि जान अजान होय॥
सजि रार्जासिह कीय गंग-न्हान।
जो कीन दीघ वहोरयो स आन॥

१ (ख) इस प्रति मे 'मत्री' से लेकर 'नृपति' तक पाठ नही है। इस प्रकार की असावधानियाँ (ख) प्रति मे अनेक है। ३-४ (ख) प्रति में यह पूरी पंक्ति नही है। ५ (ख) हरसाहि।

† मरुधर।
‡ (१) विजयराज मिलन, (२) पुष्कर-स्नान।

जिन हुकम नृप के कहे ग्रेन।
प्रवान परगना दोय दैन॥
प्रगना येक कामां[1] सुठाम।
दूजैंस षोहरी[1] कहत नाम॥
जो कीन ग्रान मैं यही कजि।
लैहोस सोय जैहो न भजि॥[११०]

दोहा : तेज बचन जौंहार के, कहे वचन भट धीर।
मिलिये[1] माधव नृपति सौं[2], सदा तुम्हारो[3] सीर॥[१११]

छप्प : ग्रापक तुम्हरे तात सदा पायक[2] वा घर के।
सूरजमल वदनेस[*] भूप कीनौं पति घर के॥
जोई होय जौंहार लैन सोही चलि लीजै।
कहो ग्राप समभाय स्याम सौं[4] द्रोह न कीजै॥
वीचि पाडि व्रजराज कौ, वाजी भिडत न पायगो।
जोडत माधव नृपति दल मोल जवाहर जायगो॥[११२]

---

१ (क) मेलये। २ (क) सु। ३ (क) तुहारी। ४ (क) सु।

---

[1]कामा ग्रौर खोहरी दोनों भरतपुर जिले मे हैं।

[2]सूरजमल ग्रौर जयपुर-नरेश के सवध वहुत ग्रच्छे रहे थे। सर्वदा ही सूरजमल जयपुराधीश का सम्मान करते रहते थे ग्रौर वदले मे उन्हें भी स्नेह प्राप्त होता था। कहा जाता है, जव सवाई जयसिंह ने एक वृहद् यज्ञ किया, तो पुत्र के स्थान पर सूरजमलजी का ही ग्रभिषेक कराया था। जवाहरसिंहजी से इतना न हो सका। इसका कारण, कहा जाता है, उनके भाई नाहरसिंह की स्त्री थी, जिसे जवाहरसिंह प्राप्त करना चाहते थे ग्रौर जो माधोसिंहजी की शरण मे चली गई थी। सूरजमल के लिए किसी ने प्लेटो ग्रौर किसी ते यूलिसीज की उपाधियाँ दी हैं ग्रौर इनके राज्य का विस्तार ग्रागरा, धौलपुर, मैनपुरी, हाथरस, ग्रलीगढ़, इटावा, मेरठ, रोहतक, फर्रुखनगर, मेवात, रिवाड़ी, गुडगांव ग्रौर मथुरा तक वताया गया है। इन्हें ग्रपने समय का सर्वोत्कृष्ट योद्धा ग्रौर योग्यतम शासक कहा गया है। दिल्ली को फतह करने के ग्रवसर पर जव थोड़ी-सी सेना लेकर ये शिकार करने गए हुए थे, तब वलोचो ने धोखे से इन्हे मार दिया। इनका उठाया गया कार्य इनके पुत्र जवाहरसिंह द्वारा पूरा किया गया।

*भरतपुर के महाराज बदनसिंह, राज्यकाल सं० १७२२—१७५६ ई०। वैसे तो इनके २६ पुत्र थे, किन्तु इनमे चार प्रमुख थे—१. सूरजमल २. शोभाराम ३. प्रतापसिंह (वैर वाले जो वहुत ही साहित्य-मर्मज्ञ थे तथा जिनके दरवार मे सोमनाथ, कलानिधि ग्रादि प्रसिद्ध कवि रहते थे) ४ वीर नारायण। इनके १६ पुत्रो की संतानें चलीं, जिनकी १६ कोठरियाँ स्थापित हुईं—ये कोठरीवंद ठाकुर कहलाते हैं।

दोहा : यो सुनतै भट के वचन, बोले जो जोंहार।
यहां नृप दे दोय प्रगना, कै कर जुध क वार ॥[११३]

छंद सो सुनत वचन सुभट। जोरे जवाहर जट ॥
हनूफाल : तव नृपति पै षत दीन। ते वंच भूपति लीन ॥
उमराव मन्त्री बोलि। उचार श्रीमुप षोलि ॥
कहिये सलह सु होय। मंगै प्रगन जट दोय ॥
राजरु अरज़ दिनि आनि। द्यो महाराज नौकर जानि ॥
नृप[1] कहे वचन सुभाय। देग्र न देंइ जो हरसाय[†] ॥
मंत्री सुनत बोले जोज। ये लाइ मन द्यौ यक पोज ॥
उपजी लिषत षत उर हूक। षत्री षत किये दो टूक ॥[११४]

दोहा : षत्री मंत्री नृपति के, हरदरषन[2] हरसाहि।
जुध करन उर धारियो, भट षत बोलि पठाय ॥[११५]
जो अवाज विजराज[‡] सुनि, भट वहोरन परवान।
सेन राषि जोंहार सगि, कियो देस दिसि जान ॥[११६]

चौपाई : इत नृप नगर सुभट जु आये। वत जोहार दरवार कराये ॥
वोल सुनासो यो सवही कों। करौ जुध जो राषन जी को ॥[११७]

छप्पय : करन जुध जोहार वार सला मिलि कीनिय।
पेस चत्र चोहान देस समरु[*] सग लीनिय ॥

---

१ (ख) प। २ (ख) हदरपन, (क) हैदरषन।

[†] मंत्री हरसाहि की ओर संकेत है।

[‡] विजैसिंह।

[*] भरतपुर का प्रसिद्ध तोपची समरु और वेगम समरु इतिहास-प्रसिद्ध हैं। समरु का मूल नाम वाल्टर रैनहार्ड था। इसका जन्म सं० १७७७ तथा मृत्यु सं० १८३५ वताये जाते हैं। यह फ्रांस के एक जहाज मे खलासी होकर आया था। पाडीचेरी मे जहाज को छोड़कर सौमर्स नाम से वह सेना मे भरती हुआ। कुछ लोग उसे सौम्ब्रे भी कहते थे। इसने कई स्थानों पर काम किया—जैसे पाडीचेरी, ईस्ट इंडिया कम्पनी, अवध, बंगाल आदि। यह भरतपुर तथा जयपुर राज्यों की सेवा मे भी रहा और उसके वाद शाह आलम के वजीर नजफखाँ की सेवा में चला गया। वहां मे उसे सरधना का इलाका जागीर मे मिला। यहां इसका, महल-जैसा, निवास-स्थान था, जिसमे अब स्कूल लगता है। इसने काश्मीर मे रहने वाली जेवुन्निसा से विवाह किया, जो वेगम समरू के नाम से प्रसिद्ध हुई। वह भी एक लडाका स्त्री थी तथा सैन्य-संचालन मे दक्ष थी। (डा० मथुरालाल शर्मा द्वारा दिए गए एक व्याख्यान के आधार पर)।

पूजक किरपाराम ठांम बैठे थिर प्रोहित।
चत्रसाल संग भाल हाल गुरु रामकिसन जित॥
पठाण सेष सैयद[1] मुगल जुलाषानजादा सजब।
जुद्ध वचन जौहार के कहै सुने दरबार सब॥[११८]

दोहा : जव जुहार कर सब सों, ...[2] सला लीन।
जुरनि जंघ आमेरी दिसि, बहुरि कूच तै कीन॥[११९]

चौपाई : धके धके जोहार जुध प्रवानैं। जो नृप षवर सुनी दै कानैं।
भूपति भर दरबार कराये। मंत्री सब उमराव बुलाये॥[१२०]

छन्द पधरि : वर कौन भूप दरबार दीप।
उमराव[3] जोय मंत्री समीप॥
कर क्रोध बोलि माधव नरेस।
जति किती जट तकिहै स देस॥
षत्रीस बोलि हरसाहि नाम।
करि हो सु होय जो स्याम काम॥
कर जोर अरज गुरुसाहि कीन।
हरसाय[4] पेस गुरुसाहि[5] लीन॥
बोले सुराव परताप चाय।
जुरुहो स रारि[6] न्यारो सु जाय॥
बोल्ने दलेल करि काम नेक[7]।
महाराज निमष की वेर येक॥
नर नाथावत रतनेस बोलि।
जिन करन जुध को वचन षोलि॥
राजरु हमीरदेका स जोय।
बोले सु वात होनी सु होय॥
नृप बधु मानवत जो सुनीत।
कीरतसिंह विक्रमादीत॥

---

१ (ख) सैइद। २ (क) (ख) दोनो प्रतियो में ये शब्द नही हैं। ३ (ख) उमरा।
४ (ख) हरसय। ५ (क) गुरुसहि। ६ (ख) रारी। ७ (क) नेम।

करनेस बोलिये पगारोत।
सुनिहो स आप नृप जुध होत॥
वोले सु चाय चौहान रान।
अजमेरसिंह कहिये समान॥
जो आवत देस जौंहार कौन।
करिहौं स जुध सरिहै सलौन[1]॥[१२१]

दोहा : मिलि मंत्री उमराव सव, समर सला सव कीन।†
दे वीड़ा माधव नृपति, जुव हुकम जव[2] दीन॥[१२२]

छप्प : वोलि भार भंडार दारू गोली गलान वटि।
झिलभ वगतर टोप वोप सामंत सूर जटि॥
चिलते पापरि तुवक वान कमान वरछिय।
तीर तरगस वाज करन किरमालस अछिय॥
संग दिये अरावा इंद्र गज असी सहस नर वाज सजि।
करन[3] जुध जोहार सौं नृपति[4] दलन वर वंब वजि॥[१२३]

दोहा : चाढे[5] दल जैपुर धनी, चढि पछिम दिसि धाय।
दलनायक षत्री किये, मंत्री ते हरसाहि[6]॥[१२४]
नरू नषत्र कुल पाटपति, स्याम सुधरन सुभाव।
भारे रघु भुज दाहिनी, कीनी पातल राव॥[१२५]

छन्द हनूफाल : वाई वोर[7] वंधु ओर। सो कछावह कुल को ठोर॥
चत्र भुजोत सेषसींह। षाग षागारोत अवीह॥
सुरतानवत सुर इंद्र। पचारणवोत समंद॥
वलभद्रवोत सो वलवंत। नाथावत मन महमंत॥
कलियारणवोत स धीर। का वाकावत वीर सधीर॥
राजावत सो रण रूप। कहिय मानवत वंधू भूप[8]॥
सव चढ़े सेन समाज। चौहान जादम राज॥

---

१ (क) ललौंन। २ (ख) ×। ३ (ख) करन कर। ४ (क) नृप। ५ (क) वाटे। ६ (क) (ख) रहसाहि। ७ (ख) ओर। ८ (ख) वंध।

---

†यह पूरी पंक्ति (ख) प्रति में नहीं है।

सीसोद हाडा सोइ। उभट [सुभट] षीची जोय ॥
दलवल सबल संग लीन। नदी[†] निकट डेरा दीन ॥[१२६]

दोहा : असी सहस नर वाजि सगि, सेना सुभर अनंत।
कीये डेरा नदी निकट, माधव दल महमंत ॥[१२७]

छप्पय : जोय बात जोंहार आत ततकाल सुनी तब।
जोडि जूथ दरबार सथ सावंत सूर सब ॥
अैनि बोलि मुष बैन आप समीर सु नायक।
कर नर टक नृप कटक धाय सूधे धकि आयब ॥
सुनि उमराव जोंहार के जुध सलह सब दीन गजि।
चढ़ि पैदल सामोस धकि वर वीरट त्रमाट बजि ॥[१२८]

दोहा : चढ़े जोर जोहार धरि, कियो दलन दिस आन।
सो दल माधव नृपति के, पहोची षबर प्रवान ॥[१२९]

छंद भुजगी : बजे फेर[1] नृप के दल में नगारे।
चढ़े सूर सावंत महमंत भारे ॥
पहले पिलै सो पताराव सथै[2]।
बहे जाय जोई हरवल सथै ॥
जानै जवाहर जो है नरूको।
अरावै हुकमै दिये आगि ठूको ॥
लगै संग की सेन गोन्ना गरकै।
नरूराव[3] के पचरंगै फरकै ॥
होये धाय पांय सिरदार दोई।
कवर नाम मगलेस इंद्रेस दोई ॥
पीछे जुरे जाय सेना समाजै।
समै नाव उमराव हरसाहि राजै ॥
रच्यो मावडे[‡] खेत दल दो विरुधं।
वतै जट जोंहार दल भूप जुधं ॥[१३०]

---

१ (ख) वेर। २ (ख) थै। ३ (ख) परूसव।

---

†सभवत. वाण गगा।
‡जयपुर के ३० निर्णायक युद्धों मे से यह भी एक है। इस प्रसंग मे Thirty decisive Battles of Jaipur by Shri Narendra Singh of Jobner पठनीय है।

छंद मोतीदाम[I] :

उर उर सो नर[1] सोहै उछाह।
नर नर नेम लियो षग वाह॥
भर मर माचि रही दल दोय[2]।
सर सर सेल पडै भड होय॥
कर कर कायर रोम[3] सुकपि।
षर षर भोर लई सिर चंपि॥
गर गर वजी अरव[4] विरट।
घर घर घोरत तास त्रमट॥
नर नर नैंक न त्यागत टेक।
चर चर चंपत एक कूं एक[5]॥
छर छर होय छडा लस पार।
जर जर जोय वहै पग धार॥
भर झर श्रोन बहैत सुरंग।
नर नर रूप चढ्यो नर अंग॥
टर टर येक न येक टरंत।
ठर ठर ठीऊ सु पाव घरंत॥
डर डर त्यागि दियो दल दोय।
ढर ढर जो गज चामर होय॥
रण रण रचि रहो रण जंग।
तर तर तेग बहत अभंग॥
थक थक थाकियो रवि रथ।
दर दर टूट सूर सु मथ॥
धर धर तोवन के धम चक।
नर नर वाजि गजस गरक॥

१ (क) नरे। २ (क) दोई। ३ (क) सेम। ४ (क) गरव। ५ (क) येक।

[I]यहां कवि ने 'ॐ नमः सिद्धम्' के 'उ' 'न' 'म' 'स' से छंद पक्तियां आरंभ करते हुए सम्पूर्ण व्यंजनो से प्रारम्भ कर पक्तियां लिखी हैं। ङ, ञ, के लिए 'न' वर्ण का ही प्रयोग किया है, 'ण' को शब्द के अंत मे लिया है। तालव्य 'श' के स्थान पर 'स' है और 'ह' को छोड दिया है, 'ह' से आरंभ होने वाली पक्ति का दूसरा चरण नहीं मिलता, क्योकि वर्णमाला 'ह' पर ही समाप्त हो जाती है।

पर पर पेलिये दल वहक[1]।
फर फर ते पचरंग फरक ॥
बर बर षेत पड़े हरसाहि।
भर भर भट जोहार भजाय ॥
मर मर मांन पडे चहुवान।
यर यर अजमेरी[2] सुराण ॥
रर रर रण दलो पड़ि अवाज[3]।
लर लर लछमण कवार ॥
वर वर लागि पड़े गुरुसाहि।
सर सर सूर किलकित धाय ॥
षर षर षेत षीस्यो जोंहार।
सर सर नोवत नृपति दुवार ॥[१३१]

दोहा : बाजी नौवत नृपति दल, षिस्यो षेत जोहार।
आगे सेना सज कटक[4], गये भूप दल लार ॥[१३२]

चौपाई : गये जवाहर[5] नगर निवासै। म्हैलां[6] दीरघ भरत उसासै ॥
धन मिलि धरती बूझत असी। कहिये कंथ ढुंढाहर कैसी[†] ॥[१३३]

दोहा . जो जोंहार पछितात अति, वर वर ढोरत सीस।
आय भूपदल दीघ सूं, रह (दस) घटि कोस पचीस[‡] ॥[१३४]

छप्प : लीलई गाव सुठाम तहां छति छये नृपति दल।
जुध जीति वह भीति थाट वीराट फौज वल ॥

---

१ (क) हक, (ख) वहफ। २ (क) जमेरी। ३ (क) वाड। ४ (क) सजटक।
५ (ख) जवार। ६ (क) महैला।

[†]रानियो द्वारा राजा पर तीखा व्यंग है। आज का जयपुर प्रान्त पहले ढूंढाड़ नाम से प्रसिद्ध था। इसी से राजस्थानी की यहाँ वोली जाने वाली वोली का नाम 'ढूंढाढी' है। ढूंढाड यहां के एक प्राचीन स्थान का नाम था। वनेर नामक स्थान के पास ढूंढ़ नाम का एक प्रसिद्ध शिखर था, उसी से ढूंढाड नाम की उत्पति हुई। इसी शिखर पर अजमेर-नरेश वीसलदेव ने तपस्या की थी। यह तपस्या उसने अपने अत्याचारों के प्रायश्चित स्वरूप की थी।

[‡]जवाहरसिंह का डीग से पच्चीस कोस इधर तक पीछा किया।

तहां राव उमराव संगि सला मिलि कीजिय।
माधवेस नृप पेसि देसन षत दीजिय॥
जाय जोंहावर घर धर्यो कहये सो अब करन हम।
राजाधिराज आमेरपति दल नायक दीजे हुकम॥[१३५]

दोहा : षत वचे माधव नृपति, लषिये दल सुधि जोय[1]।
भाज्या ऊपर जाय ज्यो, छत्री धरम न होय॥[१३६]

दोहा : राजरु मोसल[†] राज के, दिये हुकम नृप जोय।
वहोरि कूच कीजे[2] पछिम, ठाम राजगढ होय॥[१३७]

छंद भुजगी : इसो राजसी को हुकम भूप होई।
वरै राव प्रताप सो राज[3] होई॥[‡]
जिनै व्रत घतै सु व्रजि देस त्यागे।
जुड़े जुध जौंहार सौं जाय आगे॥
धरै सीस सोही सरु स्याम लजै।
परै काम आमेरी को कौन कजै॥
जिसी ठांम जो राजसी जान कीज्यो।
हुकमै हमारो यही भांति दीज्यो॥
अमावती[4] राजगढ़ ठाम जोई।
तापै किला येक भारीस होई॥
इसो राजसी कूं हुकम भूप दीनो[5]।
लष ते षते वार दल कूंच कीनो॥
उठै भूमि की रैंणि फौजै अधेरा।
दिये राजगढ़ षेत जो जाय डेरा॥[१३८]

इति प्रताप-रासो जाचीक जीवण कृत मावडा जुध वर्णन त्रतिय प्रभाव ॥३॥

---

१ (क) (ख) जाय। २ (क) कीयो। ३ (क) राव। ४ (क) अमरावती।
५ (क) (ख) दीनू।

[†]मोसन—एक प्रकार का निरीक्षक। यह पद रियासतों मे अन्त तक चलता रहा।
[‡]राव प्रताप को युद्ध-सेवा और स्वामिभक्ति हेतु राजगढ़ प्रदान किया गया।

चतुर्थ प्रभाव

दोहा · थान जोड थिरथान है, राजा पातिल राव।
राजरु षेतन राजगढ़, गये चित करि चाव ॥[१३९]

छंद भुजंगी : गये राजसी दीठि दषी दरगा।
घनी वाय वागात तरु ताल जगा ॥
बनी मंदिरं गोष महलाति सोई।
वैंस उजलं वंस वाजार सोई ॥
लषै राजसी जो जते काम कामं।
कहो नाहि कीला† वडी ठाम ठाम ॥
दयो पातलराव सों वैन नीको।
बनै वौ तुमै है हुकम भूप ही को ॥[१४०]

दोहा · यसो[1] वचन कह राजसी, कियो कटक मै जांन।
नृपति हुकम पातिल लिये, किये पेसि[2] परवान ॥[१४१]

चौपाई पातिल राव यसी उर धारी। किला वनावन की यक भारी ॥
दीठि वोर चोकोरन दीनी। गिरनी‡ येक सुघर मन कीनी ॥[१४२]

दोहा . बाघराज की डूगरी, लषी सुघाट सुधार।
निकट नगर ता सिषर गढ, थपे पातल थार ॥[१४३]

दोहा पातिल कमठाणां किये, राज राजगढ[3] भाल।
हिंदवानी हद रषना*, तुरकानी सिर साल ॥[१४४]

छप्प . सम चौबीसै साल†† काल माधव महीप किय।
भैंचक‡‡ सो परि भोमि जोमि नर जिते सोच जिय ॥

---

१ (क) इसो। २ (ख) पिसि। ३ (ख) राजगढराज।

---

†'यहां किला नहीं है'—इसी हेतु प्रतापसिंहजी ने यहां किला वनवाया, जो आज तक देखा जा सकता है। ब.ग, बगीचा, महल आदि अब भी विद्यमान हैं।

‡गिरि का स्त्रीलिंग गिरनी—पहाडी।

*भूषण की सी राष्ट्रीय भावना।

††माधवसिंहजी का स्वर्गवास संवत् १८२४ मे हुआ और उनके उपरान्त पृथ्वीसिंह राजा हुए।

‡‡'भैंचक्का' (विक्षिप्त) प्रयोग व्रजदेश मे आजकल भी प्रचलित है।

तिही वार दल लार कोकि महाराव बुलायव।
सबै ठाम उमराव ध्याय आमावति आयव॥
नरपति निवास जुरिये[१] जुगल रघुवंसी अरैं पलक।
माधव महीप महाराज सुन पीथलि[†] सिर दिनो तिलक॥[१४५]

दोहा पीथल[२] सिर दीनों तिलक, करि रघुकुल के साज।
समरथ पातिल जानि कै, दई राज की लाज[‡]॥[१४६]

दोहा : तातकाल लुष सिर[३] तिलक, सुन्यो होत चहुँ फेर[४]।
दिली दषिण जोधपुर, बूंदी बीकानेरि॥[१४७]

दोहा : यो सुनि बीकानेर नृप, गजै[*] आप उर धारि।
पीथल है आमैर पति, दीजै ताहि कवारि॥[१४८]

चौपाई कनक काम[५] गज बाज सजाये। नेगी दे नालेर पठाये॥
प्रोहित चालि पयानो कीनो। नृप पीथल सिर टीको दीनो॥[१४९]

दोहा : ले टीको पीथल नृपति, कीनो चलन समाज।
व्याहन बीकानेर घर, आमावति के राज॥[१५०]

छप्पय. साजि वाजि गजराज सवल दल संगि भीर भर।
व्याहन बीकानेर चेरि चढिये नरेस नर॥
हदि नोवति नदि वजी गजि डंका त्रमाट घन।
रचे सुरंग सव संग राग छतीस गाय गन॥
हसतीस वैठि दिस सह[६] लिये कनक मोज कीनी सुकर।
मुकतान मोर सिर चवर ढुरि मनू[७] ईद्र उमग्यो सभर॥[१५१]

छंद पद्धरी : चलियेस राज पीथल नरेस।
नर नरू राव परताप पेस[८]॥

१ (ख) जुरव। २ (क) पीपल। ३ (ख) सेर। ४ (ख) फर। ५ (ख) कम।
६ (ख) दीस। ७ (क) मन। ८ (ख) येस।

[†]पृथ्वीसिंह— शासनकाल स० १८२४ से स० १८३४।

[‡]महाराज पृथ्वीसिंह (जिनकी अवस्था केवल ५ वर्ष की थी) आमेर के अधिपति हुए और राज्य की देखभाल और सचालन का कार्य राव प्रतापसिंहजी को दिया गया।

[*]महाराज गजसिंह (सं०१८०२ १८४४वि०)।

भुज दाहिनीस सजै सजोग।
भुज[1] बाम ठोर उमराव ओर[2] ॥
चत्रभुजोत सेषा सु संग।
कहिये षगारोत सो उमंग[3] ॥
नर नाथावत कलियाणवोत।
पीचारण स्योब्रह्मपोत ॥
कुंभाहरण सूरसिंहोत सोइ।
सुरताणवोत वलभदित जोय† ॥
संग जिते जोय रघूनाथ ठाठ।
तिन तिलक भूप पीथल सु पाट ॥
कीने कीतेक मजिलै मुकाम।
पहोचे सुजाय[4] वा नृपति ठाम ॥[१५२]

दोहा : पहोचे पीथल ता नगर, वीकावत नृप जोर।
वधि‡ तोरन[5] चौरी चढ़े, कर कंचन की मोर ॥[१५३]

चौपाई : प्रात होत पीथल दल आये। वरि दुलहनि भये रैस बधाये* ॥
जाचिग†† दसौं देस के आई[6]। आये जुड जाचन कू जोई ॥[१५४]

छप्पय : जाचिग आये जानि राव परताप आप नर।
स्याम लाज कै काज वाज धन दिये वंटि वर ॥
ताजो वाजी वरत[7] तेज तुरकी ज षदारिय।
वदि मोला वानत्त कछी कछी वड भारिय ॥

---

१ (क) भुम। २ (क) ओर। ३ (ख)स अमग। ४ (ख) सुचाय। ५ (क) तारन। ६ (क) आये। ७ (क) करत।

---

†चत्रभुजोत, षगारोत, नाथावत, कल्याणोत, पीच्याणोत, स्योब्रह्मपोत, कुंभारण, सूरसिंहोत, सुरताणवोत, वलभद्रोत आदि अनेक कछवाहीखापें।
‡तोरण मारना—विवाह की सुविदित प्रारंभिक क्रिया।
*रैसवधाये—राजघरानों की सुपरिचित प्रथा।
††याचक—मांगने वाले।

जिन जोरा[1] वागो[2] वने सुलतान सजिस जीय।
अस[†] अके जस तीन सै धनी राजगढ़ राव दीय॥[१५५]

दोहा : अमर नाव कीयो यसो, करै होड़ को और।
दल लाडा दोई दये, राजा राव सजोग॥[१५६]

दोहा दूलह[3] वर पीथल नृपति, संग कीरत वर राव।
रानि सवै उमराव सव, चढि आये कर चाव॥[१५७]

चौपाई व्याह भूप दिलि देस सिधाये। पीथल राव जयनगर आये॥
पातिल राव संग व्रत धारी। दीन पग(नेम) नृपति भुजभारी॥[१५८]

छप्पय : यसो राव परताप आप मति महाभीम वल।
स्याम धरम सुध भाव वदि वदित भूप दल॥
ही दल ता गजराज वाज रजपूत सेन भर।
चढ़े चवर वघ चाय[4] दाय अप[5] नरू नृपति नर॥
देषत और दीसै न को पता राव सम पटतरै।
दल आमैरा देस परि उमराव वंधु कित्ते घरै॥[१५९]

दोहा : अमावती सम राजगढ, नृप सो पातिल राव।
जवर[6] जानि राजरु दिये, हत नद गा के दाव[‡]॥[१६०]

चौपाई : सहल करन कू राव सिधाये। वहरचौ दिसि डेरन कू आये॥
मधि सत्रुन मिलि अैसी तोली। कियो कूर तकि दीनी गोली॥[१६१]

दोहा : दगेस पातिल राव पर[7], कियेस दुरजन हाथ।
सीस सहायक है सदा, लिये रषि रघुनाथ[*]॥[१६२]

छंद भुजंगी : लिये रषि रघुनाथ वर लोह लगे।
सुनी सथ सवै सु सोही उमंगे॥

---

१ (क) जोटा। २ (क) वामो। ३ (ख) ×। ४ (ख) चाप दाप। ५ (क) आप। ६ (ख) जवरा। ७ (ख) प।

[†] 'अश्व' के अर्थ मे।

[‡] अर्थ स्पष्ट नहीं है। हतनदगांव केदाव से दो गावो का अर्थ निकल सकता है। किन्तु इन गावो का पता नहीं लगता।

[*] यह इतिहास-सम्मत तथ्य है।

कही कौन है सो यसी करन हारो[1]।
चलो चालि लैहो जहां जग्य भारो॥
यसी जान कं राव परताप बोले।
कहो आप सथ स यो बैन बोले॥
हम सुराज आमेरि के धरमधारी।
इसी नग्र नाही न चैही हमारी॥
करो जो यसी तो कहै स्याम द्रोही।
करी कीनहार सिरै दोस मोही॥
नहीं राज आमैरि सनरथ भूपं।
वालै छतं बात ह्वै है विरूपं॥
ताते कहूं मै सुनो साथ सारो।
उरै दिसि चालनों जों हम[2] धारो॥[१६३]

दोहा : यते वचन सब सथ सो, पातिल कहे प्रवान।
रह न ठाम ही नग्र मझि[3], उतरे तहां स आंन॥[१६४]

दोहा : यती बात सुनि घात[4] की, आत रष[5] तिह वार।
उनियारे के राजई, नरू नाम सिरदार॥[१६५]

छंद पद्धरी : बूझीस बंधु[6] सिरदार सव।
कोनी किय आप येस दव[7]॥
जो होय मोही दुरजन बताव।
मैं करूं जुध वन सों† स जाय॥
बोले सु राव पातल सु नाम।
तुम कीन बंधु जो बंधु काम॥
यह[8] ठाम राज रघुकुल कि जानि।
तोरी न जाय है नृपति कांनि॥

---

१ (ख) हारा। २ (क) ह। ३ (ख) मैझि। ४ (ख) घान। ५ (क) आतप।
६ (क) रंधु। ७ (ख) दाव। ८ (ख) पह।

---

†उनसों। 'इ' 'अ' 'उ' तीनो के स्थान पर यत्र-तत्र 'व' का प्रयोग मिलता है—विस, वोर, वन आदि।

बोले सु राव सिरदार नाम।
नृप रीस रषि है[1] यही ठाम[2] ॥
जिन अरज भूप सो दई जाय।
दियेस सत्रु हमरो कढाय[3] ॥
देषिये दोय चौगान हाय।
जो जीति हार आमेरिनाय ॥[१६६]

दोहा. अरज[4] राज पीयल निकट, दई राव सिरदार।
अरि नृप दीये निकारि कै, किये कूच तिह वार ॥[१६७]

दोहा: उनियारे गढ राज ही, गये राव सिरदार।
ता पीछे पातल मिले, लषि वियोग की वार ॥[१६८]

छप्प: जात राव परताप आप यह अरज सु कीनिय।
होय देस दिसि सीष श्रवण भूपति सुनि लीनिय ॥
कहै नृपति वर वैन कहत तुम सो यहा को है।
बूझे ताहि सचाहि वात सला सम जो है ॥
बोले सुराव नृपराज सो करत याद फिर आय है।
येक वेर देसन दिसा हुकम जानि कै पाय है ॥[१६९]

दोहा: दे वीरा देसन दिसी, दई सीष नृपराज।
आवत पातिल ठाम पर, साजे सेन समाज ॥[१७०]

छंद साजेस तेज तुरंग। रजपूत सथ सुरंग ॥
हनूफाल: पचरंग फरक फरद। गज ढले होदा हद ॥
कसि बाज घोर त्रमाट। सुष पाल रथ सु ठाठ ॥
चढियेस पातल राव। चढि चवर चावै चाव ॥
मुकाम मझि वजाय। थिर थांन उतरे आय ॥[१७१]

दोहा: थान गजसों[†] राजई, पातिल उतरे आय।
श्रवण सुनी राजरु षवरि, राव पहोचे आय ॥[१७२]

---

१ (ख) रपि है। २ (ख) नाम। ३ (क) कटाय। ४ (ख) अर्ज।

[†] थाना गाजी — अलवर-जयपुर सड़क पर।

दोहा : राजसिंह पेरोजषां, मिलि बतलाये सोय।
जवर राव[1] कु जाय है, रहै भंग कछु होय ॥[१७३]

चौपाई . तातैं सलाहै[2] यक कीजैं। हुकम नृपति कौ या विधि लीजैं ॥
राव सुथान राजगढ जोई। ता पर हमैं मुहीमस होई ॥[१७४]

दोहा : राजसिंह पेरोजषां[3], मिलिये मतो सुधाय।
दई अरज कर जोर जुग, यों भूपति[4] दरबार ॥[१७५]

छंद पधरि : महाराज राजैं नृपति नरेस।
दीजियेक हुकम प्रवेस ॥
हैं धणी राजगढ पता राव।
तापै सजाय देहै स दाव ॥
लरिहै स राव जो करै रार।
टरिहै स आप जो मिलै आरि ॥
दीजिये फोज संगै समुच।
दल हुकम होत वजै सकूच ॥
बोलिये बैन पीथल सगाजि।
संग दये फौज सेना समाज ॥
नृप हुकम होत वजेस घोर।
सजीस फोज जो जवर जोर ॥
चालीस सहस नर बाज[5] चंग।
घन सूर वीर सावंत संग ॥
अगै अराव तोवैं सुठाठ।
पछै सु फौज बंकी[6] विराट ॥
मध्यम सेन दल दो अमान।
भनि राजसिंह पेरोजषान ॥
रजपूत सबै रजवाट संगि।
लोहै स जोह करनै सु संग ॥

---

१ (क) राज। २ (ख) सलाह। ३ (क) षा। ४ (ख) भूति। ५ (क) (ख) बा। ६ (ख) बाकी।

करि करि सकूच कोने मुकाम।
पहुँचे सु आन बसवें[1] सु ठाम ॥[१७६]

दोहा : सुनि अवाज दल आनि की, धनी राजगढ़ आप।
मंत्री बधु बोले सगी, लिये राव परताप॥[१७७]

चौपाई : मंत्रो छाजूराम बुलाये। ता सुन त्रहूं[2] सुनत हि आये॥
षुस्यालचंद दोलो नंदराम। जो तो करन स्याम के काम॥[१७८]

दोहा : दूजै रामसेवग कहै, मंत्री मोजीराम।
जीवणषां होसदारषां[1], सेष मुसाहिब ठाम॥[१७६]

छप्पय : चत्र ठाम के बधु कोकि लीने स तास वर।
प्रथम षोहरा ठाम वीयो पलवास नामचर॥
तीजै ज्याढो प्रछति पेषवाई सब चथै।
पंचवे राज लिये राज पातिल पति सथै॥
यती ठाव कलियारण तण ने बुल वरीया वरु।
जुड़े आन दरबार जुग जते नाम वरनन करूं॥[१८०]

छंद पद्धरी : प्रथम नाम अमरेस पाट।
विसनेस कहिये विराट॥
बंधू भवान संग वाघधींग[2]।
भगवंत भनों सिवदान संगि॥
बंधू झुझार वर तास संगि।
लैंहो सजोह करनीस जंग॥
काका सतोष समरथ सिंह।
भुजै षुस्याल सालिम अवीह॥
कहियै संतोषसुत तिहै वार।
मगलेस नाम[3] कूरम कवार॥

१ (क) होसरदारषां। २ (ख) सोग। ३ (ख) ना।

[1]वादीकुई-अलवर रेलवे लाइन पर पहला स्टेशन। इससे कुछ ही मीलों पर राजगढ़ है।
[2]छाजूराम के तीन पुत्रों ने इस पुस्तक में बहुत महत्त्वपूर्ण स्थान पाया है—इनके नाम हैं—१ खुशालीराम (कुशालीराम), २ दौलतराम, ३ नंदराम।

दूजैस संग काका प्रवान।
रण छाजुसिंह कहिये अमान ॥
सुत कवर नाम जगतेस सोय[1]।
अमरावति जोरी जुगल जोय ॥
दूजेस ईसरीसिंह[2] पाट।
है वनैसिंह वत जुग विराट ॥
कहिये सु नाम तिनके वषांनि।
अषमाल[†] बंधु अमरेस जानि ॥
सुत कवर नाम सवै अवीह।
पदमेस नाम है सेरसींह ॥
तीजैस स्याम के पाट सोय।
भनि भाव बंधु अरजन सजोय ॥
तिनकेस सुत कहिये सवीर।
मेदसीह दुरजन सधीर ॥
चौथे सु जोध कँ पाट जान।
भारथसिंह दुरजन समान ॥
जुडिये सवार दरवार दीप।
परताप राव कुलपति समीप ॥
पचमै येस काका सु आन।
हमीरस्यंह दुजै समान ॥
षट वैससोनि रजवंस गोत।
कलियाणवोत पचियाणवोत[3] ॥
चढ गूजर वाकावत समोड।
चौहाण चाप[‡] राठोड़ जोड़ ॥
धीरा हमीरदेका स सोय।
जोगी कछवाहा भाम[4] जोय ॥

१ (ख) "सुत कवर नाम जगतेसरीसिंह कहिये अमान"। २ (क) सिंघ। ३ (ख) पचियणवोतत। ४ (ख) भाम भाम।

[†] अपैसिंह।
[‡] चांपावत।

चदेल राजधरका[1] स चाय।
निरवाण जादमो जोय श्राय॥
दरवार राव[1] पातिल विराजि।
दीनो सुनाय यक हुकम गाजि॥
श्राये सु भूपदल करन जंग।
चढ़िया सु राजगढ किला रंग॥[१८१]

दोहा : यम पातिल दीनो हुकम, किये कूच तिहि वार।
मंत्री बंधू सेन रषि, बीजो[2] ठांम विचारि॥[१८२]

चौपाई : नाम कांकवारी गढ़ थानो। ता दिस पातिल कियो पयानो॥
चढ़िये सेन छुरी ले साजे। राषन रछिक ठाम विराजे॥[१८३]

दोहा : पातिल पहुंचे जाय गढ़, षवर हुई दल श्रांनि।
राजसिंह पेरोजषां, सुनिये वात निषांन॥[१८४]

छप्प : श्रात षवर यम वात संग सो ही वतराये।
राजसिंग पेरोज अंग श्रंगे सरसाये॥
लिये वोलि उमराव चार सावंत सूर वर।
जुरे जूथ दरवार श्रादि दल जेते मनक वर[2]॥
कहियो सुनाय सब सथ सो राजसिंह वोले वचन।
प्रात राजगढ़ राडि को जोगि जाग को है[3] रचन॥[१८५]

दोहा : राजसिंह बोले बचन, सुनि सथ सो बात।
बीती निसा नकीब फिरि, रहो पहर को प्रात॥[१८६]

छंद भुजंगी : बहै प्रात वजे दलौ सैं नगारे।
श्रवाजैं सुनत वाजि पलान धारे॥
दूजै नगारैं सजं सूर सथै।
लरे लोह पंचों कमानो सहथै॥

---

१ (ख) व। २ (ख) नेम नम। ३ (क) ×।

---

[1]राजधरका, हमीरदेका, नरूका—इस प्रकार के भी कछवाहे राजपूत हैं।
[2]दूसरा।

तीजै नगारै चढ़ी सेन सारी।
मनो वासरा[1] की भई रैनकारी[2] ॥
सर धारय सो अरावा स ठठै।
पछैं कटक चढे मनौं इंद्र घटं ॥
यसो राजगढ़ ठाम होतो अवाजै।
आये कटकै रटकै सज काजै ॥
सुने तो यसी राजगढ़ ठांम मंत्री।
षुलाये जते भार भंडार जंत्री[3] ॥
चढ़े तेग तीरे कमानै वरछी[4]।
वटै दारु गोली वदूकै[5] स अछी ॥
वटै पाषरै टोप भिलम सभकै।
पटंवी चलत सभालै मलकै ॥
वटै जीन जोटे किलंकी सभकै।
वटै सेत ही गजगाह* गरकै ॥
वटै बाजि कंमैत लीला हरेई।
वटै लालिया चीनिया नुकरेही ॥
कछी अरबी तुरकी स ताजी।
षदारी षरंते मनो बाज वाजी ॥
वटै पातला राव के सूर सजै।
वजी त्रमाट चढे जुध कजै ॥[१८७]

दोहा : वति आये दल नृपति के, यति पातिल के सूर।
डुहू वोर लागे वहन, सार समर भरपूर ॥[१८८]

छंद भुजंगी : धकै सूर सोही भरै छोर छोहं।
परै रुंड मुंड गरकै स लोहं ॥

---

१ (क) वसरा। २ (ख) रनकारी। ३ (ख) पूरा चरण नही है। ४ (क) करछा। ५ (क) हूवकै।

---

*गजगाह-युद्ध—गज और ग्राह के पौराणिक आख्यान के आधार पर 'गजग्राह' अथवा 'गजगाह' का अर्थ ही 'युद्ध' हो गया।

वहै तेग[1] वानै कमांनै वरछी।
वहै गोल गोला लगै तोव अछी॥
वहैं रामचंगी जमूरा जजालैं[†]।
वहै वीर वंदूक हथ सत्र नालै॥
फूटै कटै सीस होय टूक टूक[2]।
गिरं लोथ लोथं परे षेत कूकं॥
ऐसी जुड़ी मास दो हुई लराई।
षिस्यो राजसी षेत वाजी न पाई॥
समै साल गुनतीस[3] होनै विरुधं।
वतै नृप फोजं पता से न युधं॥[१८९]

दोहा: हटे राजसी हो षटे, लरे राजगढ़ आय।
जो नृप पीथल पैं षवरि, दीनी षत पठवाय॥[१९०]

चौपाई: मास दोय कीनी रण भारी। धाप गई थकि फौजैं सारी॥
सर न राजगढ़ हम पै होई। हुकम नृपति कहो कीजे सोही॥[१९१]

दोहा: षत वंचे पीथल नृपति, सला धारि उर आप॥
आगल है या देस की[4], कोके[5] राव प्रताप॥[१९२]

छप्पय: लियो कोकि[‡] परताप आन नृप लिखे षास षत।
सरी तुमारी रारि आरि मिलिये सेवगियत॥
अवनि दाय कै भाय आट आगा लगि आइय।
उदैकरन नृप होय तास तन हम[6] तुम भाइय॥
षत जोजि वंचि[7] पातिल प्रवल जुध जीति किये चलन।
धनी राजगढ़ राजई नृप अमावति पीथल मिलन[8]॥[१९३]

१ (क) तेज। २ (ख) टक। ३ (ख) ग्रनतीस। ४ (क) देकी। ५ (क) ×। ६ (ख) यह। ७ (क) वदि। ८ (ख) मीलन।

† रामचंगी, जमूरा, जजालैं, जजरवा अनेक प्रकार की तोपें होती थीं। जजाला तोपें ऊँटों पर रखी जाती थीं और आवश्यकतानुसार उनको नीचा-ऊँचा किया जा सकता था।
‡ कोका – शब्द निमत्रण के अर्थ मे भी आता है। जैसे व्याह का 'कोका' (निमंत्रण) सामान्यत. 'बुलाना' अर्थ होता है।

छंद नाग : त्रमाट वेर वजई[1]। समाज सेज सजई[2] ॥
गजैस बाजि चलयं। चवर सीस ढलियं॥
नकीब बोल वान ही। हये परास आन ही॥
हुइ तमा तमाम ही। दिसा दसौं[3] सलाम ही॥
जबै[4] ल ज्वान जो बलं। कतार कोर कूतलं[5] ॥
सढाल[6] होर संग ही। फरक पंचरंग ही॥
बजै मुकाम[7] काम ही। गये स नृप ठाम ही॥[१९४]

दोहा : पहौंचे पातिल ता निकट, नग्र अमावति नाम।
जो विदीत जग जानिये, रघुवंसीरति ठांव॥[१९५]

चौपाई : सो अवाज नृप सुनि है कानन। नर सामहि पठये परवानन॥
परसत ही पातिल पन धारिय। नृप आसन दे भुजा पसारिय॥[१९६]

दोहा : मिलिये पीथल मेलि भुज, ते रघुकुल के राज।
कहीस पातिल राव सो, करन स्यांम के कांम॥[१९७]

छंद पद्धरी : यम वचन बोलि पीथल नरेस।
सो सुनी राव पातिल प्रवेस॥
कर जोरि जुगल यक अरज कीन।
महाराज मोहि यह माफ कीन[8] ॥
करि है सजोय नर यसो कौन।
सरि है सजोय दरबार लौन॥
रजपूत होय छत्री सु नाव।
टरिहै[9] न स्याम के करत काम॥
मानैस जोय नृप हुकम येक।
जानै न दूजा य अनेक॥
वीजोस कौन जारंस हाथ।
जो दीन लीन आमैरिनाथ॥
कीजैस नृप जो सला जोय।
लीजिये ठांम अब पुसी होय॥[१९८]

---

१ (क) बजई। २ (क) सजय। ३ (ख) सदो। ४-५ (क) पूरी पक्ति नही है। ६ (ख) सडाहोरल। ७ (क) सुकाम। ८ (क) प्रति मे पूरा चरण नही है। ९ (क) फरि।

दोहा : यों बोले पातिल बचन, नृप सू स्याम सुभाव।
बढ्यो[1] हरष[2] नृप यो कह्यो, राज राजगढ राव ॥[१९९]

इति प्रताप-रासो जाचीक जीवरण कृत चतुर्थो प्रभाव ॥४॥

पंचम प्रभाव

दोहा : मिलि पातिल नृपराज सो, लई सीष तिह वार।
राज राजगढ़ थान पै, उतरे पातिल आरि ॥[२००]

छप्पय : दिली साहि सारीष जोय आमेंरि नृपति नर।
ताही नृप[3] सारीष राव परताप भोमि भर॥
अवनि लीन वसि कीन दीन कोनसी अपन।
उथपन थे[4] थिरकरन करन ते थिर ते उथपन[5] ॥
परताप राव रावत तिलक जगत जोय नपतरू नरू।
पूरब पछिम उतर लग दषिण लग जानें सरू ॥[२०१]

दोहा : पूरन ससी सो सील तन, तेज तरन परवान।
ताहि चाहि[6] दिली धनी, देये[7] साहि परवान ॥[२०२]

छंद भुजगी : दिये फुरमान दिलीपति साहि।
लिये सिर पातिल राव चढ़ाय॥
कह्यो बतराव बहादर[8] तुम।
करो घर ऊपर धाय हुकम॥
दये गज तेंग षिलत दुसाल[9]।
दये सिरपेच किलंगी भाल॥
सजन मांहि मुरातव[†] लारि।
बजन साहिब नोवति वार॥

---

१ (ख) हो मम। २ (ख) रष। ३ (ख) नप। ४-५ (क) प्रति मे इतनी पक्ति नही है। ६ (क) वाहि। ७ ख) देषे। ८ (ख) षोहावर। ९ (ख) हुसाल।

[†]मुगल बादशाहों द्वारा माही मुरातव प्रदान करना बड़े सम्मान का सूचक था। अनेक देशी नरेशों द्वारा दशहरा के अवसर पर, अब तक, इनका प्रदर्शन किया जाता था। स० १८३१ में प्रतापसिंह को एक स्वाधीन राजा मान लिया गया। प्रतापसिंह का जयपुर मे भी कुछ हस्तक्षेप बना रहा।

यसो[1] पतिसाह कियो सनमान।
नरुधर पातिल वउ प्रमाण॥
किये अति पातिल राव उछाह।
हुई यह बात दोऊ दल राह॥
यसो बल पातिल हुकम लीन।
मनु धर ऊपर दावस दीन॥
लिये सब मंत्री बंधुह बोलि[2]।
कह्यो यक वचन श्रीमुख षोलि॥[२०३]

चौपाई : हुकम साहि[3] को सोई[4] कीजै। दिसा दिसा सिर डेरा दीजै॥
अवनी ऊपर अमल बजावो। अनमिल मारि मलैन मिलावो॥[२०४]

दोहा : हुकम धणी पातिल दिये, लियेस मंत्री नाव।
कर सलाम तिह बेर ही, करन स्याम के काम॥[२०५]

छुप्प : प्रथम पुस्यालीराम[5] नाम[6] मंत्री सुबुद्धिवर।
दूजै दौलतराम स्याम के काम करन कर॥
किये कूच तिहिवार लार फोज अराव घन।
बजे त्रमाट विराट ठाठ पचरग सीस पन॥
कियो पयान परताप ही स्यांम काम बंधू बलन[7]।
उत्तर पुस्याल दोलो दिषन दिसा दोय कीने चलन[†]॥[२०६]

दोहा मंत्री चढि महाराव के, लै संगि सुभर समाज।
गढपति भारे भोमियन[‡], सुनियै सो आवाज॥[२०७]

छद पधरि . भजैस वास छंडै निवास।
सुनितैस सोय त्रमाट[8] तास॥

---

१ (क) सो। २ (क) वंधु है। ३ (क) सार। ४ (ख) सो। ५ (क) नाम। ६ (ख) राम। ७ (ख) बरलन। ८ (क) सोयत्रसट।

[†]प्रतापराव के इन दो (हल्दिया) वीरों ने दोनों दिशाओं मे विजय हेतु प्रस्थान किया। इनके अनेक विजय युद्धों का वर्णन जयपुर के श्री नरसिंहदास हल्दिया के पास उपलब्ध है।

[‡]भोमिया का अर्थ है खेती करने वाला अथवा भूमि पर बलिदान होने वाला।

गढ़पति सोय सजैंस कोट।
उवरैं[१] आज तो यही वोट॥
आयेस राव दल जवर जोरि।
भरियेस भेंट भोमिया ओर॥
सजैं सजोय गढ़पती दाय।
भजेस वेर गोला वजाय॥
मुरडेस जोही लीनेस मारि।
उवरेस जोय मिलियेस आरि॥
फिरईस आन परताव राव।
घर अनद सोय लगेस पाव॥
मरपती साहि सुपाय हद।
घर हुकम कोस दोसैं[२] गरद॥[२०८]

दोहा. हुकम घरनि दो सै गरद, आन फेर घर आप[३]।
गढ़ गढ़ मैं वैठक वणी, पातिन्न राव प्रताप॥[२०९]

छंद हनूफाल
अलवर साहि नगर[४] सुनांम। वंके किला विकट सुठांम॥
हणवत गढ कहियते हद। वहादुरपुर सु नाम मरद॥
हयगढ़ सेरगढ़ नौगांव। ठीकस रामगढ़ सो ठाम॥
कामां कीलो हो कमठांण। राजसथान[१] प्रतछि प्रवाण॥
पीपलषेडैं गढ़स वीर। जठै सावत्तारा सीर॥
भनत गुसावलीगढ़ पूर। थाणथट रावत सूर॥
गिर पर केसरोली वीर। रणवर वायवोली धीर॥
लछिमनगढ़ लरन सुवंक। देषत मानवै दल संक॥
मांनु मोजपुर सु नाम। जानो समोचि ससि ठांम॥

१ (ख) ऊपरैं। २ (क) (ख) सो ढोय। ३ (ख) आय। ४ (क) नगर।

[१] प्राय यह कहा जाता है कि प्रान्त के अर्थ मे 'राजस्थान' नाम टॉड द्वारा ही सर्वप्रथम प्रयुक्त हुआ। इतिहास के प्रो० डॉ० वनारसीप्रसाद सक्सेना ने भी इसका समर्थन किया है। 'प्रतापरासो' मे इस शब्द (राजस्थान) का राजधानी या रियासत के अर्थ मे कई वार प्रयोग किया गया है।

षेड़ै जंध जोधा जूप। मालिम करण रोड़ा भूप ॥
भणि वावडी षेडै वीर। जंगो जामडोली धीर ॥
रणपर राजपुर गढ़ सूष। दंगो दुषि कहियत दूठ[1] ॥
अरि नर गुढ़ीगंज गरूर[2]। वडवो विकत्तकि सूर[†] ॥
सैथल वीर कोटस वड़। सरसो सरू पातिल गढ़ ॥
अजबगढ़ विजैपुर स विराट। भणि बहोरो थोगन थाट[3] ॥
बसईस कहियत भाल। गाजीथान सत्रुन साल ॥
टहलो कांकवाडो नाम। गनदागिरा विकट सुठांम ॥
कहत षुस्याल गढ़ सु नाम। प्रथीसिंहपुर पर परवान ॥
मानों मालषेडै[4] ठोर। वरणीयत झेले और ॥[२१०]

दोहा : गढ यतने महाराव के, ते कथि वरने नांम[5]।
तिन सिर तषत सु राजगढ़, रहनि आप सुख ठांम ॥[२११]

छप्पय : गढगढ़ा विराट[6] ठाव रजपूत रपि घन।
जुरत जंग नहिं मुरत सूर सावंत सत्रुहन ॥
हासलाह सहैवास तेज तातेस तुरंगम।
घन गोला बारूद तोव तोवकै मभि संगम ॥
लरन यसो पर दल लषत जालिम जोइ जवर जड़।
राव राज के गढ यते सो सवा[‡] सिरै[7] राजगढ़ ॥[२१२]

दोहा : वरणि राजगढ़ गढ़ कह्यौ[8], जोजन येक मभारि।
जल-षाई ऊंचे अलग, द्वार च्यारि दिसि च्यारि ॥[२१३]

चौपाई : प्रथम द्वार कहियत पछिम धर। दूजै दषिण तीजै ऊत्तर ॥
चौथे पूरव मधि पहचानौ। ठाम ठीक ये पोरि प्रवानौ[9] ॥[२१४]

---

१ (क) पूरा चरण नही है। २ (क) यह चरण इस प्रकार है—'अरिगजन गुढो गढ रूप'। ३ (ख) थाव। ४ (क) मालषेड़। ५ (क) काम। ६ (ख) वीरा। ७ (क) (ख) वासिरै गढ। ८ (क) कस्वौ। ९ (क) पूरा चरण इस प्रकार है—तामधि मल सुरंग सर्वन कल ॥

---

†स्पष्ट नहीं है।
‡'सव का बहुवचन।

छंद त्रोटक : चलि आवत भीर चहु दिस की। गजराज अवाज चहु दिस की ॥
धरि ऊपर पातलराव यसो। बल विक्रम भूपति भोज तिसो ॥
असुपति गजपति आतकते। नर नोकर पाय लगंति किते ॥
सइद सेष मुगल पठाण। हींदु हीदवान दिली तुरकान ॥
सही सुरपति पुरीस पठान। नरूधररै गढ़ राजसथान ॥
तठै महला छवि घाटसु घाटवणे। जालियां वंगला सुभरोष गड़े ॥
मनु चतरग चतेर जड़े। पड़दा अतिरंग सुरंग पड़े ॥
बिछायत मसंद गीलम गदी। अतरा षतरा षसवाय हदी ॥
नरुकुलरै[1] पति पातिलराव रजै। घडीयालस नोवत वार वजै ॥
नगरी मज बंस छतीस षसै। मग आवत जावत ढाल बसै ॥
यहो ऊगत प्रात कितेक नरै। सिर नाय सवाय सलाम करै ॥
हठ चौहट वट वजार वणे। अति सुन्दर मंदिर मध्य घणे ॥
वगवाय वणे सतलाव तरै। घण पछिम[1] कोट कलोल करै ॥
कहु कडीय तोवसु ठथ थिरै। कहूं गजराज सवाजि फिरै ॥
कहू धुन ध्यान स राग रंगे। कहू रजपूतसु थट सगै ॥
यते भनियेस[2] प्रतछि प्रभाव। सुछजि नरपति पालितराव ॥[२१५]

छप्पय : अठरासै[3] वतीस साष संवत परवानन।
राज राव परभाव समै कथि कहे सथानन ॥
यत दिली आमैरि मझि[4] पातिल पन धारिय।
अरन नाय नर किते हद दोऊ धर पारिय ॥
धणीस राजगढ़ नरपती नरू वंस मोटे वषत[5]।
यति आमावति पीथल नृपति वत अलीगवर[2] दिली तषत ॥[२१६]

---

१ (ख) पछिग। २ (क) मनियेस। ३ (ख) अवरासै। ४ (ख) मतिझि।
५ (ख) वतत।

---

[1]राजस्थानी का षष्ठी-कारक का रूप।

[2]अलीगोहर (शाह आलम—द्वितीय)—दिल्ली का मुगल बादशाह, शासनकाल १७५९ से १७८८ ई०।

दोहा : जीरण घर नर दोऊ[1] होये, धर नायक धर आब।
हींदु हद पातिल प्रछति, दिली नजव[†] नवाब ॥[२१७]

छप्पय : दिली नजव नबाब आब दल की सरसाई।
अलिगवर से साहि ताहि तिन यसी[2] सुनाई॥
होय मोहि यक हुकम देष हों जाय व्रजधर।
करों[3] स्याम के काम नांय होय भूप अजनर॥
सो सुनत साहि दिलो धनी, वार लार देनो सदल।
नर नजवषांन कीनौं चलन, कियो साहि को हुकम बल॥[२१८]

दोहा : नजव साहि को हुकम ले, कोके पातिल राव।
बधु जाणि कै बोलिये, दीन व्रज पर दाव॥[२१९]

छप्पय : ते षत पातिल वंचि दरबार कीन भर।
मंत्री सव उमराव बंधु ले कहे वचन भर॥
कोके नजव नवाव काज ताको चल कीजित।
सुभर सेन लै[4] संगि जंग औसर चल लीजत॥

---

१ (क) ×। २ (ख) इसी। ३ (क) कस्यौ। ४ (क) लैन।

[†]दिल्ली का सेनापति इतिहास प्रसिद्ध नजफखां। 'सुजान चरित्र' तथा 'प्रताप रासो'—भरतपुर अलवर के दोनों वीर काव्यो मे नजफखा का वर्णन 'नजव' नाम से मिलता है। सन् १७४४ ई० मे इसने वरसाने की लडाई मे नवलसिंह को हरा कर आगरा ले लिया था। इसने भरतपुर के रणजीतसिंह का साथ दिया। यह दिल्ली के मुगल बादशाह के यहाँ प्रधान सेनापति था। इन्हीं दिनों दिल्ली के आसपास जाटों के वड़े उपद्रव थे। माचेरी का सामन्त, मरहठे आदि से मिल कर नजफखां ने नवलसिंह को हराया। उसी समय माचेरी के सामन्त ने जयपुर से अलग होकर और अपना स्वतन्त्र अस्तित्व स्थापित किया। नजफखां ने मुगल सत्ता को स्थापित करने का प्रयत्न किया। १७७८ ई० मे नरूका प्रतापसिंह को दबाया और स्वयं शाह आलम के जयपुर की ओर बढ़ने पर वहाँ के बालक महाराजा को बाध्य किया कि शाही पडाव मे उपस्थित होकर बादशाह के हाथों राज्यारोहण टीका करवाये (१७७९)। १७८० मे दो बडी शाही सेनाओं ने जयपुर राज्य पर चढाई की परन्तु आर्थिक अव्यवस्था के कारण यह आक्रमण विफल हुआ [१७८१] प्रतापसिंह उद्धत था और उसने सब काम रोडाराम दरजी तथा दौलतराम हल्दिया पर छोड दिया था। राजपूत सरदार असंतुष्ट हो गए। सन् १७८२ ई० मे बीमार होकर नजफखां मर गया।

वंधु कहे ते वंधु ही, और न दूजा जानिये।
जिन जो भर भीर परी, चलन ता निकट ठानिये ॥[२२०]

दोहा . यो पातिल के वचन सुन, वंधू मंत्री वोलि।
आप चलरण नही जोग है, भेजो और सतोलि ॥[२२१]

चौपाई मंत्री वंधू वचन सुनाये। ते परवानि[1] आप मनि आये।
दीठि सभा दे देषी[2] सारो[3]। है षुस्याल मंत्री वुधि भारी ॥[२२२]

दोहा . मत्री जाणि षुस्याल[1] सौ, अति वल वुधि निधांन।
पुरषसिंह सतोष[4] से, अर संग काका मान ॥[२२३]

छप्पय : मंत्री वार षुस्याल लार सिरदार दोय किय।
अप पटतर से आप राव परताप संग दिय ॥
अर सेना सव सुभर वाजि गजराज साजि नर।
दई चाहि अपभाय भेजिये नजम भीरि वर ॥
मंत्री षुस्याल कीने चलन, स्यांम काम दीनो हुकम।
करतै सलाम चढ़िये कटक, वजि त्रमाट तिह वेर वम ॥[२२४]

छंद पद्धरी : चलियेस राव मंत्री षुस्याल।
सिरदार लार दो संग भाल ॥
समरथ सतोष पुरषा प्रवान।
इंदरेस नाव कहिये समान ॥
लीनीस संगि फौजै स पूर।
रजपूत लार रजवंस सूर ॥
कर कर मुकाम पहोचे स ठाम।
दल नजमषान के निकट नाम ॥

---

१ (क) परपानि। २ (क) देषी है। ३ (क) ×। ४ (ख) सताष।

---

[1] षुस्यालीराम का नजफखां से यह सम्पर्क वहुत महत्त्वपूर्ण सिद्ध हुआ जैसा कि आगे के विवरण से स्पष्ट होगा। सेना के अध्यक्ष खुशालीराम के साथ संतोषसिंह तथा काका मानसिंह दो श्रेष्ठ वीर प्रतापसिंह ने और भेजे थे।

सुनिये[1] सजोय नर नजम बात।
भेजिये राव मंत्री स श्रात॥
भेजिये वेर स्यामी सलीन।
नर नजबषान दरबार कीन॥
पठयेस[2] षुस्याल मंत्री सजाय।
मिलिये नवाब हित चाय भाय॥
नर नजब बोलियो बात भाव।
वर यही बध सै बंध राव॥
कहहो सजाय दैहैस दीन।
करिहैस राव राजा सकीन॥
बोले सतोष समरथ प्रवान।
कोकंत श्राप[3] कीने सु श्रान॥
कीजे नवाव जो षुसी होय।
करिहैस काम सरिहै सजोय॥
डेरास कीन सुध सीष लीन।
नर नजबषांन सिरपाव दीन॥[२२५]

दोहा : मिली डेरा नर नजब के, मंत्री किये षुस्याल।
बजे कूंच वर भोर ही, धरा ब्रज परि चालि॥[२२६]

चौपाई : जो श्रवाज व्रजराज प्रवानन। श्रात नजब[4] दल सुनी सुकानन॥
नर नवलेस[†] व्रजपति सोई। सूरजमल सुत बोले जवई॥[२२७]

दोहा . सब दरबार सुनाय[5] कै, कह्यो वैन[6] नवलेस।
श्रब देषै कैसे बने, तुरक तकत वृजि देस॥[२२८]

छ द पद्धरी : जो सुनिय वात मंत्री स ठांम।
जोधराज कहिये सुनाम॥

१ (ख) सनिये। २ (क) परसे। ३ (क) भूप। ४ (क) श्रानन जम।
५ (ख) सुनायक। ६ (ख) वन।

[†] नवलसिंह—भरतपुर के राजा तो नहीं थे, रीजेण्ट थे, किन्तु राजा के ही माफिक काम करते थे। इनका कार्य-काल सं० १७६८ से १७७६ है।

चतरेस सुणी चौंहाण चाहि।
ब्रज-राज बंध सुनि दान साहि॥
जट चक्रसाल सीतासराम[†]।
सुन चत्रदास गुरु सो स ठांम॥
समरू[‡] स सार भर सो सुनीत।
फिरजीस जीत जंग सभीत॥
सुनि सब बोलियो बचन स बात।
करियेस जोध जो नजब स्रात॥
करिहैस स्याम के काम सथ।
जो जीति हार हरदेव[*] हथ॥[२२९]

दोहा : वति चढ़ि आये नजब दल, यत चढ़िये ब्रजराज।
गगन सूर छाये गरद, रचिये रार समाज॥[२३०]

छंद भुजंगी : मनो बोलरे इंद्र वल दोय सजै।
वहै गोल गोला अरावे गरजै॥
वहै बाघणी वीर बंदूक अछी।
बहे बान कमांन तेगै बरछी॥
ह्वै टूक टूकं जुटै सूर सूरं।
गले माल गेरै बहै हूर हूरं॥
धरै सीस टूटे लगै रूक रूकं।
किते घाय घायं पर षेत कूकं॥
न को कोय सूझै भयो जुध भारी।
मनू वासरग की भई रैन कारी॥
वरैहं किये बाजते राजमंत्री।
कटी जट की सेन जो हथ कत्री॥

[†]सीतासराम मे 'स' नरती का है।

[‡]समरू—भरतपुर-नरेश की सेवा मे भी था। कुछ लोगो का कहना है यह किराये पर जाकर तोपखाने का सचालन करता था। विस्तृत विवरण अन्यत्र देखें।

[*]हरदेवजी राजा के इष्टदेव थे। इनका एक मन्दिर भरतपुर में अब तक विद्यमान हैं। विस्तृत विवरण मेरे शोध-प्रबन्ध—'मध्य प्रदेश की हिंदी साहित्य को देन' मे देखिए।

पिछै है किया ज नवाब सोई।
भजी जट की फोज तज षेत जोई[1] ॥[२३१]

दोहा : भजी फोज[2] ब्रजराज की, नजम जीतिये जंग।
दोहु दलां बिचि रावरा, मंत्री चाढ़े रंग ॥[२३२]

छप्पय : वर बरसाने षेत जीति चलियेस जोम भरि।
व्रजराज की ठांम नाम ता दीव लैन लरि॥
गये हंक दल नजम बंक गढ़ राड रचाई।
ब्रजदेसन नवलेस तोव टौवन[3] ठहराई॥
गोलास गोल मानू असन, गरज इंद्र वर संत घर।
लरे मास चौवीस लग, लियो जीति गढ़ नजम नर॥[२३३]

इति प्रताप रासो जाचिक जीवरा कृत पंचमो प्रभाव।

षष्ठम प्रभाव

दोहा : सो पति है ब्रज देस की, नगर दीघ सुनाम।
तापर बैठे नजब नर, ईद्रं पुरी सम ठाम॥[२३४]

छप्पय : तोरि दीव निज ठांम जोर अति भरे नजम नर।
कहै अैन मुष बैन देषि हो जोय हिंद घर॥
(गया) राम नाम बड़ ठांम लूटि लैहो सब लछि धन।
गढ़ अजंग गढपतिय डारि है भंग जंग जिन॥
हके नवाब हिंदू धरा लेन काज भर वहो बलन।
कीने पयान पछिम दिसा बार लार ले लषन दल॥[२३५]

छंद छप्पय : साज बाज[4] गजराज सेन ले चढ़े नजम नर।
षुरासान मुलतांन कासि बंदार मीर भर॥
सैयद मुगल पठारण सेषं भारथं अभंगिय।
तिलगु रुहैला तेस देस कत ... ... फिरंगयं॥
तो वै सुयट संगि ईद्र घन प्रथम मभि मुकाय किय।
हिंदवान हद पातिल प्रछति दल हलकारे षबर दिय॥[२३६]

---

१ पूरा चरण (क) मे नही है। २ (ख) भोज। ३ (क) टीपन। ४ (क) वास।

चोपाई : जो अवान पातिल सुनि कानन। आन नजव की वात प्रवानन ॥
मत्री वंधू वोलि पठाये। भारी भर दरवार कराये ॥[२३७]

दोहा : पातिल वोले वचन यो, सव दरवार सुनाय।
कर सर वा व्रज देस कूं, नजव हींद घर आय ॥[२३८]

छंद पद्धरी : वोलिये वंधु मंत्रीस जोय।
करि है प्रमाण जो हुकम होय ॥
वोलिये रावराजा सभाय।
करिहैस राडि परिहैस - पाय ॥
कै आत घात यन गढ़न फेट।
कै होत एक चौड़े चपेट ॥
है रचन राड़ि[1] को वात दोय।
करिहैस देषि जो जिसी होय ॥
टूटत देषि हिदवान हद।
टरि है न जोय छत्री मरद ॥[२३९]

दोहा : वत दिली दल चाढ़िये, नायभ[2] नजव नवाव।
पायक लायक राव के, कीने सेष जुवाव ॥[२४०]

छप्पय : सुनिये नजव नवाव ज्वाव[3] यक अरज हमारिय।
कीजे कूंच विचारि धारि हीदू दल भारिय ॥
तम सम आगे और ठौर तापैस आप वन।
होसदारषां वोलि यहै हीदु घर दल दहन ॥
गये अटकि सिर पटकि वेर वाजी न पा जीनय जनि।
करि है जो जानै षुसी[4] कहनहार पुजै कहनि ॥[२४१]

छंद त्रोटक : सुनतै[5] नर नजव वात यसी। अप बोलिये यह वात कसी ॥
तुम्हरी हद देषन आंन हमैं। करि है पर[6] और हरोल तुमैं ॥
रहिये असेष व सेष षुसी। तुमरी हमरी घर येक वशी ॥
मिली तुम सौ जिनिहूं मिल हो। ढूंढाहर देषन कौ चलि हौ ॥[२४२]

---

१ (ख) रा। २ (ख) नायम। ३ (क) जवाव। ४ (ख) ढुसी। ५ (ख) सनतै। ६ (क) घर।

दोहा : होसदार[1] षां बोलिये, सुनतो यसो जुवाब।
वा घर या घर येकही, आनो नजव नवाव[2] ॥
आमावती सम राजगढ़, नरपत पातिलराव।
धरतो के दो ही धनी, वत राजा यत राव ॥[२४३]

छप्पय : होसदार ले सीष वार तिहि चले नजव तजि।
नजमषांन जवमर्द व्योन सेना सुरभर सजि ॥
तोवर हत[3] ले तुपक वाजि गजराज सेन भरि।
चढे दाप रण चाय[4] ठाठरु वढेस[5] सिंधूसर ॥
आयेस धकि घर घर परिय उडि सुन्य लगी[6] गरद।
षवरि रावराजा सुनी नजब षांन आयेस हद ॥[२४४]

दोहा : सुनत रावराजा यसी, बज[7] त्रमाट वर साजि।
पातल सबन सुनाय करि, दये हुकम यक गाजि ॥
हद[8] टूटत टूटत धरा[9], टरै न छत्री नाम।
जुद्द करन कौं जोग है[10], करै सू सीताराम[†] ॥[२४५]

छद पद्धरी[11] : यम हुकम[12] रावराजास दीन।
चढिय जोर भर जुध कीन ॥
दषिनी[13] हरोल[14] आगैस षंरम।
वापुस अम सिरदार नाम ॥
पाछैस बंध[15] मंत्रीस जोय।
सेना समाज सब संग होय ॥
चलियेस तेज[16] ताते तुरंग।
मिलियेस[17] तेग टोडै सु जंग ॥

---

१ (क) हो सुदार। २ (ख) आमावति नवाव। ३ (क) हक। ४ (क) चाप। ५ (ख) उपदेस। ६ (ख) सगी। ७ (क) अयसीज, (ख) जव। ८ (क) × । ९ (ख) धधरा। १० (क) × । ११ (ख) छेद पधर। १२ (ख) हलम। १३ (ख) दवनी। १४ (ख) हराल। १५ (ख) वंट। १६ (ख) तरज। १७ (क) मिलस।

[†]सीताराम अलवर के इष्टदेव रहे हैं। स्व० महाराजा ने भी अपने महल मे राम की आकर्षक मूर्त्ति स्थापित कराई थी। वर्त्तमान नरेश ने उसके साथ सीता की प्रतिमा स्थापित की है। 'राजगढ़' को राजस्थान की हद माना गया है।

बजेस गोल गोला सगुग।
सजेल इंद्र धर परत घुंम॥
दल दुहू वोर बजैंस सार।
टूटंत सीस फुटंत पार॥
सजीस[1] सेन यों रची राडि।
जाते न कोय न कोय हारि॥
रवि अस्त होत पिछे[2] सु दिन।
उसरेस जुद्ध करि पहरि तीन॥[२४६]

दोहा : वत उसरे दल नजब ले, यत पातिल दल भीर।
माझि हद पर रावकै, लछ्मनगढ़ गढ़ वीर॥[२४७]

छप्पय : ताहि[3] देषि नर नजब बात मीरन मिल बुझिय।
कहिये सलास जोय होय सरसा रग सूझिय॥
है हिंदु धरि प्रछति राव पातिल पन धारिय।
रचीये नर वर यम किला दिपत अति भारिय॥
बोलेसु मीर सुनिये[4] नजब याहि तोड़ि कीजे चलन।
ता पीछै फिर देषिये राडि रावराजा दलन॥[२४८]

दोहा : सो मीरन लाहा[5]† दई, कीनी[6] नजम प्रवान।
लछ्मनगढ़ गढ़ लरन को, रची बात निधान॥[२४९]

चौपाई : गढ पर धरी नजब नर घातै। पातलराव सुनी सो वातै॥
सुनत आय योसी उर धारीय। वंधु भेजिये ता गढ़ भारीय॥[२५०]

छप्पय : बुधिवंत बलवंत जंग महमंत मंन गर।
धीर पाय अवदाय भार रण चाय करन सर॥

---

१ (क) स। २ (क) पिछै। ३ (क) तानहि। ४ (ख) धनिय। ५ (क)(ख) लाहा। ६ (ख) पीनी।

---

†सलाह।

अरन काल सिर साल भाल रछपाल वाम पर।
धायक वत दल फोर सोर जीतंत जोय छरि ॥[†]
इम धारि राव राजास चित यसो चाहिये बंधु वर।
सभा सुध सव हुकम दिय है लायक मंगल कवर ॥[२५१]

दोहा : अणभंगु षग अमरेस तण, स्याम काम पणवत।
पातिल कोके जाणि कै, मंगल मन महुमंत ॥[२५२]

छन्द कोकीत पातल राव। आये कवंरि करि चाव॥
हनुफाल : बोले रावा राजास आत। सुनिये कंवर मगल बात॥
आये नजब धरि करै दाय। लैन लछमनगढ़ ठहराय॥
हद परी होई विरोध[१]। तुम जाय कीजो जुध॥
यों हुकम पातल दीन। सो प्रवान सुनतहि कीन॥
चलिये कंवर मंगल चाय। दुजै संग लै सिवसाहि॥
कुल कछवाह जोगी जती। हथ सूरवीरस सती॥
करवा स्याम वाले काज। ले नर वाज सुमर समाज॥
उतरे निकट गढ़ की ठांम। मंत्री मझ छाजूराम॥
जिन जो कही क्यो हो वारि। यन जो करिय चौड़े राड़ि॥[२५३]

दोहा : मंत्री सुनतै वचन ये, पातल पै षत दीन।
× × × × × ॥[२][२५४]

चौपाई. पातिल राव हुकम पौंचाये। आपन पै सिवसिंह बुलाये॥
काका कवर कन्ह से भारे। सो लायक लछमन गढ़ धारे॥[२५५]

दोहा : आये दल सिवसिंह सो, मगल किला मझार।
जो अवाज नर नजब पै, पौंची ताही बार॥[२५६]

---

१ (क) हदह विरोध। २ (क) (ख) दोनो प्रतियो मे यह पंक्ति नही है।

[†](क) प्रति मे ये चार पंक्तियाँ इस प्रकार हैं—
बुधिवंत बलवंत जंग जंगमह मजबुत पथ जहि।
किरवान धारिम्ह मतर हरोपियग सयमहि॥
अरन काल सिर साल जानि लरछपाल आमद्वार व ऊपरि।
निज दल होय करिवाह सोर जीतंत जोय छरि॥

सब दरबार सुभाय वचन वर कहै नजब नर।
रावराज गढ काज आज भेजीस भीर[1] नर॥
बुझी सवत विचारि लारि सेनापति को है।
कहो जुवाव नवाव राव परताप च चोहै॥
यो सुनत भोग वजीस वव कहर होय चढिये कटक।
स्याम लाज की काज पर लईय राड़ि चौड़े रटक॥[२५७]

दोहा· लई राड़ चौड़े रटक, अटक कटक[2] कूं दीन।
मन्त्री बोले कंवर सूं, वहोर सेन गढ़ लीन॥[२५८]

छप्पय वहोरि सेन सब आय कवर पहुंचाय हुकम वर।
रण मतंग रजपूत पाय मजबूत जोम नर॥
जादम सोढा तवर पवार राठोड़ गौंड़ गनि।
वड़गूजर निरवान[3] चत्र चोहान जोय धन॥
गहयलोत धीर पुंडीर गिनि षीची हड़मती किते।
गढ मझारि करि राड़ि के कुल कछवाह जे जिते॥[२५९]

दोहा: वत दल आवै नजब धकि, यत पातल दल पूर।
झाझि लछमनगढ़ लरत, समर करत नित सूर॥[२६०]

छंद *त्रिभगी*: वतै सैन नवाव[4] की दौरि ध्यावै।
यतै सूर सायै सिरै हाथ वाहै॥
वतै मारिलौ मारिल्यौ वीर वोलै।
यतै मारियै लै करै सेल तोलै॥
वतै गोलनी ते करै तोव तारै।
यतै गोलनी ते (तो) तहां गोल मारै॥
वहै वांन कवांन तेजो वरछी।
वहै वाघणी वार वंदूक अछी॥
लगे सार धारं उडै टूक टूकं।
कते धाय धाय परे षेत कूकं॥

---

१ (क) भी, (ख) तीर। २ (क) × । ३ (ख) मिरवान। ४ (क) नवा।

धरैं सीस फूटैं भुजा पाय पाय।
कते ही तिलगा करे हाय हायं॥
कते मीर मुगलानु ते काम आवै।
दिलं वाय तंबू तते ठाठ जावै॥
पड़ावी वड़ी बीवियां यो बिलषै।
अला तोहि नवाब वा षेत रषै॥
करी मास[1] दोय किला[2] सूं लड़ाई।
आवै नवाब बाजी न पाई॥[२६१]

दोहा : नजबषांन पछितात लड़ि, गढ़ लछिमनगढ़ आय।
बोलि गुंसाई[†] सौं कही सला होय सुनाय[3]॥[२६२]

१ (ख) माम। २ (ख) दोला। ३ (क) सलाहो सुनायहोय (ख)सलास होय।

[†]गुसाईं अनूपगिरि—उस समय का एक प्रसिद्ध युद्ध-विग्रहकर्त्ता। इनसे सबधित दो हस्तलिखित ग्रंथ इडिया आफिस लाइब्रेरी मे देखे थे—अनूप प्रकास (पद्य मे) अनूप प्रकास (गद्य मे)। इनके संबध मे नीचे लिखा वृत्तान्त पठनीय है—अनूपगिरि एक सनाढ्य ब्राह्मण के लडके थे। पिता बाल्यकाल मे ही मर गए, माँ पालन न कर सकी। अतः उसने इनके भाई सहित राजेंद्रगिरि नामक गुसाईं के हाथ वेच दिया। राजेंद्रगिरि ने दोनों को चेला बनाया—बडे का नाम उमरावगिरि रखा और छोटे का अनूपगिरि। गुरु ने इनका पालन अच्छी तरह किया, बाद मे, इनमे सैन्य मनोवृत्ति जागृत हो गई। दोनो भाई मिट्टी की सेना बनाकर युद्ध का खेल खेला करते थे। गुरु ने भी इन्हें शरीर तथा मन से खूब तगडा बनाया था। जब गुरु मर गए, तो ये दोनों भाई शुजाउद्दौला की फौज मे नौकर हो गए। शुजाउद्दौला ने अनूपगिरि को 'हिम्मत बहादुर' की उपाधि दी। एक बार शुजाउद्दौला की जान बचाने मे इन्हें सफलता मिली, पुरस्कारस्वरूप कानपुर-फतहपुर मे रजधानी की जागीर पाई। तभी से ये 'रजधानिया गुसाईं' कहलाने लगे। कालान्तर मे ये अलीबहादुर से मिल गए और उसे बाँदा का नवाब बनाने मे सहायता की—स्वय सेनापति बने। इसी को साथ लेकर बुदेलखड पर चढाई की और वहाँ के अधिपति को हराया। कुछ समय पश्चात् ये अग्रेजो से मिल गए और अलीबहादुर के लडके को हरा कर स्वयं उमराव बन गए। फिर तो इन्होंने शादियाँ भी कीं, और विलास मे फँस गए। इनका चरित्र कुछ अच्छा नहीं था। बुदेलखड मे पदा होकर वहीं के राजा अर्जुनसिंह को मारना, जिससे सहायता ली उसी के लडके पर अत्याचार करना, अपना देश अंग्रेजों के हाथ मे सौंप देना आदि। अनूप-प्रकाश और हिम्मत बहादुर विरदावली (पद्माकर) दोनों को मिला कर ऐतिहासिक सामग्री उपलब्ध होती है। अनूप-प्रकाश मान कवि ने लिखा, जिसका समय १८२० वि० समझा जाता है। इसी का सीधा-सादा गद्य स्वरूप भी देखने को मिलता है, जिसके कर्त्ता कोई तुला बहादुर भट्ट हैं। पुस्तक इडिया आफिस लाइब्रेरी के हस्तलिखित विभाग मे सुरक्षित है। इसका कुछ अश इस प्रकार है—"राजेंद्रगिर बोले महाराज मेरे यह इच्छा है कै हम राजाधिराज होइ सब [अगले पृष्ठ पर]

छप्पय : अनुपगीर उमरावगीर कहियत जुग भायन ।
वड़ उमरावन सव नजव तिन यसीं सुनायन ॥
बोल गोसांईन कहै चहै परवान कहौ तुम ।
रावरीय अनमान सला सलाह करौ हम ॥
सुनिये नवाब जुवाव[1] यक हुकम जोय जव दीजिये ।
यो सुनत वात वोले नजव जो तुम करो सो कीजिये ॥[२६३]

दोहा : वचन गुसाईं नजव के सुने सलाके अैन ।
लिषि पठये करि षास षत, रावराज पैं दैन ॥[२६४]

छप्पय : जो षत पातिल वंच सोचि दरवार कोन भर ।
बोले सवन सुनाय सलाह करिहै स नजव नर ॥
मत्री वंधु सुनै सुनै राठौड़ गौड़ धन ।
कुल कछवाहा जतै सुनै निरवान सोचहन ॥
उमराव दोय दिषनीस संग अवो वाघु नाम जनि (जिन) ।
रावराज सु जोड़ करि अरज सुनाई सुनति तिन ॥[२६५]

चौपाई : सुनिय रावराजा यह वातैं । को विधि टरै नजव नर ह्यांतैं ॥
यह हिंदू घर है धर्म धारिय । यतवत करत कुफर वह भारीय ॥[२६६]

दोहा ते पातल वर वचन सुनि बोले मत्री नांम ।
वुधिबल छाजुराम सुत कवर षुस्याली रांम ॥[२६७]

छप्पय : बोलि षुस्याली राम नाम मंत्री सु वुधिवर ।
पातिल दीन हुकम जाय तुम मिलौ नजव नर ॥
जा नवाब सू ज्वाब सला सुधि बुधि सु कीजे ।
आपदाप तुम बात जाय डेरा दल दीजे ॥
यो रावराज बोले बचन सुनि मंत्री कीनी चलन ।
नाम षुस्यालीराम तिन नजमषान ता दल मिलन ॥[२६८]

---

१ (क) × ।

हमारी आज्ञा मानैं .... कछू दिन वाद फिर व्रंदावन कौ गए तहां व्रजभूमि कौ विलास करौ । दान पुन्य करौ । कुंज वनवाई । उतै भरतपुर वारे राजा जवाहरसिंघ जाट सौं भेट वई । वढे मिलाप भऐ । वे हिमत वहादुर को अपने मकान कौं लै गए । वहुत दिन उहां रहे । तव एक वैरागी ने डीरषा मानी .. .. ।"

दोहा : दल पुस्याल[1] नर नजम सु मिलिय मंत्रीय जाय।
हंसि नवाब बोले वचन भली कौन तुम आय ॥[२६९]

चौपाई : यों सुनि मंत्री बोले बातें। यह बनि आवै कहिये जातें ॥
दिली साहि के दल तुम सथै। जानि दिये तुम[2] हम अड़े हथै ॥[२७०]

छंद : यम किये जोगि मंत्री जुवाब। सुनियेस सोय नजब नवाब ॥
नर नजमषांन वर वचन दीन। कहि है षुस्याल मैं सोय कौन ॥
बोलिये राजमंत्री सु बात। कीजे सु सोय अब षुसी आत ॥
नर नजब बात बोले सुनाय। दलमो षुस्याल डेरा कराय ॥
मंत्री मुकाम दल मध्य कीन। नर नजब भीरि सब बात कीन ॥[२७१]

दोहा : भीरि बोलि लीनी नजब, लछमनगढ की घेर।
उलटिवाटि कीनो चलन, लारे मंत्री लेर ॥[२७२]

छप्पय : अठारासैं पैंतीस मांहि नजब से दायक।
मंत्री सो षुस्याल धरणि पत्तिल को पायक ॥
लछमनगढ़ से लरन कवर मंगल संग म्होकम।
लाष सेन के संग जंग जीते सजोग्य जम ॥
अटकैस आनि दौली कटक पटकि सीस पछै पड़ै।
स्यांम नाम के काम पर दंगल दल मंगल करै ॥[२७३]

दोहा : दंगल दल मंगल लरे, काका कन्ह प्रवान।†
पछि पातिल प्रथीराज सों, गुन कथि कहै वषांन ॥[२७४]

इति प्रताप रासो जाचिक जीवण कृत षष्टमो प्रभाव ॥६॥

---

१ (ख) पुस्यान। २ (ख) तु।

---

†यहाँ मंगल को 'काका कन्ह' तथा पातिल को 'पृथ्वीराज' कहा गया है। काका कन्ह के लिए प्रसिद्ध है कि वे अपने सामने किसी को ऊँचा नहीं देख सकते थे। कहा जाता है कि यदि भूल से भी किसी का हाथ उसकी मूछों पर चला जाता, तो कन्ह की तलवार से उसका सिर उडता ही दिखाई देता था। इस स्थिति को बचाने के लिए 'कन्ह' की आँखों पर पट्टी बँधी रहती थी और इसीलिए 'कन्हपट्टी' प्रयोग अभी तक चलता है। मगलसिहजी भी प्रताप के काका थे और बड़े ही वीर। उनके आदेश पर ही 'प्रताप-रासो' की रचना हुई।

सप्तम प्रभात

दोहा :　छपे व्रजिधर[1] नजब दल, नाम[2] दीव निज ठांम।
मत्री पातिलरावको[3], सग षुस्यालीराम ॥[२७५]

छप्पय　समय येक करि सुरति बात नर नजब उपाईय।
वोलि षुस्यालीराम षोलि तिन[4] यसी सुनाईय॥
रावराज तुम[5] धनी बार यक हमैं मिलेयत।
देहु राव[6] वड़ ठांम परगना ते[7] तुम चहियत॥
मंत्री जुवाव नवाब के सुनत स्याम सुधि षत दिये।
ते वचि रावराजा करन भर भारी दरबार किय॥[२७६]

दोहा :　भर भारी दरवार कर, मझि पातिलपति राज।
दुहु भुजा वल देषियत, मंत्री वंधु समाज॥
दोलै ओर नंदराम हो नषराम स्योजीराम।
जीवणषा होसदारषां सेष[8] मुसायम ठांम॥[२७७]

छंद　भनि विसनेस वंधु भवान। भगवतस्यंह संग स्योदान।
हनुफाल : जगतेस जानो जोर। मंगल कवर कर मोर॥
विक्रमान कहत षुस्याल। सतोष पुरषा भाल॥
नर अषमाल ईंद्र सुठाम। नाहर सेरसिंह सुनाम॥
कहत उमेद वायुधीर। भारथ[9] सिंह दुरजन वीर॥
कुल वंधु संगि केतेक। जो दरवार लार जितेक॥
नरपति नरूवारे ठाठ। राजाराव पातिल पाट॥[२७८]

दोहा :　कुल वंधु कहिये किति, सो सब संगि दरवार।
दुजै पातिल पायरै, रहै यते दल लारि॥[२७९]
दोहा :　पच्याणोत कलरायणोत, सेषावति संगि मानि।
राजावत रजवंस के, स्योव्रह्मवोत वषांनि॥[२८०]

---

१ (ख) जिवर। २ (क) नान। ३ (क) को। ४ (क) न। ५ (क) सुभ। ६ (ख) राम। ७ (क) दे। ८ (क) से। ९ (क) भार।

छप्पय : तुमर गौड़ राठोड़ व पवार निरवाण चौहाण।
वड़गूजर सामोत राजधरकास पास धन॥
हमीरदेक धीरोत जोग्य भारी[1] कछवाहे।
कीतावत सुरतांन सूरसिंघोत सवाये॥
भांषरोत बलिभद्रभण ते कुंभावत कहिये यते[2]।
किते रावराज पातिल पति दरवरि लार सजै यते॥[२८१]

दोहा : राजाराव दरवारि वरि[3] सबसौं सलाहा लीन।
नजब मिलन[4] व्रजदेस कुं कुंच प्रात ही कीन॥[२८२]

वर भोर होत बजे त्रमाट।
किलके नकीव सजे सुथाट॥
रजपूत वीर गजराज बाजि।
तोवे तीयार सेना समाज॥
चढ़ियेस राव परताप भूप।
होदास अववारा† अनूप॥
जो कनिक काम जठे जराय[5]।
झलकंत जोय रवि[6] किरन भाय॥
परि मोरपछ सिर चंवर ढालि।
भाले भलेस चोकोर चालि[7]॥
जलेव जोन[8] कुंतिल कतार।
होनी सलाम दिस दोय बार॥
सुर नाय स्याद नोबत[9] नंद।
साड़ा हरोल सोहंत हद॥
डंका त्रमाट गहरंत घोर।
सुषपाल सजि दल वुहु वोर॥

---

१ (क) (ख) ×। २ (क) कहिये। ३ (ख) वारि। ४ (ख) मिलत। ५ (ख) जराम। ६ (ख) रमवि। ७ (क) चरण इस प्रकार है—'चलहंत भाल किरणाल माल'। ८ (ख) जलेवाजोन। ९ (क) वय।

---

†अंबावाडी, अम्बरी नाम प्रचलित हैं।

फरके निसान पचरंग रग।
धरकेज सूर[1] आगे स चंग॥
सजि सहस[2] वीस नर वाजि जोर।
तोवे सठठ हसतीस डोरि॥
प्रथमीस[3] जाय कीने मुकाम।
गढ़ लछमणगढ़ अछे सुठाम॥[२८३]

चौपाई : पहल मुकाम किये लछिमनगढ़। छरे कटक वर भोण येक चढ़ि॥
जुलषांन जादा धर धाये। ग्राम लूट पहारी लाये॥[२८४]

दोहा : किये कुंच दर कुंच दल, व्रजिधर पहौचे जाय।
सो सुनते नर नजवषां, साम्ही मिलिये आय॥[२८५]

दोहा : वत दिली धर नजब नर, यत आमैररौ अधराज।
दुहु वोर के दल दिपति, सव सारीषु समाज॥[२८६]

छप्पय : नरा ठाठ गजराज बाज नोवत नद वजत।
सजि सुषपाल समूह तोव आगे घन गज्जत॥
यसो जानि नर नजव, वसन पलटे कर भाईय।
सिंह रूप वड़ भूप भीर भंजन बल दाईय॥
रावराज नवाब नर मिलि डेरन दल आविये।
प्रात होत परताप दल आगै कोक बुलाविये॥[२८७]

दोहा : चढ़े प्रात परताप दल, वाजि मुकाम यक गांव।
कोस तीन दल नजब के, कहित ककरा नाम॥[२८८]

चौपाई : दल दोउ तोवैं घन गर्जे। नदि नोवत निस वासर वजे॥
इति अधपति अंमावति वारो। वति नवाब दिली दल भारो॥[२८९]

दोहा : औसर दिन मोसर मिलन, नजबषांन नर आप।
अपदल कोक[4] बुलाविये, रावराज परताप॥[२९०]

छप्पय : मिलन काज दल साज रावराजा चढ़ि चलिब।
परसत ही नर नजब भेलि पातल भुज मिलिब॥

---

१ (ख) मूर। २ (क) सागेसहस। ३ (क) प्रथमस। ४(क) (ख) कीक।

बाजिराज[1] गजराज षिलत मुकता गल माला।
सिर सोहन सिरपेच किलंगीय जटित दुसाला॥
मंत्री बंधु उमराव संग सो सिरपाव सजाविये।
पातिल मिल नर नजब सूँ अप मंत्री डेरे आविये॥[२९१]

दोहा : दिली नवाव लाषन लषत गए मीरण निज[2] ठांम।
मंत्री गिनै षुस्याल से पातिल सो[3] सिर स्याम॥[२९२]

दोहा : मत्री आवन स्याम को, सुनतैं उठे सजोय[4]।
दिस साम्ही सिर न्हाय के, ठारौ कर जुग जोय॥[२९३]

चौपाई : रावराज पातिल सुधि लीनी। अति महिमा मंत्री की कीनी॥
दलपायक के तोल वधाये। राजाराव आप दल आये॥[२९४]

दोहा : आये राजाराव दल, आनंद नोवति वजि।
सकल आरिवैं सो समैं, मानु ईंद्र गरजि॥[२९५]

दोहा : पहल[5] गये दल नजब के, राजा राव प्रताप।
पीछे राजाराव दल, आये नजब सु आप॥[२९६]

दोहा घने[6] बाज गजराज दिय, सगि मीरन सिरपाव।
मिली महैमा नर[7] नजब की, कीनी पातिल राव॥[२९७]

छप्पय : मिलि पातल नर नजब आप दल दीघ[8] स आयव।
नाम षुस्यालीराम ठांम मंत्री सु बुलायव॥
लहै नैन मुष बैन वचन सोही तुम कीजत।
अलवर† साहि मुठांम किला यह हमकु दीजत॥
मंत्री नवाब नवाब के कहे बचन सो सुनत जब।
मो बलकी यह बात प[9] पातल जीवत देत कब॥[२९८]

---

१ (क) ×। २ (ख) ज। ३ (क) ×। ४ (ख) सोजुय। ५ (क) पदल।
६ (ख) यने। ७ (क) (ख) रन। ८ (ख) दीय। ९ (क)(ख) मैं।

---

†अलवर का किला भरतपुर के जाटो के पास था, किन्तु सन् १७७५ मे वह किला जाटो ने अलवर के हवाले कर दिया, और कुछ समय उपरान्त यही इस राज्य की राजधानी बना।

दोहा : यो सुन वचन नवाब नर, फोरे[1] मंत्री आप ॥
या दल करु दीवान तुम, तजिये राव प्रताप ॥[२९९]

चौपाई : सुनत वचन मंत्री मन भायो। निसि निकारि परवार मंगायो ॥
राजाराव तजे तिहि वारे[2]। होय हराम[†] नजब दल लारे ॥[३००]

दोहा : नाम षुस्याली राम बड़, भुज दौले नंदराम।
छाजुराम तिन तात है, निसढ़ि गये तजि ठाम ॥[३०१]

दोहा : मत्री सिर ते स्याम तजि, हुये नजब दल लारि।
रावराज पातिल निकट, हुई षवरि तिहि वार ॥[३०२]

छ द अरधनराज ' सुनत[3] रावराज ही। सुनत[4] ले समाज ही ॥
भुजास मीर भ्रात ही। सुनाय बोल बात ही ॥
दगोस देत मत्रि ये। कहोस जोय कीजिये ॥
बंधु तोलि बानि ही। सबै सम प्रवान ही ॥
यहांस जुध जो करै। मिलेस ये त्रहां[5] दले ॥
विचार ठीक ढलिये। दिसास देस चलियै ॥[३०३]

चौपाई : यों सलाह बंधु मिली दीनी। रावराज सुनि सोही लीनी ॥
बव[6] त्रमाट दलि वार बजाये। वहोरि देस दिसि कुंच बजाये ॥[३०४]

छप्पय : रावराज परताप आप चढयेस तास वर।
जवर होय जो जात बात यों सुनी नजव नर ॥
त्रहु दलन दे षवरि नजव चढीये सकुत चकि[7]।
पकरि लेहु परताप धारि आये सु आप धुकि ॥
रचियेस षेत रसिये सरण दलव राह दल धारिये।
यत यक भनि उत तीन गिनि[8] मन फदन दल जोइये[9] ॥[३०५]

---

१ (क) फेरि। २ (ख) वोर। ३ (क) सुत। ४ (ख) सुन। ५ (क) त्रका ६ (क) (ख) वेव। ७ (क) सकुचित। ८ (क) मिनि। ९ 'मनफदवजवदव जोय' (क)(ख)।

[†]कवि ने यहाँ उपयुक्त शब्द का प्रयोग किया है। हल्दियाओं की वीरता, बुद्धिमत्ता, रणचातुर्य और नीतिमत्ता के साथ उनका यह रुख भी कई बार पाया जाता है, जिसका समाधान, प्राय, नहीं हो पाता।

छंद भुजंगी : वहै तोव तेगे सघन हल मांची।
यसो हलहलै दोउ दल मुच्ची[†] ॥
चढ्यो नूर सूर कतै देत कची।
..............................[1] ॥
कहै मारिलै मारिलै वीर बक्यौ।
वरै रावराजा सहस तीस हक्यौ ॥
यसी जांनि कै बंधु मंत्रीस जोई।
फिरे जाय अडि लिये फेरि जोई ॥
षरे रावराजा षगे षेत षेते।
सैना सबै बंधु मंत्री समेते[2] ॥
वरै देषतै सेति तोपै सचली।
दल ध्याय नवाव कै जाय मिली ॥[३०६]

दोहा : मिलि सेना सो नजब दल, अरु तोवै घन पठ।
रहे राव परताप संगि, मंत्री बंधु विरठ ॥[३०७]

चौपाई : पातिल षेत षगे तिहवार। कहै आप छत्री धमधार ॥
गज नवाब होदा हथयाल। पातल नाम न जो टरि चाल[3][‡] ॥[३०८]

दोहा . यसो राव राजा बचन, मंत्री बंधुन दीन।
मंत्री बंधु बोलिये, सलाह संगि सो कौन ॥[३०९]

छप्पय : सेष[4] मुसाहिब ठाम जोवरणषां कहियत।
षरे होय कर जोय दरज करि अरज सुनैयत ॥
रावराज परताप आप हिंदु धर भारिय।
गढ[5] वावन धर षात जात येकै दिन सारिय ॥
करिये जो जानै षुसी हसत सत्रु यह सुनत सब।
यह करनी जब जोग्य है दल आवत[6] तकि[7] देस तब ॥[३१०]

---

१ (क) (ख) चरण नही है। २ (ख) समेती। ३ (ख) चाट। ४ (क) सेठा।
५ (क) वाढ। ६ (ख) आक। ७ (क) कि।

[†] संयुक्त अक्षर प्रायः कम ही मिलते हैं, विशेषतः उसी अक्षर का द्वित्व—'मुच्ची' जैसे उदाहरण बहुत कम हैं।
[‡] यदि उसकी 'चाल' विचलित न कर दी, तो मेरा नाम 'पातल' नहीं।

दोहा : रावराज सुनि सेष सूं, कही क्रोध[1] की बात।
दुरजन तोही जानयत, छत्री धरम डिगात ॥[३११]

छंद सावल : साय सारं लही। रावराजा कही॥
बंधु वोले वरै। कीजिये सो करै॥
आप चढ़ै चलै। वोर वाही दलै॥
गुंम भारी भली। नवाव याही सिली॥
आप होजै अगै। मारि भंजै षगै॥
बंधु वातै भनै। नीठि आई मनै॥
रावराजा चढे। बाग ताती कढे॥
बाजि ताते हके। ध्याय सूधे धके॥
हल माची दलै। जंग[2] भाले चलै॥
वार वजी यसी। द्यौस हौनी निसी॥
फाड़ि फौजे घनी। देस आये धनी॥[३१२]

दोहा : वल भारी दल नजब के, फारि आविये आप।
धनी राजगढ़ राजई, राजाराव प्रताप॥[३१३]

दोहा : किती सेन ठी निकट है, घन घायल संगि आय।
सिरदार च्यारि सारी षसे, दोय षेत दो षाय॥[३१४]

छंद भुजगी : रहे अषमाल सषेत अवीह।
घने बड भजिय षगन[3] सीह॥
धरणी पलवाह रहे रणवार।
अषा करि सार चढ़े रणवार॥
वियौ निरवाणस उदैल नाम[4]।
रहौ रण स्याम तणौ तकि काम॥
हुये संगि घायल बंधुस दोय।
इन्द्रसिह संतोषस जोय॥
दगो नर नजब ता दल कीन।
यतै[5] दल येक उतै दल तीनां[1]॥

---

१ (ख) त्रोव। २ (ख) जेग। ३ (ख) षन। ४ (ख) नाव। ५ (क) पतै।

---

[1]" दिलीदल आमंरिदल अरु देषणी दल संग।"

समे षटतीस तरणैस प्रमाण।
कहै कवि ता गुण कथि वषाण ॥[३१५]

दोहा : अठारैसै षटतीस कै, दिये नजब सिर दाव।
पातिल आये षग बल, धणी राजगढ़ राव ॥[३१६]

चौपाई : रावराज घर पति घर आये। नजब साजि दल पाछै[1] धाये ॥
लीन काज अलवर गढ़ ठामै। मजलि मजलि पर किये मुकामै ॥[३१७]

दोहा : दिलीदल आमैरिदल, अरु देषणीदल संग।
ले चढ़िये[2] बल नजब नर, गज बाजि सुचंग ॥[३१८]

दोहा : यति पातिल घर आवियो, वत सुनि नजब नवाब।
बोलि[3] षुस्यालीराम सगि, यो अप कहिये जवाब ॥[३१९]

चौपाई बचन तुम्हारो सौ मै पारो। धरम राव पातिल सु हार्यौ ॥
सो मंत्री सलाह अब दीजै। कह्यौ तुम्हारी सोई कीजै ॥[३२०]

छंद पधरी : कीन्हे पुस्याल मंत्री जुवाब।
सुनसु पीर मुरसद नवाब ॥
चलिये सु रावराजा सु देस।
मोहे हरोल अगै सुपेस ॥
लैहेहु साह अलवर सुनाम।
जो है षुस्याल मेरो सुनांम ॥
सुनि सोई बात नर नजब षांन।
चढ़ियेस साज दल सज वषान ॥
आमैरि जोव द्रिषणीस भार।
काबिल षंदार मुलतान मार ॥
गजराज बाजि तोवैस ठठ।
फौजे प्रमाण उमगेस घट ॥
दौले षुस्यान नंदराम नांव।
मंत्री हरोल हुने हरांम ॥
दल जलद कूंच दर कूंच कीन।
डेरास राव घर घट दीन ॥[३२१]

---

१ (ख) पीछै। २ (क) चलिये। ३ (ख) बालि।

दोहा : वल भारी दल नजब कै, डेरा दीन सु घाट।
करि विजोग दिषणी गए, गह दीषण की वाट[1] ॥[३२२]

चौपाई : दिषणी दिषण दल चलि गये। नजब संग नरपति दल रहे ॥
भोर होत वर कूंच वजाये। अलवर निकट मुकाम कराये ॥[३२३]

दोहा : यत डेरा अलवर निकट, कीने नजब सु आय।
वत चढिये नृप मिलत ही, अलीगोहर पति साह ॥[३२४]

छप्पय : अलवर पतिसाहि वाहि जैपुर दिस ध्यायव।
मिलन काज दल साज भूप पीथल हित आयव ॥
तिन लिषिये षत षास कोकि ये नजब तास[2] वर।
ते जवाब नवाब वंचि दरवार कीन भर ॥
बूझिये मीर उमराव सब सलाह सूल सो दीजिये।
लीजिये राउ अलवर किला अक हुकम साहि को कीजिये ॥[३२५]

दोहा : सुणि जवाब नवाव कै बोलि मीर उमराव।
हुकम साहि को कीजिये, बहोरि किला सिर दाव ॥[३२६]

छंद पधरी. यो दीये मीर उमराव ज्वाब।
सुनियेस सोय नजव नवाव ॥
सलाह सथ सब सुलि दीन।
परभात प्रात दल कुंच कीन ॥
सगे षुस्याल मंत्री सुनाम।
पहोचेस साहि संग नृपति ठांम ॥
मिलियेस साहि पीथल नरेस।
गज बाजि साहि दीने सुदेस ॥
परसे नवाब नर साहि चाहि।
लै सीष वार बाहिरस[3] आय ॥
मग मंझि राजगढ़ येक आंन।
ठांम नांम गाजीसथांन[4] ॥

१ (क) चतुर्थ चरण नही है। २ (ख) नास। ३ (क) वहिरिस। ४ (ख) सायान।

देषेस सोय नजब नवाब।
दीने सुनाय सब साथ ज्वाव॥
लरि याहि तोरि करिहैंच कूंच।
कीनो मुकांम फौजै समूंच॥
वत किला भीर भारी प्रवान।
चारण चाहि चावंडदान॥
तिन स्याम लाज[1] टारी न टैक।
कीनोस मास रुपि राड़ि येक॥[३२७]

दोहा : वल भारी दल नजब के, पातिल जांन प्रवांन।
लिषयति कोक बुलाविये, चारण चावड़दान॥[३२८]

चौपाई : चावडदान वचि षत बोले। साथ सुनाय बचन यो बोले॥
हुकम धणी को टालै जोई। तासुं कहियत स्यम दरोही॥[३२९]

दोहा : यो सुनाय सब साथ सो, निकसे[2] चावड़दान।
हुकम धणी को सो कियो, तजि गढ़ गाजीथान॥[३३०]

चौपाई : चांवडदान कियो यत आनै। यौं नवाब लीनौं गढ थानै॥
वार षुस्यालीराम बुलाये। दल अलवर दिस कुच कराये॥[३३१]

दोहा : आये प्रथम षुस्याल गढ, दूजै मध्य मुकांम।
तीजे दल नर नजब के, भनि वांबोली ठांम॥[३३२]

छंद पधरी : दल वांबोली नजब आत।
सो सुनी राव परताप बात॥
सगि लीन वंधु मंत्री बुलाय।
तिन हुकम येक दीनौ[3] सुनाय॥
आयो नवाब अलवर सु लीन।
जो जुरत जंग कैसी सु कीन॥
लीजेस साथ सेनास कूटि।
धणी कटी बाजि लैहोस लूटि॥[३३३]

---

१ (क) लज। २ (क) निकस। ३ (क) दीनू।

दोहा : हुकम राव पातिल सबन[1], मंत्री बंधुन दोन।
मंत्री बंधु बोलिये, सरै लूण सो कीन ॥[३३४]

दोहा : बत वावोली नजब नर, कीनै घणे मुकांम।
येक दिना कर सूरती, देषण अलवर ठांम ॥[३३५]

छप्पय : ठांम षुस्यालीरांम नांम मंत्री सु बुलायव।
अैन वैन नर नजब बोलि तिन बोलि सुनायव[2] ॥
अलवर किला सु ठांम नाम देषुस आजिवर।
हो हरोल सजि गोल वचन मुषक[3] प्रवान कर ॥
सुनि सो जुवाव नवाव के मत्री वचन ऊचारिये।
है विकट ठांम अलवर किला चलन दलन सजि धारिये ॥[३३६]

दोहा : विकट ठांम अलवर किला, दल पातिलपति पूर।
नीठि नीठि[4] दीषै किला, फटै षेत घन सूर ॥[३३७]

चौपाई : यो सुनि आप नजब नर बोले। कहे वचन मंत्री तुम भोले ॥
रसिये भिरतन बाजी पाई। अब जीतै क्यो रावल राई ॥[३३८]

दोहा : लैहु लराई राव दल, पीछै पाव न देहु।
कै अलवर मो ले रहै, कै अलवर मै लेहु ॥[३३९]

छंद पधरी : वर भोर होत बजे सुघोर।
सजेसु बाज गजराज ठोर ॥
तोवै सुयट सेना सभीर।
पठांण सेष मुगलांन मीर ॥
नर नजव वैठि गज चँवर ढालि।
जो कीन राडि अलवर सु चालि ॥
सग सहस साठ दल लीन तूल।
कीनो षुस्याल मंत्री हरोल ॥
जो सुनि रावराज सु वात।
सजि सवल फोज नर नजव आत ॥

१ (ग) वन। २ (ख) सुयव। ३ (क) मुप। ४ (ख) दीठि।

दरबार बंधु मंत्री बुलाय।
तिन हुकम येक दीनो सुनाय॥
नर नजब कौन आयो विरुध।
जुद्दि करो जाय चौड़ेस जुध॥
करि क्रोध जोध ठठे रिसाय।
चढ़ियेस चाय चलियेस धाय॥
हके सतेज ताते सुरंग।
विसषेत दल दुहुं ओर जंग॥
चजेस गोल गोलास गोम।
उमगेस इंद्र घर परत धूम॥
लगेस तेग बन्दूक तीर।
कमांन बांन बरछी सु वीर॥
देषंत रावराजा सहाय।
कटेस सेनि घन सूर सथ॥
लरिये षुस्याल मत्री चलाय।
लगेस लोह हुनेस घाय॥
जो सुनि बात नर नजब आप।
षिसिये सुषेत षाई सु ताप॥
धन कूटि लूटि लीने सु बाज।
जीतिये जुध दल रावराज॥[३४०]

दोहा : आप राडि जुडियेस अप, लैन किला के हेत।
जीते[1] पातिल राव दल, षिसे नजब दल षेत॥[३४१]

दोहा : हरे नजब दल हो षटे, होय चाहि अनचाहि।
सो अवाज सरवन[2] सुनी[3], दीलीपति पतिसाहि॥[३४२]

इति प्रताप रासो जाचिक जीवण कृत सप्तमो प्रभाव ॥७॥

अष्टम प्रभाव

चौपाई : सुनिय साह लिषिये षत बातै। करिय कुंच नजब नर ह्यांतै॥
ये षत वेर बंचि तुम लीजे। (जलद)चलन दिली दिस कीजै॥[३४३]

---

१ (क) जीति। २ (क) सरदन। ३ (ख) सुना।

छप्पय : दिलीसाहि के ज्वाव जो बचे नवाव नर।
कीनो चलण समाज दलन सेना समेत वर ॥
दोलै नंद षुस्याल अहु मंत्री संग लीये।
अषपरतरसे आप अहमदानीस रषिये ॥
[†]जिन हुकम नवाव दीनो यसो पातिल सो कीजे मिलन।
करि जुवाव सरसीरसी तव कीजो दीली चलन[†] ॥[३४४]

दोहा : रषी अहमदानी[1] नजब, गये दिली दिस आप।
वसन पलटि बधु हुये, मिलिये राव प्रताप ॥[३४५]

चौपाई : करि मिलाप दिली दिस ध्याये। घरा राव और दल आये ॥
(तिछी)पर कुंची लई सानफतेली। तिन की मार फोज घन मेली ॥[३४६]

दोहा : ते तकि आये राव घर, ते नवाब लिये कूटि।
लछी वाजि सुषपाल गज, लीये पातिल लूट ॥[३४७]

दोहा : रहत नगर दिली नजब, त्रिहु बंधु सगि भाल।
नंदराम दोलो सुभुज, मंत्री वड़ो षुस्याल ॥[३४८]

दोहा : तजि दिली चलिये अहुं, दोल षुस्याल रु नंद।
धकि आये आमेरि दिसि, कियो भूप चरछंद ॥[३४९]

चौपाई : पातिलराज सुनी सो आतैं। दे कागद तिन बुझी वातैं ॥
क्यो तुम दिली नजब तजि दीनौं। या[2] दिसि आंन काज[3] को कीनौं ॥[३५०]

दोहा : षत मंत्री लिषी[4] भूप कौं बहुरौ[5] दिये पठाय।
सिर पै नाहिन स्यांम है, यातैं या घर आय ॥[३५१]

छंद पधरी : षत बंचि भूप लषियेस आप।
अयै निसंक षयै न ताप ॥

१ (क) अहमदीनी। २ (क) य। ३ (ख) कायं। ४ (ख) लपि। ५ (क) (ख) वहुररौ।

[†]ये दोनों पंक्तियाँ (क) प्रति मे नहीं हैं।

हम सीस स्याम तुम रहो येस।
करिहौं[1] दिवान याही सु देस॥
षत देषि बंचि मंत्री सजोय।
चलिये सुचाय अति षुसी होय॥
पहौंचेस जाय जो नृपति ठांम।
मत्री षुसाल दोलतिराम॥
यौं सुनत भूप लीने बुलाय।
लगेस जाय वा नृपति पाय॥
मिलि कहै भूप को काज कीन।
यन कह्यौ[2] होय जो हुकम दीन॥
बोलियो आप पातिल नरेस[i]।
तुम रहो राव -परताप पेस॥
मंत्री सु तासके[3] तुम सुनाम।
कहियेस राजगढ़ किसी नाम॥[३५२]

दोहा : जल षाई ऊंचे किला, तोवै इंद्र अवाज।
बसै वंस षटतीस मधि, दल बल सुभर समाज॥[३५३]

चौपाई : बचन सुनत मंत्री को सोई। कहै भूप चलि देषु जोई॥
अब लग राव धरा सब षाई। देह छोड़ि कै लेहु लराई॥[३५४]

दोहा : जब मंत्री कर जोड़ि जुग, अरज भूप कौं दीन।
दल हरौंल अगैस हम, हुकम होय सो कीन॥[३५५]

छंद पधरी : बोले सु राज पातिल नरेस।
घन फोज संग देहुस पेस॥
तुम प्रात होत कोजे पयान।
डेरास नग्र बाहिर करान॥

---

१ (क) (ख) कटि हौ। २ (क) करयौ। ३ (क) नासके।

---

[i] 'पातल नरेस' और 'पातल राव' का अंतर ध्यान मे रखना उचित है। 'पातल नरेस' जयपुराधीश, तथा 'पातल राव' राजगढ के राव प्रताप के लिए प्रयुक्त हुए हैं। प्रतापसिह जयपुर वालों का राज्यकाल १७७८ से १८०३ ई० है।

सुणि वचन भूप मंत्रीस जोय।
चढि चले वार बंधुस दोय॥
कह्यिस नांम दोलो षुस्याल।
लीनीस फोज घन संग लार॥
आयेस धकि धूलैस ठांम।
डेरास ढालि कीने मुकाम॥[३५६]

दोहा : आये दिसि मंत्रीस धिकि, घात बात की दाव।
सो[1] अवाज सरवन सुनी, धनी राजगढ़ राव॥[३५७]

छप्पय : यसी राव परताप, आप सुनीयेस वर।
दल वल सवल समाज, चढ़िये नरू नृपति वर॥
हद नोवति नद वजि, गजि डंका[2] त्रमाट घण।
समै अरावै सलक, इन्द्र गरजंत जोय मन॥
धकिये स धाय दिस पधरीय, गढ़ सैथल मुकाम ढरि।
प्रतापराव वोले वचन, यन जीवत लैहों पकरि॥[३५८]

दोहा : लघुता ते दीरघ भये, निमष हमारो षाय।
दो हरांम साम्है परे, आ तन आड़ी आय॥[३५९]

चौपाई पातल राव वचन यों वोले। जो हलकारे वा दल षोले॥
श्रवण बात मंत्री सुनि जोई। षत भूपति पै दये पठोई॥[३६०]

दोहा : आये दल वल सवल सजि, धके राव परताप।
हम वलकी अव वात ने, सलाह आपनो आप॥[३६१]

छंद पधरी : षत जोय[3] जाय पहोचेस पेस।
वंचेस षोलि पातल नरेस॥
वर कियो भूप दरवार दीप।
उमराव जोय मंत्री समीप॥
नर नाथावत कह्यिे सुनांम।
चित चाहि चतुरभुजोत ठांम॥

---
१ (व) जो। २ (ख) टका। ३ (क) जाय।

कहिये षगारोत बानिवोत ।
पच्चारणोत बलिबधोत ॥
कुंभावत कुमाहरण धीर ।
भरिण बांकावत विरधंत वीर ॥
सुरतानोत स्योब्रह्मवोत ।
कीतावत किलकारिणवोत ॥
राजधरा धीरावत सोय ।
जोगी कछवाहा भाम जोय ॥
हमीरदेक कहियेस ठांम ।
तीजि ओर तामवरण[1] स नाम ॥[३६२]

चौपाई : हाड़ा खीची उमर नावै । जादव भूप करोरी[2] ठांमै ॥
सीसोधा राठोर पंवार । तंवर गौड चौहाणस लार ॥[३६३]

दोहा : बैठ्यो पातल पाटपति, कछवाह सिर मोड़ ।
मंत्री दो सजे निकट, रतनराय अरु रोड़[†] ॥[३६४]

दोहा : तिन पातिल दीने हुकम, आमावति के राज ।
धरणि राजगढ़ राव पै, कीजै चलण समाज ॥[३६५]

छंद पधरी : बर हुकम होत बजे त्रमाट ।
सजी सैन दल सबल ठाठ ॥
गजराज बाज तोवै तयार ।
चढ़ियेस भूप परताप वार ॥
सहस साठि नर बाजि चंग ।
उमराव सग सावंत संग ॥
उतरेस आनि धूलैस ठाम ।
डेरास ढालि कीने मुकाम ॥
यों सुनी रावराजास बात ।
चलियेस ध्याय नरपतिय आत ॥

१ (क) तामवरणा । २ (ख) ककरोपो ।

† रतनराय और रोड़ाराम खवास दोनों ही मंत्री थे । (ख) प्रति में यह पंक्ति नहीं है ।

तब राज काज दरबार कीन।
मत्री सु बंधु सब बोलि लीन॥
बोलिये आप परतापराव।
आयेस राज[1] होय[2] क्रोध[3] भाव॥
कहियेस सूल सलाह होय।
दीजे विचारि कीजेस सोय॥
बोले सु बंधु[4] मत्री विचारि।
परतापराव यह सला धारि॥
कछवाह वंस तो तिन सु ठाठ।
तिन तिलक भूप आमेरि पाट॥ [३६६]

दोहा : मंत्री बंधुन के वचन, पातल किये प्रमाण।
सजि दल सैंथल ठाम तजि, टरे स्याम सिर जाण॥ [३६७]

चौपाई बहुरी कूच पातिल दल कीने। डेरा आय अजबगढ़ दीने॥
चौकी चंग चढे तिन[5] सोई। राजा राव दलन की दोई॥[३६८]

छप्पय : दीना[6] येक दल दोय जोय चौकी चढ़ि आई।
अणि अणि जुड गई वणी हुई[7] वरजोर[8] लड़ाई॥
हुई षबर दल दोय जोय चढ़ियेस जोर भरि।
सबल सूर[9] सावंत ध्याय धकियेस क्रोध करि॥
इत पातल नृप राज दल लइय राडि रुकै कटक।
सबल जांनि दल स्याम के चिगे† रावराजा कटक॥[३६९]

दोहा : षिसे राव पातिल कटक, जीते नृप दल जोय।
पातल बूझे बंधुवर, कहै सलाहै सोय॥ ३७०]

चौपाई : यों बंधू मिलि वचन उचारौ[10]। जबर जोर भूपति दल भारौ[11]॥
ताते सल्हा एक यह कीजे। चलन ठांम राजगढ़ कीजे॥[३७१]

---

१ (ख) राघ। २ (ख) कोघ। ३ (ख) होय। ४ (ख) ×। ५ (ख) नित। ६ (क) दीनी। ७ (क)(ख) ×। ८ (क)(ख) ×। ९ (क) सू। १० (क) उचाररौ। ११ (क) भाररौ।

---

†मत्स्यप्रदेश मे 'धीरे से हटना' के अर्थ मे प्रयुक्त।

दोहा : पातल बंधुन के बचन, किये पेस परवांन।
आप सगि दल बल सहत, राज राजगढ़ थांन ॥[३७२]

दोहा : राज राज़गढ़ राजई, पहौंचे राव प्रताप।
तब हलकारा षत दिये, सुणी भूप परताप ॥[३७३]

छंद पधरी : चढ़ियेस गज पातिल नरेस।
संगि सहस साठ फौजे प्रवेस ॥
मघ मध्य रावगढ़ एक आन।
ते ठाम नांम सैथल[1] निधान[2] ॥
देषंत जाहि नृप हुकम दीन[†]।
अब याहि तोड़ि जब कूंच कीन ॥
लगेस मोरचा[3] जबर जोर।
जुटियेस जोध अति क्रोध होर[‡] ॥
वत कीले मध्य भारीस भीर।
जुरि ठांम ठांम रजपूत वीर ॥
टूटेत सार फूटंत पार।
कूकंत षेत[4] घायन सुमार ॥
रुपि करिय राड़ि[5] जिन मास दोय।
लजिलये नीति[6] नृप किलो जोय ॥
चलियेस भूप करि करि मुकाम।
पहुंचे स आनि वसवेस ठांम ॥[३७४]

छप्पय : बसवो सहर सुनाम ठांम भूपति दल आयव[7]।
नाम षुस्यालीराम निकट वर भूप बुलायव ॥
कहै अैन मुष बैन कहो जव अब प्रमान करि।
लै फौजे पचरंग संगि लडि लेह राव घर ॥
सुनत वचन मंत्री उठे करि सलाम भरि वहो वलन।
बजि त्रमाट विराट वर[8] दिस पूरब कीनो चलन ॥[३७५]

---

१ (क) × । २ (क) × । ३ (क)(ख) मोरया। ४ (ख) × । ५ (क) गड़ि। ६ (क) नी। ७ (क)(ख) आव। ८ (क) × ।

[†]प्रति (क) मे यह चरण नहीं है। होर—हौं'र (होकर), होड़, राजस्थानी यथा न्हां'र, पीं'र।

दोहा : मंत्री चढ़ नृपराज के ले, सगि सभर समाज।
गढ़पति भारे भोमिया[1], तिन तव परी अवाज ॥[३७६]

चौपाई : भजे वास निवास तजे। गढी गढ़ा गोला[2] घन गजें ॥
लई ठाम दो च्यार लड़ाते। पातिलराव सुणी सो वातें ॥[३७७]

छप्पय : सुणी बात परताप आप चढ़ियेस तास वर।
सूर वीर सावंत संगि ले नरू नृपति वर ॥
ताजि बाजि कर तेज तुरकीस पदरीय।
वधि मोला वानेत[3] कछावा[4] छीवड़ भरिय ॥
पहुँचेस जाय नृप दल निकट सेल सर भर भूलिये।
हलमले भूपदल हाक सुनि पातिल दल दुंदै[5] किये ॥[३७८]

दोहा : कोप होय नृप वचन कह, सब दरबार सुनाय।
अब चलि देषें राजगढ़, अलवर राव भजाय ॥
उत[6] चलि दल भर भूप के कीने मध्य मुकाम।
नाम जामड़ोली निकट, जीति लड़ाई ठांम ॥
धरणी राजगढ़ तात के, वंधु किये वर आंन।
राज लाज की काज पर, पातिल हुकम प्रमाण ॥
मंगल दल आवन कियो, सुनी राज परताप।[7]
चाय भाय करि चित सु लीये कोकि नृप आप ॥[३७९]

छप्पय : मिलिये मंगल जाय[8] भूप आदर अति कीनव।
पातिलराज प्रताप आप आसन उठि दीनव ॥
कही राज वर बात आत तुम भली कीन अब।
करि सलाम यन कही नजर सेगाइ सौरि सब ॥
घर धणी आप आवन कीयौ अलक्ष्यौ है अन मौन अति।
लै वंधु आदि आसैरि कौ सुलझावत आमेरपति ॥[३८०]

दोहा : घुसी हुए नृप वचन सुनि, बहुरि जुवाब यों दीन।
देषत आये राजगढ़, देषि कहो सो कौन ॥[३८१]

---

१ (क) भौमिया। २ (क) घोला। ३ (क) वनित। ४ (क) वछावा।
५ (क) दुलै। ६ (क) (ख) उ। ७ (ख) आज। ८ (क) ×।

छंद भुजंगी : बजे भोर नृप के दलों सों नगारे।
चले राज सगे सुदल सथ भारे॥
असैं गोल गोले अराव[1] सु ठठै।
पीछे कटकै चढ़े इंदु घटै॥
उडी रैनिका भूमि भारी अघारी।
मनो वासरंग की भई भूमि कारी॥
यसी राजगढ़ ठाम हौती अवाजै।
आये कटकै रटकेस काजै॥
यसी रावराजा सुनी बात सोई।
हुकमै दिये सौ किसी बाज होई॥
चढ़े सूर सावंत महमंत[1] भारे।
धरे नाहि पीछै टरै नाहि टारै॥
कछी अरबी तुरकीस ताजी।
षदारी करंते मनु बाज बाजी॥
दुहु वोर उडै अरावैस धुमं।
मनु इंद्र गजै अवजै स भुमं॥
कटै सुर मथै वहै हथवारं।
लगे वाण बंदूक तेगैस तीरं॥
रची राड़ि यतै वतै जुध भारी।
न को कोय जीते[2] न को आत हारी॥
किले रावराजा करी यौं लराई।
जुटी भूप फौजै सु वाजी न पाई॥[३८२]

दोहा : बोलि षुस्यालीराम सुं, कहे भूप बर बैन।
राव जु[3] आगल[4] राज की, राव रहे घर[5] चैन॥[३८३]

चौपाई : वचन सला के अब लीष दीजै। राव कहै सोही तुम कीजै॥
दलन चलन जैपुर दिस होई। कीजो राव कहै अब सोई॥[३८४]

---

१ (क) (ख) मह। २ (क) जीत। ३ (ख) ज। ४ (क) (ख) अगल।
५ (ख) धर।

---

[1]एक प्रकार की तोपें।

छप्पय : वचन भूप कै सुरण जोय मंत्री प्रमारण किय।
लिषिये जोग जुवाव रावराजा स पेस दिय॥
भूपति आये वारि आरि मिलिये सवेग अति[1]।
मति दुर[2]मति करि दुरिय सिवर धारियै साच चित॥
अरज दास की आप लगि औगुरण गुरण निवारियै।
कर जोड़ेस षुस्याल कह मो सलांम अब धारियै॥[३८५]

छप्पय : ते षत पातिल बंचि संचि दरबार कीन भर।
मंत्री सब उमराव बंधु लै कह्यौ वचन भर॥
कहरण होय सो कहो सला सांची हम धारत।[†]
.... ॥
कीनीस मंत्री बंधु अरज अपगाली बुधि कों चली।
रावराज तुम घर धनी कीजै सो जाणौ भली॥[३८६]

दोहा : षत भेजे पातिल बहोरि, सलाह आप उर धारि।
मिलरणो राजकवार को, भूपति कै दरबारि॥[३८७]

दोहा : मत्री षुस्यालोराम षत, बंचि अरज जा कीन।
भूप कहै पातिल कहै, जो मंत्री करि लीन॥[३८८]

छंद पधरी : लिषियेस जोग मंत्री जुवाव।
धारीस आप कीजैसि चाव॥
चाहि आप पै भूप नाय।
कीजेस आप आवै सदाय॥
बंचि रावराजास लीन।
गज बाजि बोलि हुकम दीन॥
बजत बंब तिरमाल तुर।
सजेस सूय रजपूत सूर॥
गज चढ़े कंवर वषतेस नांव।
किलके नकीब[3] कीनो तमाम॥

---

१ (ख) पति। २ (ख) दर। ३ (क) मकीब।

[†]इस पंक्ति के पश्चात् (क) प्रति मे दो पंक्तियाँ तथा (ख) प्रति मे एक पंक्ति नहीं है।

सिर चवर ढाल तिरमाट तास।
पचरंग रग अगेंस पास ॥
जो षबर भूप नष हुई जाय।
उमराव लीन साम्है पठाय ॥[३८९]

दोहा : चाय भाय भूपति मिले, नृपित षुशी की नीति।
बासाये साम्ही सुरति, राजकवर की रीति ॥[३९०]

दोहा : दीये बाज गजराज सब, सिरोपाव धर राज।
राजकवर कौ सीष दी, नरपति करी निवाज ॥[३९१]

इति श्री प्रतापरासो जाचीक जीवण कृत अष्टमो प्रभाव ॥८॥

नवम प्रभाव

चौपाई : राजकवर राजगढ़ आये। वहोरि भूप दल कुंच वजाये ॥
डेरा गांव सु डेरा दीने। भूप मुकाम बहोत दिन कीने ॥१॥†[३९२]

दोहा : काहु कही नृपराज सूं, अरज जुगल कर जोरि।
हलद्या मंत्री राव के, मिलिया कहै किरोड़ि ॥२॥[३९३]

छप्पय : सुणी राज‡ परताप कोप भरयेस आप अति।
करैं दाव दल भंग अंग धारीस साच चित ॥
करे वार दरबार कोकि मंत्री सु बुलायव।
षुस्याल दोल अरु नंद याद करतै त्रिहु आयव ॥
देषंत भूप दीने हुकम कारंदा कर कैद किय।
आदि थांन आमैर गढ़ विकट ठाम धर धर दिये ॥३॥[३९४]

दोहा : हलद्या[1]* नृप गाढ़े गहे, करे कोप अति आप।
जो बातै सरवण सुणी, रावराज परताप ॥४॥

---

१ (ख) हलधा, (क) हल।

---

†पहले प्रभाव में छदो की क्रमसंख्या कुछ चली थी और इस अंतिम प्रभाव में भी प्रारंभ की गई है, किन्तु ४ तक ही चल कर रह गई। यह क्रम (क)-(ख) दोनों प्रतियो में इसी प्रकार है।
‡यहाँ (ख) में लिपिकार को भी भ्रम हुआ है—कई बार 'राव'-'राजा' में भ्रम हुआ, जो पुनः पुनः संशोधन से सिद्ध होता है।
*हलदिया, हल्दिया, हलद्या—आज भी कई रूप प्रचलित हैं।

क्रोध होय पातिल कही, सुनतैं बचन सुनाय।
काके हलद्या कोन नृप, पड़े[1] फंद कहां जाय॥[३९५]

चौपाई : बालिक जिम पाले त्रहु भाई। लघुता ते मैं किये वड़ाई॥
मेरे मेरे नांय विकांनें। दोय परा[2] दिस च्यार रौ जानैं॥[३९६]

दोहा : ज्याये तो मो हथ ही, मारूं तो मो हथ।
मो जीवतव न मारि है, नीढ़ि आमवत नथ॥†[३९७]

छप्पय : यसी आप[3] उर धारि‡ वारि पातिल लिष दीनी।
अहमंदान नवाव जोग ज्वाव लिष लीनी॥
ये षत बंधु बंचि संचि जानियो येक मन।
हम पैं भारी भीर धीर धरिये न येक छिन॥
षत जोजि बंच नवाब नर पहर परत कीने चलन।
अराव सुठठ दल बल सबल धर पछिम कीने चलन॥[३९८]

दोहा . कहर कुंच दर कुंच कर, कियो निकट धर आंन।
जो हलकारैं षवर दिय, पातिलराव प्रवाण॥[३९९]

छप्पय : मिलन काज दल साजि रावराजा चढ़ि चलिब।
आवन सुनत नवाव आप साम्ही भुज मिलिब॥
वुझी आत[4] सु बात काज को कीये याद हम।
रावराज परताप करन होय सो कहो तम॥
बोलिये रावराजा बचन धरपति अति करिहे जलल।
स्याम सरन हम सुन हुये तुम दिली दल वल सकल॥[४००]

दोहा : यों सुन जुवाव नवाब नर, दल साम्ही धर ध्याय।
षवरि भई भूपति कटक, तेन तपति अति ताय॥[४०१]

चौपाई : हलभल पड़ी भूप दल भारी। षरी रहैं फोजें सजि सारी॥
सांवत सूर रहै चढ सारी। वाजि पलाण रु गजन अवारी॥[४०२]

---

१ (ख) षडे, (क) जुडे। २ (ख) पराह। ३ (ख) अ। ४ (क) आ।

---

†इस दोहे के पिछले तीन चरण (ख) प्रति में नहीं हैं।
‡ऊपर के छूटे चरण यहाँ लिखे हैं।

दोहा : षांनदांन नहि जाणि वो, पड़ै कहर दल काम।
धर धरि[1] सूधी आत धर, पल न परत विसरांम ॥[४०३]

छंद त्रोटक : वर भूप कियो दरबार जवै। उमराव रु मंत्री संगि सबै॥
तब बात उचारि विचार कही। वणि सज से महाराज लही॥
कर देष वैरावक सेक[2] करी। सिर उपरि व्याधि उपाधि षरी॥
करणी[3] महाराजसि को वरजै। हलद्या अब लायक या गरजै॥
कर जोडि करत यसी अरजी। करीये सब आप षुसी मरजी॥
त्रप यौ कहि ये कहियेस उसी। करिहै अब जो सब होत षुसी॥
वर भूप[4] वरैस[5] दियो हुकमै। बुलीया[6] हलद्या सहमे[7] ठकमै॥
वर भूप नवेस होवेस घरी। सिर नायस आप सलाम करी॥[४०४]

दोहा : अति महैमा मनुहार करि, कानां आदर भाव।
तिहुं बंधुन को त्रपति नर, पहराये सिरपाव ॥[४०५]

चौपाई : नरेस पेस लै यौ फूरमाई। कीनी ते करतार कराई॥
ये आये दिली दल भारी। यह मंत्री है वार तिहारी† ॥[४०६]

छप्पय : सुणि मंत्री नृप वचन जोड़ि कर अर्ज सु कीनीय।
करू मांन परवान हुकम भूपति मो दीनीय‡ ॥[४०७]
× × × × ×

छंद भुजंगी : यसी राज फौजै सहुंनी अवाजै।
आये कटकै रटकेस काजै॥
दुहुं भार भारी अणी आण मंडी।
बहै गोल गोला किती सेन षंडी॥
तबै राज की फौज बाजे बजाये।
यते हुल हाथी समाही धकाये॥

---

१ (क) पर। २ (क) से। ३ (ख) वरणी। ४ (ख) भू। ५ (ख) करैस।
६ (ख) षुलीया। ७ (क) सते।

---

†चौथा चरण (ख) प्रति मे नहीं है।
‡आगे की चार पंक्तियाँ किसी भी प्रति मे नहीं हैं।

वहै तीर तरवार वानै वरछी।
वहै बाघनो वीर वन्दूक अछी॥
समै राव मंत्रीस कीनी[1] लड़ाई।
षिसी राज की फौज तर ताप पाई॥[४०८]

दोहा : मंत्री रामसेवगवि, होसदारषां संगि।
स्यांम नाम के काम परि, जो वर जीते जंग॥[४०९]

चौपाई : सो पटल सीधे सुनि कानन। पातिल राव जवर परवानन॥
चाह करी मुष वातै यो वोल्नी। लेहु वोलि दल लेहु हरोली॥[४१०]

छप्पय समै सैल सीघो[2] पटल छल छलैं वहरि दिसि।
हिदवान तुरकान पाण किरवांन कियो वस॥
दषण दल वल[3] सवल[4] तास के कहिये नायक।
लषन[5] सेनि ता संग जंग[6] जीतंत कतायक॥
जिम धनी राजगढ याद किय रावराज कीने चलन।
षुसी आय अति चाय चित किय पातिल सिंघे मिलन॥[४११]

दोहा : अति आदर सनमान किय, दिये वाजि गजराज।
पातिल पाटल सिंघ प्रति, कहीये करो हम काज॥[४१२]

चौपाई : पातिल पै सुनतै वर वोले। जानै हम वोजे सो षोलैं॥
कही पटल सीधे[1] यह कीजे। धरि हिंदवान दांम लै दीजे॥[४१३]

छंद पधरी : सुनि कही रावराजास येह।
करिहैस काज सरिहैस देह॥
मैं दल हरवल अगैस पेस।
लै देहु दाम चलि देस देस॥
कीनीस वात सिंघे प्रवाण।
दल किये देस पछिमस जांन॥

---

१ (क) की। २ (ख) साधो। ३ (क) दल वल। ४ (क) समाज। ५ (ख) लषम। ६ (क) जगे।

---

[1]पटेल सिंधिया।

गढ़पती जोय सजै सु दाय।
भजैस वेगि गोला बजाय[1] ॥
मुरडंत जोय लीजे संमारि।
उरवंत जोय दल मिलै आरि ॥
बरबसी रावराजास कीन।
घर ठाम ठांम सो लये छीन ॥
डेरास निकट जैपुरस कीन।
धरपती भूप कौ किसत दीन ॥[४१४]

दोहा : दिना एक जैपुर दिसी, चढ़िये राव प्रताप।
तप बल[2] अप बल[3] संग लै, गज होदा सजि आप ॥[४१५]

दोहा : षरे रहे सजि वरकिसा, स्यांम धरन परवांन।
टलिये पातल तासवर, आदि ठाम सिर जान[4] ॥[४१६]

दोहा . धरा ढुंढाहर मुरधरा, लियै पटैल भरि दाम।
लियेस पातिल तासवर, गये च्यारि गढ़ ठांम ॥[४१७]

छप्पय : दल दिषणे बल सबल जाणि आमैरिनाथ नर।
मुरधरपति कौ लिषे लेहु षत येहु वंचि वर ॥
हम घर तुम घर दाय आय यन कियो दूंद दल।
हम दल तुम दल संगि होव भंजैस मारि षल ॥
ब्रिजराज बंचि मुरधर धणी आप दलन दीनो हुकम।
परतापराज आमैरिपति मिलो वेगि ता दलन तुम ॥[४१८]

छप्पय : जो सुणी राज परताप आप मुरधर दल आयब।
किये वार दरबार कोकि मंत्री सु बुलायब ॥
नामस दोलतिराम ठांम आवन वर कीनिय।
कही गाज नृपराज हुकम मत्री प्रति दीनीय ॥
चढौ प्रात दल दिषणसी आन कियो अति दुंद घर।
आमैरिनाथ बोले बचन ल्यौ पटैल जीवत पकड़ ॥[४१९]

---

१ (ख) जोय जाय। २ (क) तब बल। ३ (क) अपदल। ४ (क) नान।

दोहा : यों वोले वर वचन सुणि, मत्री दोलतराम।
देषे अप सिर पर रखे, षांनजाद[†] के काम ॥[४२०]

छंद पधरी : चढ़ियेस राज पातल नरेस।
दल आप वियो सुरधरस पेस ॥
जो सुनी वात सिवे[१] प्रमाण।
वूभेस राव परताप आण ॥
कह्येस जोय में जीसी कीन।
तुम सल्हासूल सांचीस दोन ॥
वोलिये राव परताप नांम।
यक वोर कोन रजपूत कांम ॥
चढ़ियौस वार सींध्यौ[‡] पटेल।
तोषार[*] चढि षड़िये सुगेल ॥[††][४२१]

छप्पय × × × × ×।
× × × × × ॥[‡‡]
जौं नवाव सु ज्वाव करु सरसी विधि सारिय।
कहण होय सो कहो जिसी वल वुधि हमारिय ॥
करि सलाम मंत्री उठे स्याम काम कीनो चलण।
नांम षुस्यालीराम ते पहौंचि दिली दलन ॥[४२२]

दोहा : अहमंदान नवाव सुं, मिलिये मंत्री जाय।
हंसि नवाव अैसे कही, भली कीन तुम आय ॥[४२३]

चौपाई : वोले मंत्री वचन सुनाये। कौन काज तुम या घर आये ॥
लैण होय सो मोसुं लीजै। वहोरि कूंच दिली दिस कीजै ॥[४२४]

---

१ (क) सीधे।

[†] नौकर।

[‡] सिंधिया। जैसे 'हल्दिया' से 'हलद्या', उसी प्रकार सिंधिया का 'सिंध्या'। 'हलद्याजी की हांक सों सिंध्या नाज्यो जाय'—एक प्रचलित उक्ति।

[*] घोड़ा।

[††] (ख) में यह चरण नहीं है।

[‡‡] २ पंक्तियां नहीं मिलती हैं, छप्पय की अंतिम चार पंक्तियाँ दी जा रही हैं।

दोहा : जब नवाब अैसे कही, देहु लेहु नहीं दांम।
काम षुस्यालीरांम सूं, सदा षुस्याली राम ॥[४२५]

छंद पधरी : बोलेस बात मंत्री सजोय।
करिहै नवाब जो षुसी होय॥
बोले नवाब यक रंग अंग।
करियेस कुंच चलियेस संग॥
कीनोस बात मंत्री प्रवाण।
दल किये कूंच दिली दिसान॥
सो सुणी रावराजास बात।
चढ़ियेस आप जब पहर प्रात[†]॥
मग[1] मिले[2] रावराज सवार।
नवाब राज मंत्रीस लार॥
चलियेस कुंच दर कुंच कीन।
डेरास निकट दिली सु दीन॥[४२६]

दोहा : जा देषि दिली नगर, ढूढो ढंग कुढंग।
गिरदी होत गनीम की, छतरपति बल भंग॥[४२७]

छप्पय : अहमंदान नवाब देष वर वचन उचारिय।
रावराज परताप आप यक सुणौ हमारिय॥
देहु मेटि दुष दुंद करू आनन्द दिली कों।
आप रहों सिर षेड़ कियो देषव अब[3] ही को॥
रावराज बोले बचन सिर धरिये दिली धणी।
तो जाणों सो रीस सब × × ×[‡]॥[४२८]

दोहा : गनीम मारि कीनो गरद, मिटे दिली दुष दंद।
राव लगे पतिसाह पग, दियो तषत सिर कंद॥[४२९]

---

१ (क) ×। २ (क) ×। ३ (ख) देष अबव।

[†]यह चरण (क) प्रति में नहीं है।
[‡](ख) प्रति मे यह पूरी पक्ति ही नहीं है।

दोहा : साह कियो सनमान अति, कीनो आदर भाव।
राव पटतर राज है, राज पटतर राव ॥[४३०]

दोहा : सिर सोहन सिरपेंच[1] दिय[2] जटत किलंगी हमाल।
सपत पारचे[†] षिलत[3] दिय अरु समसेर दुसाल ॥[४३१]

छप्पय रावराज परताप आय दिली तज चलिव।
कीनौ प्रताप पयान आन देसन दिस हिलिव॥
मग मझारि यक गांव नाव पाली प्रमाल किय।
अस[4] मग जहै वास तास कै घने माल[5] लिय॥
यों परि धाक दिली धरन मारत आवत त्रपत नर।
साम्हीस आय सिर नाय[6] कै करत भोमियां भट भर ॥[४३२]

दोहा : देस पहोंचे देसपति, रावराज परताप।
षुसी मान अलवर किलो, गज तजि उतरे आप ॥[४३३]

चौपाई : राव राज अलवर गढ़ आये। षत भूपति कौं दिये पठाये॥
(ये) षत वचि नृपति अव तीजै। दैन कहै गढ़ च्यारिस दीजै ॥[४३४]

दोहा : जो षत भूपति वंच वर, लिषे न वहोरि जुवाव।
क्रोध होय पातिल कही, अव लै लहु सिताब ॥[४३५]

दोहा : वर हलकारै षवर दी, राव राज[7] पै जाय।
कोट फोज त्रप की पड़ी लछमनगढ़ सुधि आय ॥[४३६]

दोहा : बुझी पातल चाह[8] करि, कोन यक यो वात।
है धामाई[9] लालजी, जो हम सुणी कहात ॥[४३७]

छंद भुजंगी सुनी रावराजा यसी[10] वात सोई।
हुकमै दियो आप मंत्रीन जोई॥
चढ़ो वेग ही सो सवै फोज सजो।
पगै मारि जा भूप की फौज गजो॥

१ (ख) पोय। २ (ख) य। ३ (ख) पिल, (क) लिपत। ४ (क) स।
५ (ख) मालाल। ६ (ख) नाम। ७ (क) रावरा। ८ (क) (ख) चह।
९ (ख) माई। १० (क) यिसी।

[†] सात प्रकार के वस्त्र विशेष से निर्मित।

सुनतै यसी जो चढ़े राव मंत्री।
लिये[1] सूर सथै छको छोह छत्रो ॥[४३८]

छंद पधरी : जुड़ईस दोय दल अणी आनि।
आमैरिनाथ दिषणी दलानि ॥
बाजंत गोल गोलास गुम।
गरजंत[2] इंद्र धर परत धुंम ॥
हलास हल आमैरिनाथ।
कर कटि तेग घण सूर साथ ॥
मिलियेस जाय ताते तुरंग।
रचियेस वेर दल दोय गंज ॥
भर धकै छाकि छत्रीस छोह।
वर बहै[3] तेग[4] वरछास स्योह ॥
कर बहै वीर दल दीष हथ।
झड़ि[5] पड़े षेत घन सूर सथ ॥
यन सैन कूटि लीनी गलान।
फिरि गई पूठि दिषणी दलान ॥
सीधै पटैल पाईस ताप।
जीतिये नथ[6] आमैरि आप ॥[४३९]

दोहा : सेन षसति सीध्यो भजौ, छांड़ि बाज गज सज।
पातिल नर आमैरिपति, बरजोले रण जंग[†] ॥
फते पाय आमैरिपति, गुमरै भरो अटंच।
जुरे राव परताप तही, उतरी रणक पचंग[‡] ॥[४४०]

चौपाई : सीधो दल धीरज नही धरै। घुधु प्रात जिसी जब करै ॥
बुझी पातिल सो वर यैसी। दुरि दिषण अब कीजै[7] कैसी[8] ॥[४४१]

---

१ (ख) सिये। २ (क) रजत। ३ (क) बह। ४ (ख) नेग (क) गं।
५ (ख) झडी। ६ (ख) तथ। ७ (ख) काजै। ८ (ख) किसी।

[†]केवल (ख) प्रति मे।
[‡]केवल (क) प्रति मे।

दोहा वर पातिल बोले वचन, रहौ पटैल मन सेर।
जीत हार करतार हथ, करत न लागै देर ॥[४४२]

चौपाई : वर पातिल यो वचन सुनाये। दल पटैल अलवर गढ़ आये॥
नरवर आप यसो पणधारी। कहै पटैल यह ठांम तुम्हारी ॥[४४३]

छप्पय : यसो राव परताप आप मति महा भीमवल।
गढ़ वावन घर घणी दिली आमेरि मझि थल॥
अलवर साहि सुठांम विकट वर किलौ तास तर।
सेनि सुभर भरपुर सूर घण रहै सार सजि॥
नरु निषत्र कुल पाटपति यसो रावराजा धरणि।
घर दिषण देस नायव दलन सो लिये राषि सीध्यो सरणि ॥[४४४]

दोहा : रषि सींध्यो दिल धीर दे, दई सीष वर आप।
हम सामिल तम काम परि, यौं कह्यौ राव प्रताप ॥[४४५]

दोहा कहे रावराजा वचन, जाव सेष तुम संग।
वात न मानी स्यांम की, रती येकने अंग ॥[४४६]

दोहा : पन[1]धारी पातिल मनै, टारी नही न टेक।
जीवणषां होसदारषा, दिये कैद करि सेष ॥[४४७]

दोहा : समै धारि पातिल सुरति, सजी फौज घण[2] गैल।
गज होदा चढ़ि हण लिये[3], कीन किला की सैल ॥[४४८]

छप्पय : हृदि नोवत नदि वजि गजि टंका[4] त्रनाट घन।
रची सुरंग सव[5] संग त्यारि तोवैस आगे वन॥
समरि राजपुर ठांम नाम टहलैस समरि वर।
गौंसिथाल कीलो सम्हारि अपनाय नृपति वर॥
गाजीयान वर आंनि करि समर किलो मुकाम कियो[6]।
मंत्री वंधुन तास वर हुकम रावराजा दियो ॥[४४९]

दोहा : चढो वेग या वेर ही, करो न पल विसराम।
भंजो गोला मारि गढ़, राजणोत गढ़ ठांम ॥[४५०]

---

१ (ख) गन। २ (क) ×। ३ (ख) हलिये। ४ (क) क। ५ (क) संच।
६ (ख) करि।

चौपाई : सुणि मंत्री चढ़िये तिह वारै। फौज संग घण तोव तयारै ॥
करि मुकाम पहुँचे वा ठामै। कहियत राजणोत गढ़ नामै ॥[४५१]

दोहा : मंत्री रामसेवग वरै, लीनो गढ़ गिरदान।
उठे गोल गोला गिरद, जैसी असणि प्रमाण[1] ॥[४५२]

दोहा : गांव मारि करि[2] गढ़ गिरद, वहौरे मंत्री नाम[3]।
आये गाजीथान गढ़, करि पातिल सलाम ॥[४५३]

छप्पय : राजणोत गढ़ जोरि तोड़ि मंत्री वर मिलिब।
रावराज परताप आप अलवर गढ़ चलिव[4] ॥
छड़ी सेन ले संगि अंगि आनंद धार चित।
मगल मझारि तिहि वारि चल कियो तेज अति ॥
पहौंचस आनि अलवर किले त्रिकालद्र जाणीस जब।
कियेस यादि करतार अब बोलि पठाये कटक सब ॥[४५४]

दोहा : षत बंचत चलिये कटक†, किये यादि क्यों राज।
उतरै आ अलवर किलै, (मिल) मंत्री बंधु समाज ॥[४५५]

चौपाई : मिलि पातिल यों वचन उचारे। मंत्री बंधुन सो वा वारे‡ ॥
धर अमर नर कौन रहायो। आयो गयो गयो फिरी आयो ॥[४५६]

छप्पय : कहां करु जरजोव कहां पोंडौ रु पंचधर।
कहं विक्रम कहां भोज कहां बलि दान करन कर ॥
कहां चकवै मंडली कहा रावण बलवंता।
हटवारै ज्यों हरषि आय चलि गये अनंता ॥
यों कहैं रावराजा वचन मंत्री बंधुन तास वर।
मिटै न लिषीयौ लाष बुध जो करणी करतार कर ॥[४५७]

दोहा : रावराज यौं वचन कहै[5], धरौ चरन निज ध्यान।
पहर प्रात बैकुंठ धर, पातिल कियो पयांन ॥[४५८]

---

१ (क) रमाण। २ (क) ×। ३ (क) सेवग नृप सु करी सलाम। ४ (क) वलिव। ५ (क) उर माँहि हरि।

---

†(क) प्रति मे यह प्रथम चरण नहीं है।
‡(क) प्रति मे नहीं है।

चौपाई : कूक परीस किलै अति नारी। परै कहर किलसे नर नारी ॥
उर अनंद बीकावत राणी। सपत जनम अरधंगा जाणी ॥[४५६]

दोहा : सोला ओर बत्तीस सजी, मन कर अनत उमंग।
सती सकति बीकावती, जरीस पातिल संग ॥[४६०]

छप्पय : दिली सुणी दिषणादि सुणी आमेरिनाथ नर।
वीकाणे जोधान कह्यौ सुणि डिग्यौ थंभधर ॥
अपति नरू साछात यसो नर करनि न कोई।
किला कोटि घर गंजि आप अजगंज गयोई ॥
उतरादि दषिण पुरब पछिम ताणि तल घर जवर छक।
जग बात जगत रहसीरि घ्रू[1] अमर निरंजन नाव यक ॥[४६१]

दोहा : धरमदान सुभ करम करि, जा करि निमत नरेस।
तव प्रत पातिल रावरो, वणो तिलक वषतेस ॥[४६२]

छप्पय : राज तिलक वषतेस मुकट त्रप नर सिर सजिय।
मंगल तिय गुन गाय वार नोवत[1] वर वजिय ॥
निजर वाजि गजराज हुय पोसाष[2] विविध[3] वर।
सहस नरन ते नाय सिर कर सलांम जिन सिर चवर ॥
ढलि हलभल भल[4] रतीय फिरी दुहाई देस घर।
वषतेस रावराजा वली तषत तीसरै अपति नर ॥[४६३]

दोहा : नर हैवरा सिर निजरि, राजै राजा रीति।
रावराज पातिल तणौं, वषत नरेसां नीत ॥[४६४]

छंद पधरी : वषतेस रावराजा नरेस।
तप वडो राज राजंत देस ॥
नर नरु पाटपति कुल निधान।
किरवान दान छत्री प्रवाण ॥

---

१ (ख) तोवत। (क) वित। २ (ख) योसाव। ३ (क) द्रविन। (ख) इरीधन। ४ (क) ×।

---

[1] ध्रुव।

नर वाजि गज त्रय रहत गैल।
बन विकट मेर सिर होतसैल॥
चमचमै वोठ बंदूक त्यार।
नित होत सिंह सूरां सिकार॥
लगि लोह तेज तड़फडत जीव।
सिंहणीय भौंडि परसै न पीव॥
सोहता माल सूरास दर।
भोगंत माल छत्री मरद॥
संग रहै सायर गरम चोड़।
माणंत छाक छत्रीस जोड़॥
रावराज परताप[1] नंद।
नित अष्टजाम आनंदकंद॥[४६५]

छप्पय : वरन हीन कुलहीन जाति आधीनवांन[2] अति।
उर विचार यो धारि अंक ये किये जोर वित॥
लघु दीरघ नही लहे चले[3] सो कहो निगम गम।
मो मति अति[4] अनुसार वार ये कहे बुधि सम॥
अरदास पती कविजन सुनों जानौं नाहि न पूर कम।
लीजे सवारि कीजे क्रपा कवि पंडित परवीन तुम॥[४६६]

दोहा : मैं सिष हौ तुम चरन को, आठौं जाम अधीन।
परु पाय परनाम करि कवि पंडित परवीन॥[४६७]

इति प्रताप रासो जाचीक जीवण कृत
नमो प्रभाव पूर्णम्
मीति फुस वदी ६ संमत् १९०४†

---

१ (ख) रताप। २ (ख) वीन। ३ (ख) ×। ४ (क) ×।

†(क) प्रति मे इस प्रकार—
इति प्रतापरासो जाचीक जीवण कृत नवमो प्रभाव सपूर्णं। सवत् १९०७ आषाढ़ शुक्ल। ९ बुधवासरे लिपित मिश्र गिरधारी लिषायतं राणोजी श्री मरभटजी आतम भतीज चिरजीव वकसराम पठनार्थं ॥ शुभम् भवतु ॥ श्री रस्तु ॥ श्री जी ॥

परिशिष्ट १

षुसाल कृत

प्रतापरासो (लछिमनगढ़ रासो)[1]

॥ श्री गणेशाय नमः ॥

अथ प्रतापरासो प्रारम्भः

श्री गणेश-स्तुति

दोहा : प्रथम नाम सुमिरैं सवै, गणपति गुन विस्तार।
ताते सव सुख पाय हैं, मंगल हैं अवतार ॥१॥
गजमुख सुमरत सकल नर, सुखदायक हैं नाम।
विघ्नहरण धरि ध्यान वहु, पावैं सुख को धाम ॥२॥

कवित्त : सिन्धुरवदन वुधिसदन रदन चारु,
सिंदुर लगायो श्रोप उदित दिनेस के।
चारि भुजदण्डनि उमण्डनि उमण्ड दुख—
दारिद विहण्डनि वषानत हमेस के।
वर में षुसाल वर महिमा विलन्द करि,
ऐसे जगदम्व हरनन्द वल वेस के।
सुरहू सुरेसहू असेस गुनी ध्यावत पैं,
पावत न पार गुन गावत गणेस के ॥३॥

---

१ पुस्तक के अंत मे कवि ने स्वयं इसे 'लछिमनगढ रासो' कहा है।

अथ राजवंशावली वर्णनम्[1]

दोहा : कूरम वंश उदित भयो, उदैकरन महाराज।
आमेरी निज थानपति, राजन को सिरताज ॥४॥
प्रगट भये बरसिंह नृप, तिनते श्री महिराज।
उदित भये तिनते महा, नरूसाहि महाराज ॥५॥
तिनही ते सब प्रगट हैं, नृपति नरूका वीर।
विपतिहरन धीरजधरन, गौरव गुन गंभीर ॥६॥
तिनते उदित महा भये, लालोजी नृपनाथ।
उदैसिंह तिनके तनुज, जिन सुजसन की गाथ ॥७॥
उदित ओप तिनते प्रगट, भये लाडषां राउ।
फतेसिंह तिनते प्रगट, जिनके सुघ सुभाउ ॥८॥
कलियानसिंह तिनते प्रगट, भये अनदसिंह राज।
तेजसिंह सुभ उदित हैं, जोरावर महाराज ॥९॥
तिनते मौहौबतसिंह हैं, उव प्रताप महाराज।
ताते सुत बषतेस सुभ, सब राजनि सिरताज ॥१०॥
तिनते सुत द्वै प्रगट हैं, विनैसिंह बलवन्त[2]।
उद्यत उदित उदार बहु, धीरज गुन गुनवन्त ॥११॥

प्रतापसिंह[3] सुजस वर्णनम्

कवित्त : चारो ओर सरस जगी है जगती के मांहि,
चांदनी सरस वीचि झलक सुहायो है।
सोभा को समुद सोहै सरस सुधाकर सो,
बरस बरस बीच बढतु सवायो है॥
राजत महीपनि में सकल समाज साजि,
गुन को गनेश वेस छंदनि मे पायो है।
कहत 'षुसाल' श्री प्रतापसिंह महाराज,
रावरो सुजस देस देसनि मे छायो है ॥१२॥

---

१ वंशावली 'प्रतापरासो' (जाचीक जीवण कृत) से मेल खाती है—कोई अन्तर नहीं है। ग्रन्थ-आकार के अनुरूप यहाँ "उदैकरन" से ही राजवंशावली का आरम्भ किया गया है।
२ कवि ने विनयसिंह तथा बलवन्तसिंह दोनो को समान महत्त्व दिया है।
३ प्रतापसिंह अलवर राज्य के संस्थापक तथा इस काव्य के नायक हैं।

बषतावरसिह वर्णनम्

यथा

कवित्त दान सनमान किरवान तप ध्यान करि,
दूसरो जहांन मे न और कवर वर को।
कहत षुसाल कवि सुषमा समूह सो है,
धर्म सिद्धिदायक गरीब परवर को।
दूखे दुप भूखे नर सूपे सरवर भरो,
देवतरु दया मेघ..................दरवर को।
महा मरदाने बषतेस ... ... महाराज,
हिन्द मे न राजा अब तेरी सरवर को ॥१३॥

विनैसिह वर्णनम्

यथा

कवित्त सरस सुवेस जस जाहर जगाई जोति,
जग मे सुवेदन की पद्धति पढाई है।
धर्म कर्म करि पुन्यन के सलिल भरे,
विमल विसाल वेस बंस की वढ़ाई है॥
भक्ति की प्रतीति रीति राषत गोविंद ही सों,
कहत षुसाल ऐसी महिमा वढ़ाई है।
महाराज विनैसिह आपने पराक्रम सों,
कुल के कलस पर कीरति चढ़ाई है ॥१४॥

बलवन्तसिह वर्णनम्[1]

यथा

कवित्त : चहचही चन्द ऐसी चरचि चारु चांदनी सी,
चन्दन सी चँवर सी चारु छवि धारी है।
छीर की सी लहरि छहरि गई छिति छोर,
छीरनिधि छीरहू की छकि छवि हारी है॥
वहवही वास वेस वनक वनाय बनी,
वसत षुसाल वलि पुरहू विहारी है।

१ राज्य के अधिपति विनयसिह थे, किन्तु बलवन्तसिह को तिजारा का राजा घोषित कर दिया गया था—उनका शरीरात होने पर फिर पूरा राज्य एक हो गया।

छाई सुरलोकनि सुहाई ओक ओक चहूँ,
राजा वलवन्त छाई कीरति तिहारी है ॥१५॥

दोहा
विनयसिंह महाराज नैं, कीनी कृपा विचारि।
सो प्रतापरासो सरस, दीजे सुघर सुधारि ॥१६॥
महाराज वलवन्त हैं, गुरवे गुन गंभीर।
कही षुसाल दयाल ह्वै, वरनि कहो सुभ वीर ॥१७॥
प्रथम लिषो कागद सुकर, नजवषान नवाव।
अलवर गढ़ खाली करो, तुव प्रताप महाराज ॥१८॥[1]
निवल जान नवलेस की, लई भूमि सव दावि।
जो सवरी यह दीजिये, कागज वांचत आवि[2] ॥१९॥
लयो देस महाराजि को, करयो उपद्रव राज।
सो सव छांडि विचारि कैं, करो जुद्ध सुभ साजि ॥२०॥
देषि पत्र वांच्यो सही, कही जु राजाराव।
पतिसाहन की फौज सो, मोहि लरन को चाव ॥२१॥
भुजा वलनि अवनी लई, विगरि जुद्ध नहिं देव।
निहचै मन मे जानियो, यह है मेरे भेव ॥२२॥
गढ लै तुव नवलेस के, रुहलखंड किय जेर।
ता धोषे मत भूलियो, नैक न कीजे देर ॥२३॥
कागद लिषि या भांति सो, दीनो पठै उताल।
नजवषान वांच्यो तवै, कीन्हो कोप कराल ॥२४॥
निज मंत्रीन बुलाय कैं, करी जु आप सलाह।
करो तयारी फौज की, सबै सूर नर नाह ॥२५॥
नजवषान नवाव की, चमू चली चतुरग।
वांके वांके वीर वहु, रंग भरे बहु रंग ॥२६॥
नजवषान आयो सही, दीनो द्वंद मचाय।
राजाराव प्रताप पै, सीताराम[3] सहाय ॥२७॥

---

१ इस दोहे के दूसरे और चौथे चरणो मे तुक नही मिलती।
२ विशेष विवरण 'प्रतापरासो' की टिप्पणियो मे देखिये।
३ जाचीक जीवण तथा षुसाल दोनो ने ही अलवर के इष्टदेव 'सीताराम' का स्मरण कराया है।

पद्धरी छंद

मोहीव्रत तनय[1] सुगढवो विसाल।
श्री राजनीति चल जस कि चाल॥
पंडित प्रवीन जाके सु पौर।
सरनो जु आय तकि करत गौर॥२८॥
जुद्ध चाव करि मडन सुभाव।
तप तेज सूर विक्रम प्रभाव॥
जाके प्रमान निज वचन एक।
हठ करैं वीर छुट्टैं न टेक॥२९॥
नित देत दान दीनन अनेक।
विक्रम समान जानैं विवेक॥
भट लसत संग छत्रिय भयान।
बलवान भूप जु मानैं आन॥३०॥

छंद भुजगप्रयात :

तबै राव परताप मंत्री बुलाये।
करैं जुद्ध जगी जहाँ जोर छाये॥
करो मत भीनो सबै सों नवीनो।
सजे तेगधारी महाक्रोध कीनो॥३१॥

दोहा :

विनयसिंह काका[1] सुमति, लीनें वेग बुलाय।
गरवो मंत्र विचारवो, सुमन सुपद मति भाय॥३२॥
नजवषान नवाव नें, कीनों कोप कराल।
सो सब यही विचारि कै, करो नैन मुष लाल॥३३॥
नजवषान निहचै वरी, लीहैं किला छुटाय।
सब मंत्रीन सलाह करि, लरिवो यहै वचाय॥३४॥

छंद भुजगप्रयात .

तबै रावराजा सु अंबा[2] बुलायो।
बड़े तेज सूं आय के सीस नायो॥
कहो रावराजा हमैं सोइ कीजै।
यही वात सांची चलो जंग लीजै॥३५॥
तबै वीर बांको सुवायू[3] बुलायो।
धरे रूप भारी महाक्रोध छायो॥

---

१ रावराजा प्रतापसिंह।
२-३ विनयसिंह, अंबा, सुवायू आदि के नाम इसी ग्रन्थ में आए हैं।

कही रावराजा करो जंग मांती।
हमे जानियो आप संग साती ।।३६।।

दोहा : दगा दयो रनजीत को, कही जु राजाराव।
बचन कौल हमसो करो, तौ साचो यह भाव ।।३७।।

छंद भुजगप्रयात : तवै वेलपत्रै सु गोला उठायो।
जवै राव के जीव सांच आयो ।।
तवै रावराजा सुभाई बुलाये।
नजवषान आवै सु ऐसे सुनाये ।।३८।।
सवै वीर बांके यहै जुद्ध चाहैं।
नरूका सवै आजि जंगं सुवाहैं ।।
सुनों राज राजा करै भूमि माथी।
तहाँ तेग भारै जहाँ झुंड हाथी ।।३९।।
तवै रामसेवग्ग दीवान आयो।
पजानों सु षोलो महामोद भायो ।।
षुसाली[1] सुरा मे यही वात धारी।
नजवषान आवै परै जंग भारी ।।४०।।
रनै वीर दौला[2] ऐसें कही जू।
नजवषान आयो सुनी कां भई जू ।।
नदैराम[3] जोधा तवै सीस नायो।
सुनै रावराजा वड़े नौन षायो ।।४१।।
तिलंगी फिरंगी घनै काट डारो।
नजवषान की फौज मे सोर पारो ।।
मनै मोद धारो महा वीर छायो।
गनै नाहिं काहू वड़ो मान भायो ।।४२।।

छप्पै मंगलसिंह[4] सुवोल गरज घन घोर घमंडिये।
लछमनगढ़ होरहो जग जग मे जुझ मंडिये ।।

१-३ षुशालीराम (खुशालीराम), दौलतराम तथा नंदराम—सुप्रसिद्ध हल्दिया वीर।
४ मगलसिंह की वीरता का वर्णन दोनो काव्य-ग्रथो मे मिलता है।

नजवषान को कोप लोप राखो मन मारिये।
उतरैं जहाँ विमान वीर वहु तहाँ हकारिये॥
कवि कहत पुसाल विसाल हैं जोगिनि हर हरषत तवैं।
यह जानु राव मन में सुघरु गढ़ न देउँ जीवत कवैं॥४३॥

दोहा

नजवषान आयो जवै, तव आयो रनवीर।
विक्ट कठिन फौजें चलीं, आयो गहल गंभीर॥४४॥
नजवषान नवावजी, चल्यो जुद्ध कों साजि।
वड़े वडे रन वीर वहु, चले चारु गज वाजि॥४५॥
नगर आय डेरा किये, दीनो जलद वुलाव।
जुलफिकार को साहिवी, हय हाथी सिरपाव॥४६॥
नजवषान नवाव नैं, कही जु वात सुनाय।
अव प्रताप महाराज सौं, हमसौं रारि वनाय॥४७॥
जुलफिकार ऐसे कही, नजवषान नवाव।
देउ मोहि निहचै सही, हाथ हरौली भाव॥४८॥
सुन्याएं डेरा किये, ठारह किये मुकाम।
विसनसिंह तो ना मिल्यो, पति राषी यह राम॥४९॥
अजवराम ऐसे सुनी, आय मिल्यो कर जोर।
नजवषान नवावजी, कीजे मेरी ओर॥५०॥
मुलक लियो सव छीन कैं, एक न छोड्यो रंक।
कामदार यह राज के, नैंक न मानत संक॥५१॥
टोडे के मैदान मे, जुरचो चोवटो आय।
रजपूती दावा चुके, विना काल को षाय॥५२॥
लई लीलियें घेर कैं, लरे प्रहर द्वै तीन।
समयो वहुरि विचारि कैं, मिल्यो आय परवीन॥५३॥
हौसदार सु वुलाय कैं, ऐसे कही नवाव।
अलवर गढ षाली करो, यह सुनि सांच्यो ज्वाव॥५४॥
हौंसदार ऐसे कही, सुनिये वली नवाव।
रजपूतन की कटक मे, जुद्धैं वड़ो जवाव॥५५॥
अलवर गढ़ तो कठिन अति, विकट पथ है ठौर।
लछिमनगढ़ तो देषि कैं, जव नाषो मुष और॥५६॥

छंद पद्धरी

यह सुनि नवाब अति कोप कीन।
मन में रिसाय करि धूप लीन ॥
मैं बहुत भूप डारे बिगारि।
सब विकट ठौर किये छार छार ॥५७॥
यह जाट बज्र पर्वत समान।
सो लरै बीर जाहर जहान ॥
दूजे रुहेल अति गर्ववंत।
करि छार छार कछु रहु न अंत ॥५८॥
यह कौन बात जो अरत राव।
रन माँहि करत मोसौं जबाव ॥
सुनि हौंसदारषां यह सुबात।
जब जुरै जंग होवै सुरात ॥५९॥
हौं कहत टेरि राजै बुलाउ।
मति करै जुद्ध मोसौं मिलाउ ॥
मन मे बिचारि यह लेहु आज।
अब मिलै राव होवै सुकाज ॥६०॥
सुनि हौंसदारषां अति प्रवीन।
कर जोरि जुगल यह ज्वाब दीन ॥
वह राव महा बलवन्त भाव।
ताको प्रताप बरनौ न जाव ॥६१॥
अति सूर बीर बहु बल प्रचंड।
बर बानौ न जाय बहु बल उदंड ॥
जो तुम विचारि मन मे ठनंत।
जब करौ जुद्ध परि हैं सुतंत ॥६२॥
यह सुनि नवाव वोल्यो सुजान।
तुव जाव वेग अपने मकान ॥
कहियो जवाब सुनि हैं नरेश।
यह मोहि जानु तुव आप देस ॥६३॥
यह हौसदारषां करि सलाम।
वह चलौ वीर अपने सुधाम ॥

कीन्हों नवाव मन मे बिचार।
सव वीर तीर लीनें पुकार ॥६४॥

दोहा
करि सलाह नवाव ने, सव ही कटक वुलाय।
लछिमनगढ के खेत मे, करौ जुद्ध हुलसाय ॥६५॥

छद भुजगी .
चले वीर जोधा महाक्रोध छाये।
मनो काम के व्याल आवैं सुहाये ॥
परी धूम चारौं दिसा भूमि हालै।
मनो सेस के सीस धारैं उछालैं ॥६६॥
जरी सांकरैं लोह जोसैं वषानी।
नजवषान जगी अवैं रारि ठानी ॥
वड़े वीर जोधा सु वाजे वजाये।
वडे तोवषाने अगारैं चलाये ॥६७॥
तिलंगी चले सीस पै वांधि वानो।
वड़ी पांति सौं आज आवैं सुहानों ॥
चलैं कोपि कै और गोरे फिरंगी।
हजारौं सु तोवैं चढो क्रोव जंगी ॥६८॥
पठाने रुहेले मुगल्ले चढ़े जू।
लरैं फौज भांती हकारैं कढ़ै जू ॥
घने घेरि लीने दिसा के सु नाके।
चहूँ ओर जानै घटासी सु हांकै ॥६९॥

दोहा :
लछिमनगढ वहु विकट अति, ताको वहु विस्तार।
घेरि लियो चहूँ ओर तें, होन लगी अति मार ॥७०॥
ध्यान धरो भगवत को, मगति करी चित लाय।
श्री प्रताप महाराज वहु, तन मन सुमिरत ताहि ॥७१॥
छाजूराम विचारि कै, कही सुनी सव कोय।
चित दै भारत कीजिये, दूजे जनम न होय ॥७२॥
फिरि माता जनमे नहीं, सुनौ वीर दे कान।
अव भारथ मांडो सही, तुम्हैं राव की आन ॥७३॥
मंगलसिंह महाराव सौं, कही जु मन हुलसाय।
आज महाभारथ करौ, गोविंद होय सहाय ॥७४॥

सलैवास महाराज के, सबै नवायो सीस।
टूक टूक रन मे लरैं, पति राखै जगदीस ॥७५॥
गढ़तें बाहरि निकसि कैं, जुद्ध करैं बहु भेव।
नवो षंड नामी भये, अबकै यह जस लेव ॥७६॥
यह कहि कैं चित धीर धरि, सुमिरत श्री भगवान।
गढ़ तैं बाहर निकसि कें, करैं खूब घमसान ॥७७॥
जोधा सब बाहर लरैं, करैं षडग की धार।
गढ पैं तैं गोला परैं, बरषैं मेह अपार ॥७८॥
चलै तोब च्यारयौं दिसा, हलै भूमि हहराय।
गोला पैं गोला परैं, ओरा से वरसाय ॥७९॥

चौपाई : हाल देषि हलकारो गयो। कहौ राव सौं ऐसे भयो ॥
गढ है अब अति ही भीर। सुनौ राव गरवे गंभीर ॥८०॥
सुनी राव तव ऐसे कही। मोहि जानियो आयो सही ॥
सब गढ़ मे तुव कहियो टेरि। नजबषान कू लैहौ घेरि ॥८१॥

सोरठा : सुमिरैं श्री महाराजि, राजाराव प्रताप बहु।
लई फौज सुभ साजि, ताको बहु विस्तार कहु ॥८२॥

दोहा जैसे सावन की घटा, बढ़त जाति चहुँ ओर।
बड़े वीर हुलसे फिरैं, ज्यौं घन गरजें मोर ॥८३॥
समर भये धाये सकल, वड़े वीर विकराल।
धरैं तेग बषतर जिरह, पहुँचे तह ततकाल ॥८४॥

छंद पद्धरी : चहुँ चले चारू सोहैं गयन्द।
पचरँग निशान राजै अमन्द ॥
अति रंग रंग बैरष दिपत।
बहु भांति भांति वाजे वजंत ॥८५॥
यह चलत तोब पाछै अपार।
वरनौ न जात दल बहु सुमार ॥
झींने जराव जगमगत जीन।
तीषी तुरग सुरराज दीन ॥८६॥

जव धरनि अधर पग मग धरंत ।
मनु चंचरीट चचल नचत ॥
गुन गरव भरे सोहत अनन्त ।
जे करत धूंद छिति छिति सुतत ॥८७॥
अति चलिय पालकी पाँति पाँति ।
राजैं विमान सुर भाँति भाँति ॥
सव वने साज जिनके अमोल ।
तहँ लगे रतन हीरा अमोल ॥८८॥
तहँ तास वादले झलमलाय ।
यह वरन कौन सोमा सुहाय ॥
धौंसा धुकार धरनी धसत ।
दिगपाल हलत पन्नग फसंत ॥८९॥
नौवत वजाय अति घोर होय ।
अर तिजैं गेह यह सुनि सुमोय ॥
सहनाई वजैं चित चोर लेव ।
करवाल सोर मनु जगैं देव ॥९०॥
तुरही अवाज जव परत कान ।
रन देस वेस सव कहत आन ॥
झाझैं सु वजैं झनकान होइ ।
मन नेंक धरैं नहि धीर कोइ ॥९१॥
वहु वाजे अरवी तरतराय ।
कायर मलीन यह सुर सुनाय ॥
सोहत गयंद जगमगत कोर ।
गूँजैं सवा वहु सकल ओर ॥९२॥
वोलैं नकीव अरु चोवदार ।
सव चलो वीर चलिये समार ॥
अति कठिन जुद्ध है सुन सु भाव ।
रन माँह धसौ यह कहत राव ॥९३॥

दोहा · राजत अपनी फौज के, सकल तुरंग चहुँ धाव ।
सजे सस्त्र रन करन कों, चले सवारी माँह ॥९४॥

जादौ हाडा धाकरे, और नरूकाकार।
सीर करवार सीसोदिया, कछवाहे परिवार ॥९५॥
षींची बंस पवार बहु, और चँदेले आंन।
किलो नौतरा गौंड अरु, निरधर के चहुवान ॥९६॥
सबै चले या भांति सो, करि करि बीर विवेक।
नजवषान कहै बात हैं, फूटे कटक अनेक ॥९७॥
सकल साहिवी साथ लै, चढौ राव महाराज।
देषि परं सव जगत कौं, मनौं चहो सुरराज ॥९८॥
डगमगात भुव लोक सव, वड़े दलन के भार।
सूरज नेक न देषियै, महिमा बड़ी अपार ॥९९॥
भड़कोले वर गांउ पै, डेरा करि महाराव।
सोर परचो सव जगत मे, पहुँची षवरि नवाव ॥१००॥
नजवषान सटपट भयो, आयो राव गमीर।
मुगलन चिंता बढि गई, कोऊ धरत न धीर ॥१०१॥
लियो कटक सव घेरि कै, लूटन लगे अघाय।
राजा राव प्रताप को जगत रह्यौ जस छाय ॥१०२॥
नजबषान ऐसे कही, अब चेतो सब कोय।
रातिद्योस ठाडे रहो, होनी होइ सो होय ॥१०३॥
गरगज ऊँचो बाधि कै, तोबं दई चढाय।
नजबषान ऐसे कही, जलदी तोब दगाय ॥१०४॥

छंद भुजंगी : परी धूम च्यारो दिसा बीर धाये।
दुहूं ओर तोवें अरावे चलाये ॥
हलं सेस के सीस पानै उछाले।
भई भूमि भारी जहाँ रुंड माले ॥१०५॥
चलें बान पै वान च्यारौं दिसातें।
जमूला जजालै तमचा उमातें ॥
करं बीर घातैं महामोद माते।
चलं तीर तेगा कटारी जनाते ॥१०६॥

दोहा :

कटक वीचि निकसै नहीं, वाहरि निकसै जोय।
लूटि लेइं मारै तवै, वाहिर निकसै कोय ॥१०७॥

नजवपान फिरि कोपि कै, गढ पर कियो उठान।
धाम धूम चहुँ ओर तै, लागे वरसन वान ॥१०८॥

करत मार वांको तवै, मीर मुगल वहु घाय।
तोवन के छर्रा चलै, और जंजीरन लाय ॥१०९॥

घेरि लियो अति विकट गढ़, वड़े वीर सामन्त।
तोवैं मारैं जेर कै, कठिन वड़ो वलवन्त ॥११०॥

चहूँ ओर सू दावि कै, यह कहि वन्नी नवाव।
लेउ अवै लछिमनगढै, हैं मेरे यह भाव ॥१११॥

सुरग चलाये वहुत हैं, गुरुजर हैं नहिं एक।
पाछै लै हल्ला करौ, मेरे है यह टेक ॥११२॥

कही पुकारि नवाव ने, सुनो राव अरु रक।
मानो लका जग की, दई हुकम को अंक ॥११३॥

चहूँ ओर लागनि करी, लपिटें सब वलवीर।
जैसे माषि मिट पै, लपिटै रन पै धीर ॥११४॥

गढ पैंते गोला परै, ज्यों वरषत हैं मेह।
मांनस की कह वात को, पंछी पंप न देह ॥११५॥

श्री महाराव प्रताप की, फौज जुरी सँग जाय।
दुंदभि वाजें विजय के, मुगल गये महराय ॥११६॥

मार भई अति कठिन सौं, परी लुथ्य पै लुथ्य।
गजराजन की सुड कटि, रूड मुड है जुथ्य ॥११७॥

स्रोनित की नदियां उमडि, जोगनि हरषि अघाय।
भोजन के लालच तहाँ, गिरध सकल मडराय ॥११८॥

भई लूटि सव कटक मे, जानें सकल जिहांन।
राति द्यौस लरिवो रहै, मरिवो निहचै जान ॥११९॥

जुझि गये बहु कटक के, पार न पावै कोइ।
नजबषान मन में धरी, यह बीती अव जोइ ॥१२०॥

नजवषान मुष जरद हैं, लाल रग मुष राव।
लछिमनगढ़ तें हटि रहौ, जाते जग सब भाव ॥१२१॥

कही नवाब पुकारि कैं, सुनो मित्र सव कोय।
बरस काल आयो सही, गढ़ न टूटि हैं कोय ॥१२२॥

हीये हारि नवाव जी, पटक दये दुहुँ हाथ।
पाग रही या षेत मे, काहू दियो न साथ ॥१२३॥

लछिमनगढ़ गाढो रह्यो, रही राव की टेक।
नजवषान जीतो नहीं, तामे भई न एक ॥१२४॥

पैंज रही परताप की, और हिन्द की लाज।
नजवषान जीत्यो नहीं, जीत्यो श्री महाराज ॥१२५॥

राषी रजपूती सकल, तुव प्रताप महाराव।
दै दै दान कवीश्वरन, जाहर जग जस पाव ॥१२६॥

कवित्त : राषी रजपूती सब उपमा चढ़ाई कुल,
दै दै दान कबिन जिहान जस करिवौ।
बांके बांके बिकट गढ चूरि डारे,
काटि काटि बैरिन कौं आगे पग धरिवौ ॥
मुगल पठान सब मींजि कै मरोर डारे,
राम के भरोसै एक काहू सौं न डरिवौ।
आगरे दिली के बीच बिजै राव राजाजी,
हाथिन के दांन पातिसाहिन सौं लरिवौ ॥१२७॥

जंग जुरें सामुहें न आवै कोऊ जाके,
आगें बिरद वषान करे कौन बलवान को।
जाहि सुनि भाजे दल मुगल पठान वीर,
विक्रम अपार रग सोहत भुजान को ॥
कहत षुसाल तैसे दिल की दलेली ही सौं,
कबिन कौं दान मान सनमान कों।
कूरम नरेस श्री प्रतापसिंह महाराज,
राषि लीनो करम धरम हिंदुवान को ॥१२८॥

दोहा : सवत दस वसु सत वरस चौतिस अब्द प्रमान।
लछमनगढ़ के षेत में भयो जुद्ध बलवान ॥१२६॥

इति श्री श्री श्री श्री श्री महाराव राजा नरूवंस कछवाह कुल भूषण नृपितायां प्रतापसिंह विरचितायां लछिमनगढ़ रासो वर्णन समाप्तम् ॥ लिषायत महाराव राज श्री ५ विनेसिंहजी लिषित शुभस्थाने अलवरगढ मध्ये देवा मिती पोस सुदी ५ सवत् १८७३ शुभम्भवतु। श्री ॥

---

(२) स्थानों की सूची

राजस्थान पुरातन ग्रन्थमाला

प्रधान सम्पादक : पद्मश्री मुनि जिनविजय, पुरातत्त्वाचार्य

प्रेसो में छप रहे

राजस्थानी-हिन्दी ग्रन्थ

१ गोरा बादल पदमणी चऊपई, कवि हेमरतनकृत, सम्पा०—श्री उदयसिंह भटनागर, एम.ए.

२ राठौडांरी वंशावली, सम्पादक—पद्मश्री मुनि जिनविजय, पुरातत्त्वाचार्य ।

३. सचित्र राजस्थानी भाषा साहित्य ग्रन्थ सूची,
सम्पादक—पद्मश्री मुनि जिनविजय, पुरातत्त्वाचार्य ।

४. मीरां बृहत्-पदावली, स्व० पुरोहित हरिनारायणजी विद्याभूषण द्वारा संकलित,
सम्पादक—पद्मश्री मुनि जिनविजय, पुरातत्त्वाचार्य ।

५. राजस्थानी साहित्य संग्रह, भाग ३, सम्पा०—श्री लक्ष्मीनारायण गोस्वामी दीक्षित ।

६. पश्चिमी भारत की यात्रा, ले० कर्नल जेम्स टॉड,
हिन्दी अनुवादक और सम्पादक—श्री गोपालनारायण बहुरा, एम०ए० ।

७. पृथ्वीराज रासो, महाकवि चन्दवरदाई कृत,
सम्पादक—पद्मश्री मुनि जिनविजय, पुरातत्त्वाचार्य ।

८. सोढायण, महाकवि चिमनजी कविया कृत, सम्पादक—श्री शक्तिदान कविया, एम०ए० ।

९. विन्है रासो, कवि महेशदास राव कृत, सम्पादक—श्री सौभाग्यसिंह शेखावत ।

१०. पाबूजीरे जुद्धरा छन्द, मेहाजी विठू कृत, सम्पादक—श्री उदैराजजी उज्ज्वल ।

११. मुहता नैणसी री ख्यात, भाग ४, सम्पादक—श्री बदरीप्रसाद साकरिया ।

सूचना : पुस्तक-विक्रेताओं को २५% कमीशन दिया जाता है ।
